945

दैव-विचार माला हिंदी क्र.-१

अध्यात्म-ज्योतिष-विचार

लेखक

ह. ने. काटवे,

विद्यार्थी ज्योतिषी

मुक्काम व पोष्ट, शहापुर जिल्हा-बेलगांव

❋

मूल्य १० रुपये

नागपुर प्रकाशन, सितावर्डी, नागपुर।

प्रकाशक—
दिगंबर मारुति धुमाळ,
नागपुर प्रकाशन, सिताबर्डी, नागपुर

इस प्रथम संस्करणका सर्वाधिकार
प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

मुद्रक—
ल. म. पटले,
रामेश्वर प्रिंटिंग प्रेस, सिताबर्डी, नागपुर

भूमिका

मैं जादा लिखा पढ़ा नहीं हूँ। मेरा जन्म और रहना कर्नाटक में, मातृभाषा अलग, बोलना कानडी और शिक्षण मराठीमें। ऐसी अवस्थामें यह ग्रंथ टूटी फुटी हिन्दी भाषामें लिखकर प्रसिद्ध किया है। हिन्दी भाषी विद्वानोंने यह ग्रंथ पढ़ते समय कहीं कहीं भाषा प्रमाद हो गये हों तो मुझे क्षमाकर इस ग्रंथका सार ग्रहण करेंगे ऐसी उनको मेरी विज्ञप्ति है। इस ग्रंथमें मैंने योगशास्त्र, वेदान्त और ज्योतिष शास्त्र इन तीन शास्त्रोंका अपने अल्प बुद्धिसे समन्वय किया है। यह कितना बरोबर हुआ यह देखना विद्वानोंपर निर्भर है।

क्षमस्व

१५-१-१९४९
बुधवार

भवदीय
ह. ने. काटवे
विद्यार्थी ज्योतिषी,
सिताबर्डी, नागपुर

वक्तव्य

इस ग्रंथके लेखक श्री. ह. ने. काटवे महोदयने यह ग्रन्थ सन १९४२ में बहुत परिश्रम कर कई वर्षोंके बाद खुदका अनुभव लेकर लिखा है। यह ग्रंथ इसके पूर्व ही प्रकाशित हो जाना चाहिये था परंतु कई कारणवश इसे प्रकाशित करनेमें हमें अनेक बाधाओंका सामना करना, पड़ा इसलिये यह ग्रन्थ आजतक प्रसिद्ध न हो सका।

इस ग्रन्थमें हिन्दू वेदान्त और योगशास्त्रको ज्योतिष शास्त्रमें समन्वय करना बड़ी कठीन बात है परंतु आपने उसे बड़ी सुगमताके साथ सरल भाषामें किया है, इसलिये हम उनके परम कृतज्ञ हैं।

यह ग्रन्थ रामेश्वर प्रिंटिंग प्रेसके मालिक श्री. लक्ष्मणराव मनाजी पटले, इन्होंने अल्प समयमें मुद्रित कर दिया इसलिये उन्हें धन्यवाद। वैसेही श्री. बेलेकर फोटोग्राफर, संचालक "वगारे आर्ट गॅलरी" मुक्काम वर्धा, इन्होंने इस ग्रंथके फोटो सुंदरतापूर्वक तयार कर देनेमें हाथ बटाया तथा श्री. निमगांवकर, बी. ए. और श्री. सीतारामजी ठाकरे, विशारद, संचालक "शिशुविहार" धरमपेठ, नागपुर, इन्होंने यह ग्रंथ प्रकाशित करनेके संबंधमें मुझे जो बहुमुल्य सहायता दी उसके लिये मैं उनका आभारी हूँ।

आशा है यह ग्रन्थ पाठकोंको प्रिय होकर अपना उद्देश पूर्ण करनेमें सफल होगा।

प्रकाशक

श्रीमत् ब्रम्हीभूत भगवान ब्रम्हचैतन्य महाराज गोंदावलेकर
मु.—गोंदावलेबुद्रुक, जि. सातारा।

अर्पण

मेरे परम गुरु भगवान महावीरजी और गुरु भगवान ब्रह्मीभूत ब्रह्मचैतन्य महाराज गोंदावलेकर इन दोनोंके चरणोंपर नम्रतासे मस्तक रखकर, मुझे ज्योतिष शास्त्रका पूर्ण तया ज्ञान देनेवाले सद्गुरु सच्चिदानंद स्वरूप परमहंस श्री कृष्णानंद सरस्वती यति (पूर्वाश्रमके नृसिंहवाडी दत्तस्थान के पुजारी) काशी निवासी इनके चरणोंपर नम्रतापूर्वक भक्तिसे यह ग्रंथ समर्पित करता हूँ।

ता. १५-१-१९४९
आज मुक्काम
सिताबर्डी
नागपुर

संत दासानुदास
ह. ने. काटवे.
विद्यार्थी ज्योतिषी. शहापूर,
जिल्हा—बेलगांव

चित्रोंकी सूची

नंबर		पृष्ठ
	बाबु सुभाषचंद्र बोस,	कव्हरपेज
	मेरे परमगुरु भगवान महावीरजी	१
	श्रीमत् ब्रह्मीभूत भगवान ब्रह्मचैतन्य महाराज गोंदावलेकर	५
१	चक्रयुक्त प्रणवाक्षर	२५
२	सहस्रार कमल	१७४
३	आज्ञाचक्र	१८०
४	विशुद्धचक्र	१८८
५	अनाहत चक्र	१९१
६	मणिपूर चक्र	१९७
७	स्वाधिष्ठान चक्र	१९९
८	कुण्डलिनी	२०८
९	स्वयंभुलिंग	२११
१०	भ्रूमध्य दृष्टी	२१२
११	ब्रह्मद्वार	२१३
१२	कुण्डलिनीका उपर चढ़नेका विवर मार्ग	२१७
१३	मूलाधार चक्र	२१८
१४	नेताजी	२२१

अनुक्रमणिका

परिच्छेद		पृष्ठ
	उपोद्घात योगशास्त्रसे ज्योतिष शास्त्रकी उत्पत्ति कैसे हुई ?	
१	आखिर वेदान्त क्या है ?	२५
२	वेदान्तका मानव-प्राणीसे क्या संबंध है ?	२७
३	वेदान्त और ज्योतिष शास्त्रका पारस्परिक संबंध ...	३०
४	रवि (ब्रह्म) उत्पत्ति	३२
५	चंद्र (माया) स्थिति	५९
६	शनि (वैराग्य) लय	६९
७	राहू (मोक्ष, विदेही स्थिति) ज्ञान	७३
८	पूर्व जन्म पुनर्जन्म	७६
९	द्वैताद्वैत विचार	८६
१०	ग्रहयोनि भेदाध्याय	९३
११	कारकत्व	१०८
१२	मेषादि राशियोंका वेदान्तकी दृष्टीसे विचार	११२
१३	राशियोंके स्वभाव	११५
१४	द्वादश भावोंमें क्या क्या देखना चाहिये	१७३
१५	द्वादश भावस्थित ग्रहोंका फलादेश	२५०
१६	ग्रहयोग फल	२६७
१७	पूर्वजन्म कर्म संशोधन	२६९
१८	महात्माओंके कुंडलियोंका विवेचन	२८६

देव-विचारमाला मराठी

लोकप्रिय ज्योतिष ग्रंथ

लेखक-ह. ने. काटवे

		रु. आ. पै.
१.	रवि-विचार	१—०—०
२.	चंद्र-विचार	१—०—०
३.	मंगळ-विचार	१—०—०
४.	बुध-विचार	१—०—०
५.	गुरु-विचार	१—०—०
६.	शुक्र-विचार (आवृत्ति २ री)	२—८—०
७.	शनि-विचार ” ”	२—८—०
×८.	ग्रहण-विचार	२—८—०
×९.	भाव-विचार	०-१२-०
१०.	भावेश-विचार	२—०—०
११.	गोचर-विचार	१—८—०
१२.	शुभाशुभ ग्रह निर्णय-विचार	२—०—०
१३.	योग-विचार (भाग पहिला)	१—०—०
१४.	” ” (भाग २ रा)...	२—०—०
१५.	” ” (भाग ३ रा)...	२—०—०
१६.	” ” (भाग ४ था)...	१—०—०
१७.	” ” (भाग ५ वा)...	१—८—०
	“अध्यात्म ज्योतिष-विचार” हिंदी क्र.-१	१०—०—०

आगामी

योग-विचार भाग ६-७

स्त्री जातक-विचार

नागपुर प्रकाशन, सितावर्डी, नागपुर.

एक रुपया प्रवेश फीस भर के कायम ग्राहक होने वालेको देव-विचार मालेके सब ग्रंथ तीन चतुर्थांश किंमतमें दिये जायेंगे।

× यह किताबें out of Print हैं।

॥ श्री ॥

उपोद्‌घात

योग शास्त्रकी प्राचीनता।

सारे इतिहासकार अच्छी तरह जानते हैं कि अति प्राचीन कालमें भारतवर्षमें द्राविड़ लोगोंका साम्राज्य था। जिस समय आर्य संस्कृति भारतवर्षको पूर्ण रूपसे व्याप नहीं सकी थी उस समय दक्षिणमें द्राविड़ोंका बोलबाला था। उन्नतिके अत्युच्च शिखर पर विराजमान वह द्राविड़ संस्कृति सम्पूर्ण रूपसे सर्वांगीन उन्नति की ओर बढ़ रही थी। द्राविड़ोंका राज्य ही नहीं साम्राज्य भी था। जनता सुखी थी। धार्मिक, नैतिक, राजनैतिक और पारमार्थिक उन्नति उच्च कोटिको पहुंची हुई थी। और पति-पत्निका जीवनपर्यंत संबंध, पिता-पुत्रका नाता, राजा, प्रधान तथा सेनापतिके संबंध जनता अच्छी तरह समझती थी। हरएक व्यक्ति अपना कर्तव्य पालन करता था। द्राविड़ लोग बलिष्ठ थे। ऐसे समयमें एक काल ऐसा आया कि लोगोंमें शिवकी उपासना जोरोंसे चली। एक ओर पंजाबमें ऐसी परिस्थितिका बोलबाला था और उत्तरकी ओरसे वैदिक आर्य संस्कृतिके प्रचारक दक्षिणकी ओर जोरोंसे बढ़ रहे थे। जिस समय वैदिक आर्य पंजाबसे उत्तरमें आये तब उन्हें कोई राज्य न था। वे सघके संघ बनाकर अलग अलग रह रहे थे। उनमें अलग २ देवताओंकी उपासना चल रही थी। उनके देवता इंद्र, वरुण, उषा, पूषा, सूर्य इत्यादि थे। उनमें यज्ञकी प्रथा थी। यज्ञमें वे सोम नामक मद्यपान किया करते थे। इनका व्यवसाय विशेषतः गोपालनही था। इनमें विष्णु भक्ति की प्रधानता थी। आर्योंकी चालचलन आदिका, इनकी गतिविधियोंका

द्राविड़ोंको पता रहा होगा ऐसा इतिहाससे जान पड़ता है। ये द्राविड़ लोग कट्टर शिवभक्त और लिंगपूजक थे। ऐसे समय यह निश्चित ही था कि दोनोंमें झगड़े होते। झगड़े शुरू हुए और आर्योंकी यज्ञ पूर्तिमें द्राविडोंकी ओरसे बाधायें आने लगीं। आर्य लोग इन्द्रसे प्रार्थना करते समय कहने लगे—

" मा शिश्न देवा अपि गुर्हंतनः "

अर्थात् हे इन्द्र यह लिंगपूजक लोग हमारे यज्ञमें विघ्न उपस्थित न करें।

उस समय हिन्दुस्तानमें चक्रवर्ति साम्राज्यका राज्य करनेवाले हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यपु पंजाबके राजा थे। ये दोनों ही महान् शिवभक्त और योगेश्वर थे। इनके गुरु श्री शुक्राचार्य नामक महान योगेश्वर थे। जिस समय शुक्राचार्यजी समाधि अवस्थामें रहते उस समय उनके हृदयमें संजीवनी नामक विद्याका स्फुरण होता था। बस, यहींसे भारतवर्षके सच्चे इतिहासका प्रारम्भ होता है। परन्तु हमारे दुर्दैवसे यह इतिहास और पुराण केवल दंत कथाओंके रूपमें ही रह गया है। इसी समय आर्योंके संघका एक नृसिंह नामका संघनायक महान बलिष्ठ, ऊंचा, सुवर्ण वर्णका, अत्यंत उग्र और क्रूर Greatest politician था। इसीने हिरण्याक्ष और हिरण्य-कश्यपुका खुले आम सामना किया। और इनके रहते २ पंजाबमें आर्योंका प्रभुत्व जम नहीं सकता यह जानकर हिरण्याक्षका उसने कपट से बध किया। इसी लिये हिरण्यकश्यपूने नरसिंहका भयंकर पीछा किया। उस समय हिरण्यकश्यपुके पुत्र प्रल्हादने घर भेदियेका काम कर उसे अपने पालानमें लाकर कपटसे पिताका बध करवाया। कारण हिरण्यकश्यपुने अपने पुत्र प्रल्हादको नारायण भगवानकी भक्ती नहीं करनी चाहिये ऐसी ताकीद दी थी और इसी

लिये प्रल्हाद् पिताके विरुद्ध था। इस तरह एक योगेश्वरका घात हुआ और आगे प्रल्हाद् जब गद्दीपर आया तो भक्तियोग शुरू हुआ। उसने नारायणकी भक्तीका प्रतिष्ठान किया। प्रल्हाद्की मृत्यूके बाद् उसका पुत्र विरोचन राजगद्दी पर बैठा और उसने पुनः शिवभक्तीका प्रचार किया; इतने लम्बे समयतक भी आर्य पंजाबमें नहीं उतर सके थे। विरोचनकी मृत्युके बाद् उसका पुत्र बलि जब राजगद्दी पर बैठा तब भी शिवभक्तीकाही प्रचार जोरोंसे था। बलि महान शिवभक्त तथा योगेश्वर था। इसने शुक्राचार्यकी मदतसे एक बड़ा यज्ञ किया। इसी समय आर्य लोग पंजाब प्रान्तमें आये और बलिको पातालमें (अमेरिकाको) भगा दिये। उस समय बलि अपने देवता शिवलींगको भी साथ लेता गया। इससे यह साबित होता है कि बलिको भगाकर आर्य लोग हिन्दुस्तानमें स्थिर हुए और द्राविड़ोंको दक्षिणकी ओर पूर्ण रूपसे भाग जाना पड़ा। यह बात सूर्य प्रकाशके समान स्पष्ट है कि इस कालमें शिवभक्ती-योग-शासनका बोलबाला था। मैं उस समयका वर्णन कर रहा हूं जब कि आर्य हिन्दुस्तानमें आये ही न थे; केवल आनेका प्रयत्न कर रहे थे। और उनका कट्टर विरोध करनेवाले हिरण्याक्ष व हिरण्यकश्यपु कट्टर शिव-भक्त हिन्दुस्तानमें थे। यह काल निश्चित करना इतिहासके प्रकाण्ड विद्वानोंको सौंपना चाहिए पर मेरी अल्पमतिमें यह अति प्राचीन काल, कमसे कम बीससे पचीस हजार वर्ष पहलेका होगा। इसके बाद्का समय अर्थात् रामायण कालमें तो महान शिवभक्त योगेश्वर रावण हो गया। राम स्वतः शिवभक्त थे यह सारे संसारमें प्रसिद्ध है। महाभारतके कालमें बाणासुर योगेश्वर था। इसी समयमें आर्योंने द्राविड़ोंकी कुछ रीतिरिवाजें सीखीं और शिवभक्ति तथा योगाभ्यासको उन्होंने अपनाया और अपने कुछ रीतिरिवाज द्राविड़ोंको दिये; जिसमें विष्णुभक्ति थी। इस तरह दो विपरीत सभ्यताओंका संगम शुरू हुआ और वह पक्का हुआ।

योगशास्त्र द्राविड़ोंकाही है आर्योंका नहीं।

यह कहने की कोई जरुरत नहीं कि बादके समयमें आजतक बहुतसे योगेश्वर हो गये। इस विवेचनसे पाठकोंके ध्यानमें एक बात स्पष्ट रूपसे आगई होगी कि प्राचीन द्राविड़ोंमें शिवभक्ति व योगाभ्यासका प्रचार जोरोंसे था और उसी समय आर्योंमें यज्ञ और विष्णु भक्ति थी। इससे यह सिद्ध होता है कि आर्य गंगा नदीके तट पर आकर रहने लगे तबतक उनको योगाभ्यासका ज्ञान नहीं था। उन्हें योगाभ्यासकी जानकारी काश्मरिसे मिली होगी। अब योगशास्त्रमें योगशास्त्रकी प्राचीनताके विषयमें कुछ प्रमाण मिलते हैं या नहीं इसकी ओर ध्यान देंगे। योगशास्त्रमें तीन बातें बहुत महत्व की हैं—

(१) षट्चक्र भेदन (२) सुषुम्नानाड़ी (३) कुंडलिनी

अब क्रमशः इनका विवेचन करेंगे।

षट्चक्र भेद विवेचन

चक्रका नाम	देव	शक्ति
१ मूलाधार	गणेश	डाकिनी
२ स्वाधिष्ठान	विष्णु ?	राकिनी
३ मणिपुर	वृद्धरुद्र	लाकिनी
४ अनाहत	ईशानरुद्र	काकिनी
५ विशुद्ध	पंचवक्त्ररुद्र	शाकिनी
६ आज्ञा	लिंग (शिव) अर्ध नारीनटेश्वर	हाकिनी
७ सहस्रार	परमशिव	काली+गंगा

उपरोक्त चक्रोंके देवताओंका विचार करने पर स्वाधिष्ठान चक्रको छोड़कर अन्य चक्रोंमें शिवका ही अधिष्ठान दिखाई देता है। स्वाधिष्ठान चक्रपर विष्णुके पूर्व शिवका ही अधिष्ठान होगा परन्तु जब आर्योंने रीतिरिवाजोंका लेन देन किया तब उन्होंने विष्णुकी स्थापना इस स्थानमें की होगी। इसी तरह प्रत्येक चक्रमें एक एक लिंग ही हैं और अंतमें परम ब्रम्हज्ञानी होने पर साधकको अंतिम चक्रमें अर्थात् सहस्रारमें परमाशिवकी भेंट होती है। शिव ये पुराण पुरुष-आदि पुरुष-हैं और इससे जन्मकी कथा अगम्य है। दूसरी बात इस प्रत्येक चक्रमें प्रत्येक देवताकी शक्ति बतलाई गई है वे शाकिनी इत्यादि हैं। ये नाम किसीभी भाषामें हो सकते हैं, कारण तेलगू, तामील, मलियानिली, कुर्गी, कानड़ी और तुलु या संस्कृत आदि भाषाओंमें यह शब्द नहीं हैं। ये शब्द मूल द्राविड़ी भाषाके होने चाहिये।

२ सुषुम्ना नाड़ी

योगशास्त्रमें इस नाड़ीका नाम 'स्मशान' है। यह स्मशान शंकरको प्रिय है और उसी तरह शांभवी नाम शिवशक्तिका है। इस नाड़ीपर शिवका अधिष्ठान है।

३ कुंडलिनी

इस नाडीके निम्न लिखित नाम शिवशक्ति पार्वतीके हैं।

" मायाकुंडलिनी क्रिया मधुमती, काली कला मालिनी।
मातंगी विजया जया भगवती देवी शिवा शांभवी।
शक्तिः शंकर वल्लभा त्रिनयना, वाग्वादिनी भैरवी।
र्‍हीं कारी त्रिपुरा परापरमयीं माताकुमारी त्यसि।
सरस्वती त्रिवेणी मूल नाड़ी महादेवी। "

ಶ್ರೀ ಚಂದ್ರಶೇಖರಭಾರತೀ ಸ್ವಾಮಿ ಸಂಸ್ಥಾನ
ಶ್ರೀ ಸದ್ವಿದ್ಯಾಸಂಜೀವಿನೀ ಪಾಠಶಾಲಾ.
ಶೃಂಗೇರಿ.

इसका विवेचन कर देखा जाय तो पता चलेगा कि यहाँ भी शिव और पार्वतीका ही अधिष्ठान है। इसके अतिरिक्त योग शास्त्रके प्रारम्भके दो श्लोकोंमें भगवान शिवनेही इस शास्त्रका पहले पहल उपदेश किया ऐसा कहा गया है।

इस समूचे विवेचनका तात्पर्य यह है कि यह योगशास्त्र द्राविड़ लोगोंका था यह बात बिलकुल स्पष्ट हो जाती है। अब इस योगशास्त्र से ज्योतिष शास्त्रकी उत्पत्ति किस तरह हुई इसका वर्णन आगे दिया गया है।

योगशास्त्रसे ज्योतिष शास्त्रकी उत्पत्ती कैसे हुई।

योगशास्त्रसे ज्योतिष शास्त्रकी उत्पत्ती किस तरह हुयी इस मूल विषयकी ओर ध्यान देना अत्यावश्यक है।

मनुष्यके श्वास दिन-रातमें २१६०० चलते हैं और २॥ – २॥ घड़ीके अंतरसे श्वास बदलते रहते हैं। एक बार दाहिने नथुने से २॥ घड़ी तो दूसरी बार बायें नथुने से २॥ घड़ी; इस तरह श्वासोंके चलनेका प्रमाण रहता है। याने १०८०० श्वास दाहिने नथुनेसे और १०८०० श्वास बायें नथुनेसे चलते हैं और २४ घंटेमें कुल २१६०० श्वास होते हैं। जिस दाहिनी नाड़ीसे श्वास चलते हैं उस दाहिनी नाड़ीको पिंगला कहते हैं। यह नाड़ी अति उष्ण रहती है। नाभिकंदमें (जहांसे यह नाड़ी निकलती है) इसका सूर्यका स्थान है। और यही कारण है कि यह उष्ण होती है। दूसरा अनुभव हमें नित्य प्रति व्यवहारमें भी दिखाई देता है। सूर्योदयके पश्चात् मनुष्यके पेटमें भूख लगनेकी क्रिया शुरू होती है, भूख लगनाही उष्णता बढ़ना है। हम देखते हैं कि जैसे २ भूख जोरसे लगती है वैसे वैसे उष्णता बढ़ती जाती है। ऐसे समय पर यदि खानेको कुछ न मिले तो शरीर

तपता है, सिर गरम होता है और आंखोंके सामने अंधेरा छाने लगता है, यह क्रिया नाभिके नीचे होती है। अक्सर देखा जाता है कि भूख १० बजेसे १२ बजे तक जोर से लगती है, और इसी समय उष्णता भी बढ़ती है, और यही समय सूर्यके भी मध्यान्हमें पहुंचनेका काल होता है। इसके बाद (१२ बजेसे) जब सूर्य धीरे २ पश्चिमकी ओर ढलता जाता है तब भूखकी तीव्रता भी क्रमशः शान्त होने लगती है। इससे पाठकोंके ध्यानमें यह स्पष्ट आगया होगा कि रविका अपने पेटकी उष्णतासे अत्यन्त निकटका पारस्परिक संबंध है। योगशास्त्रमें मणिपुर चक्र सीधे नाभिके नीचे है और इसी चक्र पर सूर्यका अधिष्ठान माना जाना चाहिये। अंग्रेजी पद्धतिमें सूर्य ही इसका ग्रह माना जाता है। भारतीय यहाँ पर मंगल मानते हैं। (यह ग्रहोंकी दृष्टिसे अधिष्ठान है) देवताओंकी दृष्टीसे नहीं, भूख लगनेकी क्रिया इसी मणिपुर चक्रमें शुरू होती है। उसीसे मणिपुर चक्रका और सूर्यका संबंध स्पष्ट सिद्ध हो जाता है। इस पर मंगलका अमल नहीं हो सकता। यदि मंगलका प्रभाव माना जावे तो उष्णता दिनरात चौवीसों घंटे रहनी चाहिये। लेकिन हम पहिले ही देख चुके हैं कि परिस्थिति ऐसी नहीं है। इस तरहसे हम कह सकते हैं कि सूर्य-नाड़ीकी उत्पत्ति जिसे पिंगला नाड़ी भी कहते हैं मणिपूर चक्रसे हुई है और यह दाहिने नथुनेसे मिलती हुई है। मणिपुर चक्र सूर्यका स्थान है, इसलिये इस नाड़ीसे उष्ण श्वास निकलता है। यही कारण है कि स्वरोदय शास्त्रकारोंने भी सूर्यकी स्थिति दाहिने नथुने पर बतलाई है, इसी तरह उन विद्वानोंने चन्द्रकी स्थिति बायें नथुनेसे जो श्वास चलता है उस पर मानी है। इसका कारण निम्न है—मनुष्यके सिरके बायें भागमें बायें नेत्रके ऊपरी हिस्सेमें अमृत निर्माण होनेका स्थान है, यह अमृत एक प्रकारका अमरत्व देनेवाला द्रव है; इस द्रव पदार्थमें सत्रहवी जीवनकला है और इसमें गुणधर्म; तेज, ओज शरीरको नैसर्गिक सुगंध प्रदान करना इत्यादि गुण हैं।

प्रातःकाल ब्राह्म मुहूर्तके समय इस द्रव पदार्थके दो इतने ही बड़े बिन्दु जो कि सूईकी नोक पर रह सके हरएकके मुंहमें गिरते हैं। इसमें का एक बिन्दु ठीक कुंडलिनीको जाकर मिलता है। अर्ध बिन्दु मणिपुर चक्रमें मिलता है और बचा हुआ अर्ध बिन्दु मुंहमें ही रह जाता है। मुंहमें जो द्रव बिन्दु शेष रहता है इसका कार्य मुंहमें आर्द्रता बनाये रखना और लार निर्माण करना है। पाठक अच्छी तरह जानते होंगे कि मृत्युके समय जब प्राणीका मुंह सूखने लगता है तब उसमें घडोंसे पानी डाला जाय तो भी जिह्वा पर आर्द्रता नहीं आ पाती। इस अमृतको योगशास्त्रमें 'मद्य' नामसे पहचाना जाता है। योगशास्त्रमें निम्न लिखित श्लोक पाया जाता है—

"मद्य मांस मीनंच मुद्रा मैथुन मेवच।
एते पंच मकार स्यु मोक्ष दायि युगे युगे॥
पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत् पतति भूतले।
पुनरुत्थाय वै पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते॥

उपरोक्त श्लोकका अर्थ जिसे कौल चार्वाक वाममार्गी और शाक्त लोगोंने माना वह निम्न है।

मद्य=शराब, मांस=बकेरकी बोटी, मीन=मछलियाँ, मुद्रा=योनी के आकारके बड़े, मैथुन=स्त्री पुरुष संयोग।

लेकिन योगशास्त्रमें इसका अर्थ निम्न लिखित है—

मद्यः—चन्द्रामृत हठयोग प्रदीपिकामें इसे अमर कहा गया है।

मांस खानाः—प्रातःकाल खेचरी मुद्राके कारण अमृतके दो बिन्दु का श्राव होता है इन बिन्दुओंको पेटमें न लेकर कुंडलिनीको पहुंचा देनेकी क्रियाको मांस खाना कहते हैं।

मीनः—आसन ८४, सिद्धासन, पद्मासन इत्यादि।

मुद्राः—दस मुद्राएँ; खेचरी, षण्मुखी, काकी, शांभवी आदि।

मैथुनः—प्राण और अपान नामक दोनों वायुकी भेट मूलाधार चक्रमें होती है इसीको मैथुन कहते हैं।

या नाडी सूक्ष्मरूपा परम पदगता सेवनीया सुषुम्ना।
सा कान्ता लिंग नाहीं न मनुज रमणी सुन्दरी वार योषित्॥
कुर्य्याचन्द्रार्क योगे युग पवन गते मैथुनं नैव योनौ।
योगीन्द्रो विश्ववन्द्यः सुखमय भवने तां परिष्वज्य नित्यम्॥

(भैरव यामल)

कुण्डलिनी रूप कालीका सहस्रारमें स्थित शिवसे मिलना मैथुन कहलाता है।

इसलिये यहाँ पर चन्द्रामृतका महत्व मालूम होता है। इसमें बांयें नथुने से श्वास अनाहत चक्र तक जाकर फिर वापिस लौटता है। यह श्वास चन्द्रामृतसे आता है इसलिये अति शीत होता है। यही कारण है कि इस श्वास पर चन्द्रका प्रभाव माना जाता है। इस प्रकार हम दो ग्रहोंके बारेमें विवेचन कर चुके हैं। अब एक तीसरी नाड़ी जिसे सुषुम्ना कहते हैं उसका विचार करेंगे।

सूर्य नाड़ीका चन्द्र नाड़ीमें प्रवेश करते समय और चन्द्र नाड़ी का सूर्य नाड़ीमें प्रवेश करते समय जो ५ सेकंदका संधिकाल होता है उस समय नाकके सिरे ४ अंगुलके अन्तर पर बाहर बहुत ही धीमी चालसे एक नाड़ी चलती है। यह नाड़ी कालभक्षक सर्व नाशकारक होती है। मनुष्यकी मृत्यु इस नाड़ीमेंसे श्वास निकले बिना नहीं हो सकती और यही कारण है कि इस नाड़ीको योगशास्त्रमें स्मशान कहा गया है। स्मशानका अधिकारी शनि अर्थात् शंकर होता है। यह

नाड़ी नाशकारक है किन्तु साथ ही साथ ज्ञान देने वाली है। इस नाड़ी पर शनिका प्रभाव होता है और शनिका भी यही गुणधर्म है।

इस प्रकार अब तक रवि, चन्द्र और शनि इन तीन प्रमुख ग्रहोंका हमने विचार किया है अर्थात् ॐकारके प्रणवकी स्थापना हो चुकी है। अब हम शेष ग्रहोंका विचार करेंगे।

मंगलः—मनुष्यमें जो शारीरिक शक्ति उत्पन्न होती है उसे कायम रखनेका कार्य स्वयंभू लिंगके द्वारा होता है। गुदद्वारके पास मांसका गोटीके आकारका एक ठोस गोला है। इसीसे कुंडलिनी लिपटी हुई है। इसीके पास स्वयंभूलिंगकी स्थिति है; इस शक्ति पर ही सब जीवनकार्य निर्भर है और इसीलिये इस पर मंगलका प्रभाव है।

गुरुः—मनुष्यकी विचार शक्तिका प्रवाह जिस मस्तिष्कमें उत्पन्न होता है वह बड़ा मास्तिष्क सिरके दाहिने बाजूमें है। इस मास्तिष्क पर गुरुका अमल होता है। इस भागको शरीरशास्त्रमें Cerebrum कहते हैं।

बुधः—सिरके बांई बाजूकी ओर कानके पीछे एक छोटासा मस्तिष्क है। जिस पर बुधका प्रभाव है। इस स्थानमें कुंडलिनी आकर स्थिर होती है। इस मास्तिष्कको Cerebellum. कहते हैं। अंग्रेजी शरीर शास्त्रज्ञ लिखते हैं।

The Functions of the lesser brain are not yet understood completely. It appears to serve in bringing the various muscular movements into harmoninus action.

अंग्रेजी शरीर शास्त्रज्ञोंको इस छोटेसे मस्तिष्क lesser brain के बारेमें विशेष ज्ञान प्राप्त नहीं हो सका, इस स्थानमें कुंडलिनी आकर स्थिर होती है और वहाँ चन्द्रामृत पीना आरम्भ करती है। इस

स्थानमें ज्ञान शक्ति है, कुंडलिनीको जगाये बिना ये सब बातें समझमें नहीं आ सकतीं। अंग्रेजी शरीर शास्त्रज्ञोंको इस बातका ज्ञान नहीं है और यही कारण है कि वे लोग इस बातको समझनेमें या इसका विवेचन करनेमें बिलकुल असफल रहे हैं।

शुक्रः—जिस नाड़ीसे संभोगके समय वीर्यका प्रवाह शुरू होता है उस नाड़ी पर इस ग्रहका अमल होता है।

राहू (कुंडलिनी) (अर्द्धमात्रा)

जब कुंडलिनी जगायी जाती है तब उसका मुँह ऊपरकी ओर हो जाता है और वह षट्चक्रोंका भेदन कर ऊपर ब्रम्हरंध्रमें पहुंचती है; इस कुंडलिनी पर हमने राहू ग्रहको माना है।

गुदा और लिंगके बीचमें मूलाधार नामक चक्र है। इस चक्रका स्वामी या देवता गणेशजी माने गये हैं और गणेशजी बुद्धिके अधिष्ठाता देवता हैं। कुंडलिनी जागृत होनेके बाद प्रथम इसीको ठोकरें देकर जगाती है। इसके जगानेका फल यह है कि मनुष्यकी आत्मज्ञानकी या मोक्ष प्राप्तिकी इच्छा प्रबल होती है। इस चक्र पर ग्रहोंमें बुधका अमल रहता है। कुंडलिनीके द्वारा जागृत होने पर बुधका तेज प्रदीप्त होता है। इस बुधका तेज लेकर—निश्चयात्मक बुद्धिको लेकर—कुंडलिनी दूसरे चक्र (स्वाधिष्ठान नामक चक्र) को ठोकरें देकर जगाती है। इस चक्र पर शुक्र नामक ग्रहका अमल है। मनुष्यकी कामवासनाओं पर शुक्रका अमल है। इस चक्रको जगानेका फल यह होता है कि काम-वासनाओंका नाश होकर शुक्रके वास्तविक तेजको कुंडलिनी ग्रहण करती है। इस चक्रके ऊपर तीसरा मणिपुर नामक चक्र है। यह नाभी स्थानमें है। कुंडलिनी या राहू पहिले दो चक्रोंका तेज ग्रहण करके ठोकरें देकर इस चक्रको जगाती है। इसके जगानेका फल यह है

कि मनुष्य थोड़ासा आत्मसाक्षात्कारकी ओर बढ़ता है। यहाँ पर कुंडलिनीको ख्याल आता है कि वह स्वयं शक्ति है। यह शक्ति या कुंडलिनी इस रविको जगाकर इस चक्रमें जो अग्नि है उसको ग्रहण करती है और मनुष्यके बड़े विकारोंका नाश करती है, साथ ही सात्विक गुणोंका उत्थान करती है। इस तरह पहिले बतलाये हुए तेजके साथ ही साथ सतोगुण को लेकर यह कुंडलिनी आगे आवाज करते हुए (Hissing Sound) ऊपर चढ़कर अनाहत चक्रको जगाती है। इस अनाहत चक्रको जगानेका फल आशाका नष्ट करना है। यहाँ कुंडलिनी आशाको नष्ट कर मंगलका तेज ग्रहण कर 'विशुद्ध चक्र' की ओर बढ़ती है और उसे ठोकरें देकर जगाती है। इस चक्र पर चन्द्रमा का अमल है। इस चक्रमें कुंडालिनीका पहुँचनाही चन्द्रमाको राहूका ग्रहण लगना है। चन्द्र अर्थात् मायाको राहूका ग्रहण लगने से मायाका नाश हो जाता है और आत्मा शुद्ध स्वरूपमें सामने आ जाती है। आत्माके आवरण नाश होते ही मनुष्य बड़ा ही तेजस्वी हो जाता है। यह तो पाठकोंके ध्यानमें आया ही होगा कि इस चक्रके जगानेका फल तेजस्वी बनाना है। यह तेज ग्रहण करके राहू या कुंडालिनी फिर ऊपरकी ओर चढ़ती है और आज्ञा चक्रको ठोकरें देकर जगाती है, इस चक्र पर गुरुका अमल माना जाता है। गुरु इतना अहंकारी होता है कि इसके अहंकारका नाश किसी भी प्रयत्नसे नहीं हो पाता। यह अहंकार "अहं ब्रम्हास्मि" है। इस अहंकारको नष्ट केवल सद्गुरु ही करते हैं। इस चक्रके जग जाने पर सद्गुरुकी पूर्ण कृपा होती है। यह कार्य करके कुंडलिनी या राहू बड़े मास्तिष्कके ऊपर जो सहस्रार चक्र हैं उन चक्रोंको ठोकरें देकर जगाती है और उस पर सोने वाले शिव या शनिको जगाकर उसके छाती पर नृत्य करती है। यह परम शिव सृष्टिकी उत्पत्ति, स्थिति और लय करने वाला परम ईश्वर है। यह निर्गुण निराकार आनन्द स्वरुप है और दो शक्तियाँ

के साथ है। इनका मिलन यहीं है। इसके ऊपर विसर्ग है। यहाँ पर कुंडलिनी आकर स्थित होती है। इस जगह पर भी फिर मैंने राहूका अमल दिखाया है लेकिन वहाँ पर केतुका अमल समझना चाहिये। यह स्थान अव्यक्त, अज्ञेय, निरानन्द और शून्य है।

इस तरह राहू प्रत्येक ग्रहके साथ युति करता है। (इस युतिका पूर्ण फल और उसका अर्थ समझना हो तो मेरा 'ग्रहण विचार' नामक ग्रन्थ पढ़िये) इस तरहसे राहू (या कुंडलिनी) सब ग्रहोंसे युति करते हुए शनिको मिलता है और शनि और राहू ये दो पाप ग्रह मोक्ष-ज्ञानकी प्राप्ति करा देते हैं।

कुंडलिनी या राहूका पथ

(षड्चक्र भेदन)

चक्रका नाम	चक्र जगानेका फल	अधिष्ठाता देवता	अमल करनेवाला ग्रह	
१ मूलाधार	मोक्ष मार्गकी ओर प्रवृत्ति जाग्रत	गणेश	बुध	राहु
२ स्वाधिष्ठान	कामवासनाओंका नाश	विष्णु	शुक्र	
३ मणिपुर	आत्मसाक्षात्कार की ओर बढ़ना	रुद्र	रवि	
४ अनाहत	आशाका नाश	"	मंगल	
५ विशुद्ध	मायाका नाश	"	चंद्र	
६ आज्ञा	सद्गुरुकी भेंट	"	गुरु	
७ सहस्रार	(अंतिम शिवकी भेंट)	"	शनि	

क्रमशः कुण्डलिनी मूलाधार चक्रको जगाती हुई अंतमें सहस्रार चक्रमें पहुंचती है।

सद्गुरु, सत्पुरुष, मठस्थ संन्यासी और सच्चा संन्यासी इनमें महत्वका अन्तर

सत्पुरुष—सुशील, शुद्ध आचरणी, परोपकारी, निर्लोभी, ईर्षासे परे, व्यवहारी, सब पर प्रेम करनेवाला और लोगों पर अपना प्रभाव डालनेवाला, सत्यवचनी, क्षमाशील, दयावान, अति सात्विकवृत्तीसे बर्ताव करनेवाला, अन्य उत्तम गुणोंसे युक्त, किन्तु ईश्वर विषयक ज्ञानसे अभिज्ञ, ये लोग रविके अमलमें होते हैं।

(महात्माजी)

सद्गुरु—उपरोक्त सभी गुणविशेषोंके अतिरिक्त ये त्यागी, शरीरसे अनासक्ति रखनेवाले, तपश्चर्या करनेवाले, ईश्वरी ज्ञानसे परिपूर्ण ब्रम्हचर्यव्रतका पालन करनेवाले, दूसरोंको ईश्वरीय ज्ञान देनेवाले और शिष्योंका कल्याण चाहनेवाले होते हैं; फिर इनके शरीर पर गेरुएँ कपड़े हों या न हों! ये शनिके अमलमें आते हैं।

(श्री रामकृष्ण परमहंस)

सच्चा संन्यासी—उपरोक्त सद्गुरुकी व्याख्याके समान ही य संन्यासी होते हैं। ये शनिके अमलमें आते हैं।

(स्वामी विवेकानंद)

मठस्थ संन्यासी—इनकी कोई भी वासना मरी हुई नहीं होती। श्रीमत् शंकराचार्य की गद्दी पर जिस प्रकार दंड धारण करने वाले संन्यासी होते हैं उसी प्रकारके ये भी होते हैं और बुधके अमलमें आते हैं। इन लोगोंको कैसे पहचाना जाय? इसीलिये इनकी कुंडलीसे पहिचान करनेके लिये यह शास्त्र लिखा गया है।

कुंडलिनीका चमत्कार

यह कुंडलिनी ९ के अंक पर अमल करती है। इस अंकका चमत्कार नीचे देखिये—

९	९ = ९	विसर्ग=० केतू (राहू)
१८	१ + ८ = ९	सहस्रार=७ शनि
२७	२ + ७ = ९	आज्ञा=५ गुरु
३६	३ + ६ = ९	विशुद्ध=२ चंद्र
४५	४ + ५ = ९	अनाहत=३ मंगल
५४	५ + ४ = ९	मणिपुर=१ रवि
६३	६ + ३ = ९	स्वाधिष्ठान=६ शुक्र
७२	७ + २ = ९	मूलाधार=४ बुध
८१	८ + १ = ९	Canalis Centralis=८ नेपच्यून
९०	९ + ० = ९	कुंडलिनी= ९ राहू
४९५	४५ ४५ ९०	

९ + ९ + ९ + ९ . ३६=९

९ + ८ + ७ + ६ + ५ + ४ + ३ + २ + १ = ४५ = ९

१ + २ + ३ + ४ + ५ + ६ + ७ + ८ + ९ = ४५ = ९

---

८ + ६ + ४ + १ + ९ + ७ + ५ + ३ + २ = ४५ = ९

प्रणवाक्षर.

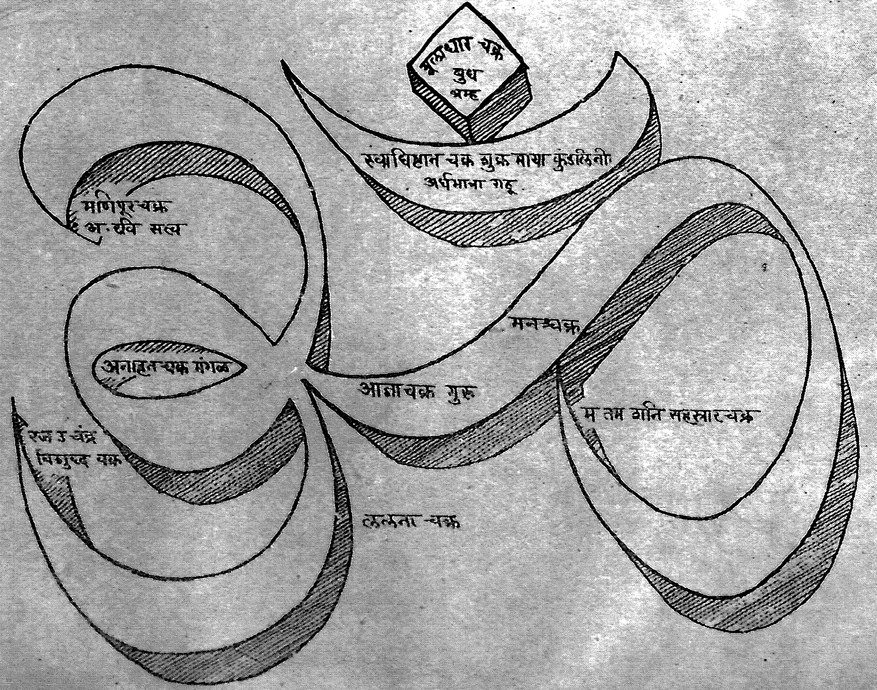
मूलाधार चक्र
बुध
ब्रह्म
स्वाधिष्ठान चक्र शुक्र माया कुंडलिनी
अर्धमात्रा राहू
मणिपूर चक्र
अ. रवि सत्व
अनाहत चक्र मंगल
रज उ चंद्र
विशुद्ध चक्र
मनश्चक्र
आज्ञाचक्र गुरु
म तम शनि सहस्रार चक्र
ललना चक्र

अध्यात्म ज्योतिष-विचार

परिच्छेद पहला

आखिर वेदान्त क्या है ?

ईश्वरने सबसे पहले चराचर और स्थावर-जंगम, अचेतन सृष्टि निर्माण की और बादमें मनुष्येतर जीवसृष्टि। इस सृष्टिका सृजन करनेके पश्चात् ईश्वरने सोचा तो उसे मालूम हुआ कि सारी जीवसृष्टि विचारहीन है और विचार अभिव्यक्त करनेके लिये उसके पास वाणीका अभाव है। इसीलिये उसने पुरुषको निर्माण किया और उसे विचार करनेकी शक्ति तथा विचार प्रकट करनेके लिये वाणी प्रदान की। पुरुषका निर्माण कर ईश्वर उसके बर्तावका निरीक्षण करते रहा। जब पुरुषका निर्माण हुआ तब उसे कोई भी बन्धन न था। इसका नतीजा यह हुआ कि पुरुष मदोन्मत्त होकर ईश्वर की शक्ति माननेसे इन्कार करने लगा; यहाँ तक कि उसने परमेश्वर से ही स्पर्धा शुरु कर दी। स्वयं अज्ञानी होते हुए भी अहंकारवश वह सृष्टिमें अति विप्लव मचाने लगा। यह देखकर कि पुरुष अपने वश के बाहर जा रहा है उस पर कुछ बन्धन डाल दिया जाय इसलिए जिस सप्तरसात्मक धातुओंसे पुरुषका शरीर बनाया गया था उन्हीं धातुओंसे एक दूसरी बहुतही सुंदर और आकर्षक मूर्ति ईश्वरने बनाई और उसमें एक महान् शक्ति भर दी। इसी शक्तिका नाम है "आकर्षण शक्ति" और इस शक्तिशाली मूर्तिका नाम है स्त्री। यह

शक्तिको निर्माण कर ईश्वरने स्त्रीके जिम्मे पुरुषको मोहजालमें डालकर प्रपंचमें फँसानेका कार्य सौंप दिया। सांसारिक जीवन दुःख-क्लेशादिसे पूर्ण है। इसी दुःखोंके कारण मानव-प्राणी वैराग्यको प्राप्त होता है और ईश्वरका नामस्मरण करता है। उसकी वृत्ति भी शनैः शनैः परमार्थकी ओर झुकने लगती है। परन्तु मानवप्राणी यह भूल गया है कि वह स्वयं भी परमेश्वर है। आखिर मानव-प्राणी कौन है? कहाँसे आया है, कहाँ जावेगा, उसका कर्तव्य और मूल स्वरूप क्या है आदि प्रश्नों पर विचार करना जरूरी है। आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक इन त्रिविधतापोंको भोगते हुए जब मानवप्राणी पूर्ण वैराग्यको प्राप्त होता है, एवं शारीरिक आसक्तियोंके परे व मोह विमुक्त होता है; तब वह "अथा तो ब्रम्हजिज्ञासा" का अधिकारी होता है। ब्रम्ह क्या है? माया कैसी है? आदि प्रश्नोंपर प्रकाश डालनेवाले शास्त्रको ही वेदान्त शास्त्र कहते हैं।

अगले परिच्छेदमें वेदान्तका मानव-प्राणीसे क्या सम्बन्ध है? इस विषय पर चर्चा करेंगे।

परिच्छेद दूसरा

वेदान्तका मानव-प्राणीसे क्या सम्बन्ध है।

भारतवर्ष ही एक ऐसी पुण्य भूमि है जिसमें परमेश्वर प्राप्तिके लिए विविध सोपान बनाये गए हैं। इस भूमिमें स्वयं भगवान्ने कईबार अवतार लिये हैं और कई सन्तों व सत्पुरुषोंने बारबार जन्म लेकर इसे पुनीत किया है। सारे संसारमें हिन्दुस्थानके सिवाय एक भी ऐसा देश, धर्म, पंथ या समाज नहीं है जिसने परमेश्वर प्राप्तिका मार्ग बतलाया हो। यह बड़े सौभाग्यकी बात है की इस विषयमें भारतवर्ष आज भी दिलचस्पी लेता है। पाश्चात्य देशोंमें दर्शन व तत्वज्ञानमें लोग बहुत आगे बढ़ गये हैं। किन्तु पाश्चात्य तत्त्ववेता बुद्धि-विकासवादी होनेके कारण उनके तत्त्वज्ञान और हमारे वेदान्तमें साधर्म्य नहीं हो पाता। हमारा वेदान्त आत्माका विकासवादी है। हमारे देशमें आत्माके विषयमें काफी अनुसन्धान हुए हैं और हो रहे हैं।

वेदान्तका मानव-प्राणीसे क्या सम्बन्ध है इसे स्पष्ट करनेके लिए प्रथम एक उदाहरण दिया जाता है—मान लीजिये किसी जमीनदारने किसी गरीबको अपना मकान रहनेके लिए मुफ्त में दे दिया; किन्तु उसे मकान देते समय इस बातकी चेतावनी दी गयी कि वह मकान की देखभाल ठीक तरह से करे। लेकिन इस चेतावनीकी अवहेलना कर उस गरीबने मकानकी देखभाल ठीक २ नहीं की। इसका परिणाम यह हुआ कि मकान जर्जर होकर धीरे धीरे गिरने लगा। यह देखकर कि मकान की व्यवस्था सुचारू रुपसे नहीं रखी गई थी, जमीनदारने उस गरीबको मकान छोड़कर जानेकी आज्ञा दी। परन्तु उसने न केवल

जमीनदारकी आज्ञा ही अनसुनी की प्रत्युत् उसने जमीनदारसे झगड़ा भी शुरू कर दिया। कारण कई साल तक मकानमें रहनेसे उस गरीबके मनमें मकानके प्रति ममता हो गई। उसकी आसक्ति यहाँ तक बढ़ गई कि वह स्वतःको ही मकानका मालिक समझने लगा। अब केवल अदालतमें जाकर अपना मकान वापिस लेनेके सिवाय जमीनदारके पास कोई चारा न रहा। नतीजा यह हुआ कि अदालतने जमीनदारको पुलीसके जरिये अपना मकान वापिस लेनेकी आज्ञा दे दी। अन्तमें जमीनदारने अपने मकान पर फिरसे कब्जा किया। गरीबको घर छोड़ते समय बड़ाही दुःख हुआ। उस बेचारेने इस बातका विचार ही नहीं किया कि वह जिस मकानमें रहता था उसका मालिक कोई दूसरा ही है और वह तो केवल उसमें मुफ्त रहता था। जीवात्मा और शरीरका सम्बन्ध भी इसी प्रकारका होता है। पूर्वकर्मानुसार यही जीवात्मा गर्भके पाँचवें महिनेमें गर्भमें रहनेके लिये आता है। पंचमहाभूतोंसे शरीर बनता है; इसलिये शरीरका मालिक पंचमहाभूत है। इन पंचमहाभूतोंने सप्तधातुओं को शरीरमें मुफ्त रहनेकी इजाजत दे दी है। साथ २ यह भी कह दिया है कि यदि तुम शरीरकी सुश्रूषा ठीक २ रखोगे तो सौ वर्ष तक खुशीसे रह सकोगे; अन्यथा तुम्हें निकाल दिया जायगा। पर इन नियमोंको भूलकर जीवात्मा मनचाहे कर्म करने लगता है। धीरेधीरे उसे शरीरसे आसक्ति हो जाती है और फिर शरीर छोड़कर जानेकी इच्छा ही नहीं होती। इस अवस्थाको देखकर पंचमहाभूत जीवात्माको निकाल देते हैं। जीवात्माको शरीर छोड़ते समय बहुत दुःख होता है। इसका कारण यही है कि वह यह कभी नहीं सोचता कि मेरा इस शरीर से कुछ भी संबंध नहीं है। वेदान्तशास्त्रकी सहायतासे मानवको इन बातोंका विचार करना चाहिये कि वह कहाँसे आया है? उसका

कर्तव्य क्या है ? उसे किस ओर जाना है ? जीवात्मा और शरीरका वेदान्तशास्त्रसे अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है।

अगले परिच्छेदमें "वेदान्त और ज्योतिषके पारस्परिक सम्बन्ध पर विचार करेंगे.

परिच्छेद तीसरा

वेदान्त और ज्योतिष-शास्त्रका पारस्परिक सम्बन्ध।

प्राचीन कालमें मानव-प्राणी जब पैदा हुआ तब वह आकाशमें रवि, चन्द्र तथा ग्रहणका निरीक्षण करता रहा। आकाशमें चन्द्रका उदयास्त; कलाकी वृद्धि तथा क्षय, एक दिन पूर्ण होना व एक दिन पूर्ण अस्तंगत होना आदि घटनाओंको देखकर उसको बड़ा आश्चर्य होता था। इस प्रकार कई वर्ष बीत जाने पर मानव-प्राणी इनका उपयोग काल-निर्णयके लिये करने लगा। अमावस्यासे अमावस्या तक एवं पूर्णिमासे पूर्णिमा तक एक माह और बारह माहका एक वर्ष इस प्रकारका कालक्रम बनाया गया। इसके अनन्तर इसका उपयोग मुहूर्तशास्त्र व धर्मशास्त्रके लिये किया जाने लगा। जैसे २ मानव-प्राणी का विकास और प्रगति होते चली वैसे २ ज्योतिषशास्त्रमें अन्वेषण होते गये और कुंडली शास्त्रका प्रादुर्भाव हुआ। साथही द्वादशभाव, द्वादशराशि और नव-ग्रहोंका भी उदय हुआ। प्राचीन ग्रंथोंका अवलोकन करनेसे इस बातका पता चलता है कि राजा-महाराजाओंका भविष्य तथा जिस जीवने जन्म लिया है वह परमेश्वर की याद करेगा या नहीं यह जाननेके लिए इस शास्त्रका उपयोग किया जाता था।

अब हमें वेदान्त और ज्योतिष-शास्त्रका परस्पर क्या सम्बन्ध है, यह देखना है। वेदान्तमें यह बतलाया है कि मायाकी उत्पत्ति ब्रह्मसे हुयी तथा मायासे पंचमहाभूत और पंचमहाभूतोंसे सृष्टि उत्पन्न हुयी है। यही वेदान्तका क्रम है। ज्योतिष-शास्त्रमें रवि यह मूल है। रविसे चन्द्रकी उत्पत्ति है और इन दोनोंसे सृष्टिका निर्माण हुआ है।

खगोलशास्त्रद्वारा यह बात सिद्ध हो चुकी है कि आकाशमें अपनी दृष्टिमें आनेवाले जो ग्रह हैं वे दूसरे ही हैं। ये सब ग्रह रविके चारों ओर भ्रमण कर रहे हैं। इनमें हमारी पृथ्वि भी है। इन सबका संचालक और प्रेरक रवि है। रवि स्थिर और तेजोमय है तथा ग्रहों व लोगोंको जीवन प्रदान करनेवाला है। अपनी आकर्षण-शक्तिके द्वारा रवि इन सबको अपने कब्जेमें रखता है और अखिल संसारके लिये साक्षीभूत रहता है। इसीलिये ब्रह्म तथा रवि समान धर्मी हैं। माया ब्रह्मसे पैदा हुई है। माया ब्रह्मसे प्रकाश लेकर दूसरोंको प्रकाश देनेवाली परप्रकाशी है; चन्द्र रविसे प्रकाश लेकर पृथ्वीको प्रकाशीत करनेवाला परप्रकाशी है। जिस प्रकार माया चंचल एवं बहुरूपी है उसी प्रकार चन्द्र भी चंचल तथा बहुरूपी है। इन सबमें समान धर्म पाये जाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि वेदान्त और ज्योतिषमें समान गुणधर्म वर्तमान हैं। संचित कर्ममेंसे जिस प्रारब्ध कर्मका उदय होता है, उसके अनुसार मानव-प्राणी अपने जीवनके अन्तिम क्षणतक भोग भोगता है। क्रियमाण कर्मका त्यागकर जन्म परम्परा क्षीण व नष्ट करते हुए वेदान्तके द्वारा मानव-प्राणी इसी जन्ममें मोक्ष प्राप्ति कर सकता है। ज्योतिष शास्त्रमें भी इन्हीं पूर्व कर्मोंका विचार होता है और उसे शुभ कर्मका भोग तथा अशुभ कर्म का त्याग करना पड़ता है। उसी तरह अपने हाथसे किसी भी प्रकारका अशुभ कर्म न होने पावे इस लिये उसे बहुत सतर्क रहना जरूरी है। मूलतः ज्योतिषशास्त्र और वेदान्तका एकही स्वरूप है। वेदान्त ज्ञानी लोगोंके लिये है और ज्योतिष अज्ञानी लोगोंके लिये। अगले परिच्छेद में ब्रह्म (रवि) के विषयमें चर्चा करेंगे।

परिच्छेद चौथा

रवि (ब्रम्ह) Universal Father

For it is the solar or b which produces the manifestation of life upon every planet of existence and which thus may be called the Lord or Giver of Light physi cally as also spiritually the Great Architect and Geometrician of the Universe, Self-Existent, Self-Conscious the Great First Cause of everything moving and unmoving the Supporter and Upholdar of the system. He has brought into manifestation and yet comparatively few in the western world today have any knowledge of the spiritual aspect of the Sun even realise that the wonderous orb of living light and warmth shining in the heavens is in very truth the glorious outward vesture of the God of this Solar System. Planetary Influenes Page 7 By-Bassie Leo.

कभी कभी मनमें ऐसा प्रश्न उठता है कि इस सृष्टिका कोई संचालक है या नहीं ? यदि है, तो कहाँ है ? उसका स्वरूप क्या है ? सृष्टिका संचालक किस प्रकार का होता है ? आदि ।

इन प्रश्नोंका उत्तर प्रत्यक्ष प्रमाण (eye witness) द्वारा देना कठिन ही है । इसीलिये एक उदाहरण द्वारा हम इस बातको स्पष्ट करना उचित समझते हैं । शक्कर खानेमें बहुत ही मीठी लगती है, यह सभी जानते हैं । परंतु यदि किसीसे यह पूछा जाय कि शक्कर की मिठास कैसी है तो

वह उसका वर्णन नहीं कर सकेगा ? शक्कर की मिठास जाननेके लिये स्वयं शक्करका स्वाद लेना ही इष्ट है । इसी तरह यदि सृष्टिके संचालकके विषयमें ज्ञान प्राप्त करना हो, तो स्वयं प्रयत्न करना आवश्यक है। सद्गुरुके सहवासमें हम सृष्टि संचालकके दर्शन प्राप्त कर सकते हैं । यह हुआ एक पक्ष का कथन । दूसरे पक्षका कहना यह है कि इस सृष्टिका कोई भी संचालक नहीं है बल्कि सृष्टि स्वयंभू है और अपने आप स्वयंसिद्ध संचालित है । यही कारण है कि इस संसारमें निरीश्वरवाद् अस्तित्वमें है। हमारी भारतभूमि पर दो निरीश्वरवादी महात्मा जन्म ले चुके हैं। एक तो "ईश्वरकृष्ण" जिन्होंने 'सांख्यकारिका' लिखी है और दूसरे महात्मा " कणाद् " जिन्होंने इस सृष्टिको मूलभूत अणुपरमाणु (Atoms, Electrons, Ions, Protons,molecules,Inter molecules) हैं ऐसा बतलाया है। पाश्चात्य देशमें इस परमाणुवाद के विषयमें काफी अनुसन्धान चल रहे हैं । हालमें पाश्चात्य देशोंमें अणु-परमाणुका पता लग गया है । इस विषयपर वहाँ विद्वानोंमें बहुत हलचल मची हुयी है। इसका दृश्य-फल गत महायुद्धमें (१९४५ के युद्धमें) एटमबमका अविष्कार हुआ और सब देशोंमें इसीकी धुन चल रही है। भारतवर्ष इस विषयमें अनजान नहीं है। ईसाकी दूसरी या तीसरी शताद्बिमें उत्तरी भारतमें " कणाद् " नामक एक महात्मा हो गये हैं। आपके मतानुसार सृष्टि की उत्पत्ति ईश्वर नहीं अणुपरमाणुही है । इसके बाद् सांख्योंने इससे भी आगे बिन्दुका पता लगाया। फल यह हुआ कि आज पाश्चात्य शास्त्रज्ञोंने अणुशक्तिको संहारास्त्रके रूपमें बद्ल दिया । हमारे देशमें यह वाद प्राचीन कालमें अस्तित्वमें था । इस विषयमें बहुत कुछ छानबीन करने पर भी आज इस दिशामें विशेष अनुसन्धान नहीं हो सका है । परन्तु हमारे प्राचीन ऋषि-मुनिगणोंने इस दिशामें अधिक अन्वेषण किये और यह सिद्धान्त प्रस्थापित किया कि आत्मा सृष्टिका

भी उसी तरह संचालक है। जिस प्रकारसे हमारे शरीर का। निरीश्वरवादी "ईश्वरकृष्ण" अपनी सांख्यकारिकामें लिखते हैं कि यह सृष्टि मायासे उत्पन्न हुई है, अथच मायासे महतत्त्व, महतत्त्वसे पंचमहाभूत और पंचमहाभूतोंसे यह सृष्टि निर्माण हुई है, इसीलिये माया सृष्टिकी संचालिका है। इस मतको खण्डन अद्वैत वादियोंने किया है। सुप्रसिद्ध जर्मन पंडित नित्से निरीश्वरवादी था। अमरीका का कर्नल इंगरसोल भी निरीश्वरवादी था। बादमें मृत्यके समय उसके मुख से ये उद्गार निकले There is a great force in the world which can act upon human being अर्थात् संसारमें एक महान सत्ता व शक्ति है जोकि मानव जगतको संचालित करती है। इससे पत्ता चलता है कि उनके विचारोंमें किस तरह परिवर्तन हुआ। निरीश्वरवादियोंका मत है कि संसारमें एक ऐसी महान् शक्ति है जो अपना प्रभाव मानव-जगत पर डालती है। आगष्टस कान्ट, जड़ाद्वैतवादी सर अर्नेस्ट हैकेल आदि कुछ पाश्चात्य पंडित यह मानते हैं कि इस सृष्टिका संचालक भी है। सर अर्नेस्ट हैकेल अपने "Riddle of Universe" नामक ग्रंथमें लिखते हैं कि इस सृष्टिका निर्माण ईश्वरने अपने रहनेके लिये किया है। इस सृष्टिमें ईश्वर विविध स्वरूपों में रहता है। इसी मतको हमारे पूज्य विद्यारण्य स्वामीने अपने "पंचदशी" में प्रकट किया है; जो कि हम लोगोंमें बहुत प्राचीन समयसे चला आ रहा है। इस सृष्टिका सत्य संचालक (ईश्वर) है यह बात निस्संदेह है। दूसरी बात जोकि सिद्ध हो चुकी है वह यह है कि ईश्वर इन्द्रियों से परे हैं और उसका स्वरूप केवल अतिन्द्रीय ज्ञानसे ही जाना जा सकता है। ईश्वरका स्वरूप कैसा है यह स्पष्ट करनेके लिये नीचे दो उदाहरण दिए जाते हैं—

१. बिजलीकी बत्तीकी ओर दृष्टिपात कीजिये। उसमें दो प्रकार के प्रवाह (current) होते हैं, एक धनाग्र (Positive) और दूसरा ऋणाग्र। (Negative) जिस तारमें से धनाग्र प्रवाह निकलता है उस तारमें प्रवाहका अस्तित्व आँखोंसे दिखाई नहीं देता; यद्यपि तारमेंसे प्रवाह चल रहा हो। फिर प्रश्न यह उठता है कि इस बातका पता कैसे लगाया जा सकता है? धनाग्रके संयोगमें जब ऋणाग्र आता है तब प्रकाश उत्पन्न होता है और उसी समय प्रवाहका अस्तित्व जाना जा सकता है। इससे हम यह देखते हैं कि ईश्वरका स्वरूप कोई भी हो, अशरीरधारी होनेके कारण उसे हम अपनी आँखोंसे देख नहीं पाते। श्रीमद्भगवद्गीतामें श्रीकृष्ण भगवानने कहा है— "नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमाया समावृतः। मूढोऽयंनाभिजानाति लोको मामजमव्ययम"॥ अर्थात् अपनी योग मायासे छिपा हुआ मैं सबके प्रत्यक्ष नहीं होता हूँ इसलिये यह अज्ञानी मनुष्य मुझ जन्मरहित, अविनाशी परमात्माको तत्त्वसे नहीं जानता अर्थात् मुझे जन्मने—मरनेवाला समझता है। उपरोक्त विवेचनसे पाठकोंको यह विदित होगा कि इस सृष्टिका संचालक अवश्य है जो सर्वव्यापी होते हुए भी अप्रकाशित है।

२. पत्थर पर पत्थर घिसनेसे अग्नि पैदा होती है; तथा एक काष्ठ पर दूसरा काष्ठ घिसनेसे भी अग्नि उत्पन्न होती है। यद्यपि यह अग्नि चर्मचक्षुओंको दिखाई नहीं देती, तो भी अग्नि स्वरूप तेज इन चीजोंमें है यह अवश्य ही सिद्ध होता है। ईश्वर भी तेज-स्वरूप है। ईश्वरका अस्तित्व इस सृष्टिमें तीन अवस्थाओंमें पाया जाता है:—स्थावर जंगम-पदार्थोंमें सुप्त अवस्थामें; मनुष्येत्तर प्राणी व जीव जन्तुओंमें-स्वप्नावस्थामें एवं मानव-प्राणीमें—जागृत अवस्थामें। इसीलिये कहा गया है कि ईश्वर

सर्वव्यापी है। ईश्वर स्वयं स्थिर रहते हुए भी सृष्टिका सूत्र संचालन करते रहते हैं।

इसके स्पष्टीकरणार्थ और एक उदाहरण दिया जाता है—आपने लोहचुम्बक देखा ही होगा ? इस लोहचुम्बकमें एक ऐसी अजीब आकर्षण शक्ति होती है कि जिसके द्वारा लोहचुम्बक तो स्वयं स्थिर ही रहता है किन्तु किसी भी लोहे के टुकड़ेको अपनी ओर खींच लेता है। ईश्वर भी इसी प्रकार अपने आकर्षण शक्तिद्वारा इस सृष्टिको अपने अधिकारमें रखता है। वेदान्तमें इस आकर्षण शक्तिको चित् कहते हैं। अब हम देखें कि परमेश्वरका स्वरूप कैसा है ? तेजस्वी, शान्त, प्रकाशमय, सत् (त्रिकालाबाधित अविनाशी सत्य) चित्, आनंद। किसी भी पाँच छै माहके बालकको ध्यानपूर्वक देखनेसे मालूम पड़ता है कि वह स्वयं हँसता है, किलकारियाँ मारता है; अथवा किसी जन्म-जात पागल (Born mad) को देखिये तो यही प्रतीत होता है कि वह स्वयं ही हँसता है; अपने आपसे खेलता है। इन दोनोंकी स्थिति आनन्द स्वरूप है; भेद केवल यही है कि पागल व्यक्ति अज्ञानी होता है और ज्ञानी लोग बालकके समान होते हैं। सर्व व्यापी, सर्वांतर्यामी, सचेतन, निर्गुण, निराकार, अगोचर, (इंद्रियों को दिखलाई न देने वाला) उत्पत्तिकर्ता तथा लयकर्ता, अणुरेणु परमाणुमें व्याप्त, सत्ताका संचालक, स्थिर रहनेवाला एवं इस सारी सृष्टि का मालिक। इस स्वरूपको वेदान्तमें परब्रम्ह कहते हैं जो कि ईश्वर के लिये पर्यायवाची शब्द है। ईश्वरके स्वरूपके समान ही रविका भी स्वरूप होता है। आकाशमें रवि की ओर देखनेसे हमें एक प्रचंड तेजोमय गोलाकृति दिखाई देती है। जिस प्रकारसे ब्रह्म अपने भक्तों के लिये सगुण-स्वरूप धारण करता है उसी प्रकार रवि भी सगुण-स्वरूप धारण करता है। जब ईश्वर इस सृष्टीमें पूरी तरहसे व्याप्त होकर दस अंगुल शेष रहता है तब वह रवि प्रतिमाके रूपमें हमें दिखाई देता है।

आकाशमें हमारे चर्मचक्षुओंको जो रवि दिखाई देता है उसका भी व्यास (Diam) दश अंगुल ही है। रविमें आकर्षण-शक्ति होती है जिसके द्वारा वह पृथ्वीको अपनी चारों ओर परिक्रमा कराने लगाता है। पृथ्वीके साथमें शनि, गुरु आदि सभी ग्रह रविके चारों ओर परिक्रमा करते हैं; इसीलिए रविमें तेज, आकर्षण-शक्ति और प्रभुत्व होता है। सत्, चित्, आनन्द, सर्व व्यापी, सर्वान्तर्यामी, सचेतन, उत्पत्ति और लयकर्ता, अणुरेणु–परमाणुमें व्याप्त, लोहचुम्बकके समान स्थिर रहकर सृष्टि आदि ग्रह व लोगोंको गति देने वाला, उत्साह व जीवन प्रदान करने वाला, आकुंचनशील व प्रसरणशील, निराकार और साकार, निर्गुण एवं सगुण—यही रविका स्वरूप है। इसीलिये रवि और ब्रह्म एक ही हैं।

परब्रम्हकी उत्पत्ति

भारतवर्षमें हिंदुओंका जीवनका ध्येय इसी जन्ममें आत्मस्वरूप का पहिचान कर लेना है। हमारे साधु–सन्तोंने ऊँचे स्वरसे लोगोंको बतलाया है कि आप सब परमात्माके स्वरूप हैं और इसीलिए ईश्वर के चरणोंमें सदाके लिए विलीन भी हो सकते हैं। सभी पहुँचे हुए सन्तोंने भगवानके स्वरूपका अत्यन्त मनोहर वर्णन किया है। महाराष्ट्रके प्रसिद्ध सन्त पू. श्री रामदास स्वामी अपने 'मनाचें श्लोक' नामक ग्रंथ में लिखते हैं—

वसे हृदयीं देव तो जाण ऐसा।
नभाचें परी व्यापकू जाण तैसा॥
सदा संचला येत ना जात कांहीं।
तया वीण कोठे रिता ठाव नाहीं॥१॥

नभा सारिखे रूप या राघवाचे।
मनी चिंतिता मूळ तूटे भवाचे॥
तया पाहतां देहबुद्धि उरेना।
सदा सर्वदा आर्त पोटीं पुरेना॥२॥

नभी वावरे जो अणूरेणु कांहीं।
रिता ठाव या राघवावीण नाहीं॥
तया पाहता पाहता तेचि झाले।
तिथे लक्ष आलक्ष सर्वे बुडाले॥३॥

कळे आकळे रूप ते ज्ञान होता।
तिथे आटली सर्व–साक्षी–अवस्था॥
मना उन्मनी शब्द कुंठीत राहे।
तो रे तोचि तो राम सर्वत्र पाहे॥४॥

महाराष्ट्रके दूसरे महान् सन्त श्री ज्ञानेश्वर महाराजने भी अपने "हरिपाठ" नामक ग्रन्थमें भगवत्-स्वरूपका विस्तृत वर्णन किया है।

ज्ञान देवा पाठ हरि हा वैकुंठ। भरला घनदाट हरि दिसे॥ ह.॥ २॥
अव्यक्त निराकार नाहीं त्या आकार। जेथूनि चराचर त्यासि भजे॥ह.॥३॥

जो ईश्वरके अणुरेणुसे लेकर संसारकी प्रत्येक चीजोंमें व्याप्त है उसका स्वरूप बड़ाही मनोहर, आकर्षक तथा उपमा रहित है। उस परमात्माकी सौंदर्यतासे संसारकी विनाशी चीजोंकी उपमा नहीं दी जा सकती। भगवत् स्वरूप यह बड़ाही विलक्षण तेज है। "चन्द्र सूर्य कोटि सम प्रभाः।" संसारको देदिप्यमान करनेवाले इन चन्द्र सूर्योंके समान कोटि कोटि चन्द्रसूर्य एकत्रित करने पर भी भगवानके समान अत्यन्त तेजस्वी प्रकाश नहीं हो सकता।

कोटि सूर्य प्रतीकाशं चंद्र कोटि सुशीतलं ।
यथा वेदान्त शास्त्रे तद्भवे दृश्यंहि धीमतांम् ॥

अर्थात् वेदान्तमें जिन सूर्योंका वर्णन किया गया है ऐसे कोटि सूर्योंके समान दैदिप्यमान और कोटि चन्द्रोंके समान शीतल स्वरूप उनको दीखता है जो आत्मबुद्धिवान हैं।

रक्तश्वेतं तथा कृष्णं नील पीतादि शोभितम् । तन्मध्ये व्यापितं येन तद्ज्योति ब्रम्ह केवलम् ॥ वह रक्तवर्ण, श्वेतवर्ण, कृष्णनील और पीले वर्णसे सुशोभित रहता है। उनका मध्य भाग जिससे व्याप्त है वही केवल ज्योतिः स्वरूप ब्रम्ह है। इस ज्योतिकी उपमा भी संसारके किसी भी दैदिप्यमान चीजोंसे नहीं दी जा सकती। उदाहरणके लिये किसी किटसन लाईटकी बत्तीके समक्ष घासलेट तेलकी चिराग रख दी जाय तो चिरागका प्रकाश कदापि किटसन लाईटकी बराबरी नहीं कर सकेगा। यह तेज अत्यन्त शान्त, तेजस्वी, सच्चिदानन्द और " कर्तुम अकर्तुम अन्यथा कर्तुमशक्ति समर्थ है "। इसी तेजको वेदान्तके शब्दोंमें " परब्रम्ह " कहते हैं। इस परब्रम्हकी उत्पत्तीका इतिहास बड़ाही मनोरंजक है। ऋग्वेदमें १० वे मंडलके १२९ वे " नासदीय सूक्त " में लिखा है

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं ।
नासीद्रजो नो व्योमा परोयत् ।
किमावरीवः कुह कस्य शर्म-
न्नम्भः किमासीद् गहनं गंभीरम् ॥ १ ॥

उस समय अर्थात् मूलारम्भमें परब्रह्मकी उत्पत्तिके पूर्व सत् और असत् नहीं था। बहुतसे टीकाकारोंने इसका जगत् निर्माण होनेके

पूर्व, यह अर्थ किया है किन्तु इस अर्थको उचित माननेसे निम्न लिखित प्रश्न स्वाभाविक उत्पन्न हो जाते हैं—१ पंचमहाभूत (दृश्य) किस प्रकार निर्माण हुए ? २ यह परब्रह्म किस प्रकार निर्माण हुआ ? ३ परब्रह्म सर्व प्रथम निर्माण हुआ था सृष्टि ? उपर्युक्त प्रश्नोंका विवरण कहीं भी नहीं किया गया है। अतः जिस सूक्तमें सृष्टि शब्दका अर्थ सूचित करनेवाला शब्दही नहीं है वहाँ " जगत् यह अर्थ उपयुक्त नहीं हो सकता। हिन्दी टीकाकार पंडित जयदेव शर्मा उपर्युक्त सूक्तका निम्नलिखीत अर्थ करते हैं— (तदानीम्) यह जगत् उत्पन्न होनेके पूर्व (न असत् आसित्) न असत् था। (नो सत् आसीत्) और न सत् था। (न रजः आसीत्) उस समय रजस् अर्थात नाना लोग भी नहीं थे। (नो व्योम) न यहाँ परम आकाश था। (यत् परः) जो उससे भी परे है वह भी न था। उस समय (किम् आ अवरीवः) क्या पदार्थ सबको चारों ओरसे घेर सकता था ? कुछ नहीं (कुह) यह सब फिर कहाँ था और (कस्य शर्मन) किसके आश्रयमें था। तो फिर (किम्) क्या (गहनं गंभीरं अम्भः आसीत्) गहन्। अर्थात् जिसमें किसी पदार्थका प्रवेश न होसके ऐसा गंभीर; जिसका वारपार पता न लगे ऐसा " अम्भस " (अप्भस्) कोई व्यापक भासमान् " आपः " तत्व विद्यमान था ?

पूना निवासी आहिताग्नि शंकर रामचन्द्र राजवाड़े "नासदीय सूक्त भाष्य" नामक अत्यन्त पाण्डित्यपूर्ण अपनी पुस्तकमें केवल तीन सूक्तोंका भाषांतर करते हुए लिखते हैं—तदानीम्, उस समय अर्थात् मूलारम्भमें-जगत् निर्माण होनेके पूर्व, उस समय जबकि जगत् नहीं था अथवा जगत्का प्रारम्भ ही नहीं हुआ था। असत्=अ + सत् = न रहना। सत्=रहना। रज = रजोगुण अथवा रजो लोक। परःविऽओम = उस ओरका आकाश। आवरीवः = आ + अवरीवः= किसे आवरण डाला गया। किं आवरीवः= किसने डाला। कुह = कहाँ ? किस स्थान पर आवरण डालनेवालेने

आवरण डाला ? कस्य शर्मन ? किसके लिए । गहनं = प्रवेश करनेके लिए अत्यन्त कठीन, भीतर जानेके लिए अशक्य ऐसा अत्यन्त गहरा। गंभीर = अत्यन्त अगाध दुस्तर स्थान । अंभः = पानी । जो ध्वनि करता हुआ बहता है वह पानी । गहनं गभीरं अंभः किं आसीत् = उस समय गहन और गम्भीर जल कौनसा था । अर्थात् किसी भी प्रकारका जल नहीं था ।

उपसंहार:—प्रागजगत्कालमें असत् नहीं था, सत् नहीं था अतएव रज भी नहीं था। परमव्योम नहीं था अतएव आवरक भी नहीं था, आवार्य नहीं था अतएव आवरण-कर्म नहीं था । स्थल नहीं था तथा निमित्त भी नहीं था अतः व्यक्त अथवा अव्यक्त किसी भी प्रकारका गहन गंभीर अंभ नहीं था । अब इसका अर्थ दिया जाता है—ऊपर कहा गया है कि असत् भी नहीं था और सत् भी नहीं था । अर्थात् रहना न रहना ये दोनों भी उस समय नहीं थे । सारांश उस समय कुछ भी नहीं था।
असत्=अव्यक्त परब्रह्म } यहाँ इस प्रकारका अर्थ मैं कर रहा हूँ ;
सत्=सृष्टिका व्यापार } क्योंकि ६ और ७ वे सूक्तमें सत् यह विसर्ग अर्थात् सृष्टिका व्यापार इस प्रकार अर्थ किया हुआ है । अतः सत्=सृष्टि, और विसर्ग=व्यापार, सत् और असत्=परब्रह्म इसका अर्थ स्पष्टरूपसे यही हो सकता है कि किसी प्रकारका और कुछ भी नहीं इस अभावसेहीं " अस्तित्व " का शुरूवात हुआ है।

उस समय अंतरिक्ष Etheric world भी नहीं था और इसके उसपार आकाश भी नहीं था । हिन्दी भाषान्तरकारने (यत् परः)—जो इससे भी परे है वह भी नहीं था—इस वाक्यका अर्थ 'आकाशके उसपार निवास करनेवाला परब्रम्ह भी नहीं था'; ऐसाही करना होगा। इस सूक्तमें कुछ न कुछ रहनेका कुछ भी आधार नहीं है; ऐसी अवस्थामें स्वाभाविक

यह प्रश्न उठ सकता है की जब कुछ भी नहीं था तो किसने किसे आवरण डाला ? उपर्युक्त सूक्तके विषयमें इसी लिए शंकाएँ की जाती हैं। किसने किसे आवरण डाला ? किसके सुखके लिये डाला गया, आदि प्रश्नोंके उत्तरमें बहुतसे भाषांतरकारोंने नकारात्मक उत्तर दिये हैं। किन्तु मेरी अल्प समझके अनुसार उन टीकाकारोंके उत्तर ठीक नहीं कहे जा सकते। मेरे विचारसे आवरण डालनेवाला और पहननेवाला इन दोनोंके अभावमें, कोई भी नहीं है; कहीं भी नहीं है और किसके सुखके लिए आदि प्रश्न उत्पन्न हो ही नहीं सकते। किन्तु जिस अवस्थामें उक्त प्रश्न उत्पन्न हुए हैं "आवरण डाला गया होगा ही" यह सिद्ध हो जाता है। इस प्रश्नकी पुष्टीके लिए हम निम्नलिखित नैसर्गिक उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। स्त्रीको गर्भधारणा होती है और गर्भके चारों ओर एक पतलासा आवरण स्वयं निर्माण हो जाता है। यहाँ आवरण पहननेवाला होता है किन्तु पहनानेवाला नहीं होता। वह गर्भ स्वयं आवरण धारण कर लेता है। वह थैली भी उस गर्भके साथ स्वाभाविक बढती रहती है। यह जो स्थिति है उसे (मराठी सन्तोंके अनुभवानुसार) "पिंडी ते ब्रम्हांडी" यह तत्व लागू होता है। दूसरा उदाहरण रेशमके कीड़ेका है। यह कीड़ा स्वतःकी रक्षाके लिये अपने शरीरसे एक प्रकारका बारीक तन्तु बाहर निकालकर उसका अपने शरीरके चारों ओर कोष तैयार कर लेता है। इसी कोषमें वह १३ दिनतक पड़ा रहता है। १४ वे दिन उस कोष को छिद्र गिराकर वह बाहर उड़ जाता है (यह स्थिति बंगाली कीड़ों की है; म्हैसूर की नहीं) उपर्युक्त दोनों उदाहरणोंमें आवरण पहननेवाला है परंतु पहनानेवाला नहीं है। ठीक इसी प्रकारकी अवस्था मूलारम्भ में भी थी। उस समयआवरण पहननेवाला कोई था उसका विवरण दुसरे सूक्तमें किया गया है। आवरण पहनानेवाला उस समय कोई भी नहीं था, यह क्रिया स्वयं होती थी। यह क्रिया कहाँ होती थी इस प्रश्नका उत्तर

नहीं दिया जा सकता किन्तु किसके सुखके लिए इस प्रश्नका उत्तर सरल है। जो आवरण धारण करनेवाला है उसने अपनी रक्षा तथा सुखके लिए आवरण पहना था। उपर्युक्त उदाहरणोंद्वारा तर्कके आधारपर मैंने शंका-ओंका अल्प समाधान किया है। सूक्तमें पानीकी चर्चा भी की गयी है। मूलारम्भमें यदि पंचमहाभूत नहीं थे तो पानीका रहना असंभव है। यदि पानी था तो उसके लिये पृथ्वीकी आवश्यकता नितान्त हो जाती है। यदि यह मान लिया जाय कि दृश्य जल था तो भी बड़ेबड़े प्रश्न सामने उपस्थित हो जाते हैं। अतः उस समय आजके समान चारों ओर भूमि नहीं थी अर्थात् परब्रम्हके पहले सृष्टि नहीं थी इसे मान लेनेपर उस समय जल भी नहीं था यह स्वयं सिद्ध हो जाता है।

सूक्त २ रा

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि।
न रात्र्या अह्न आसीत् प्रकेतः॥
आनीदवातं स्वधयातदेकं।
तस्माद्धान्यन्य परःकिंचनास॥

तब—मूलारम्भमें—अर्थात् परब्रह्म निर्माण होनेके पूर्व मृत्युग्रस्त सृष्टि नहीं थी। अमृत (मोक्ष) अर्थात् परब्रह्म भी नहीं था। आज जिस प्रकारके जन्म और मृत्यु हो रहे हैं उस प्रकार उस समय नहीं होते थे। उस समय शरीरधारी जीवोंका निर्माणही नहीं हुआ था। इसीलिए जन्म-मरणका होना असम्भव है। अर्थात् उस समय जन्म, मृत्यु, रात और दिन (दिन और रात्री के पहचाननेके लक्षण विद्यमान नहीं थे) नहीं थे। उस समय जो कुछ भी था वह अकेला था। वह स्वतः की अपरम्पार स्वयंभू शक्तिसे बिना वायुके स्वासोच्छ्वास करता था।

इसके आगे अथवा इसके अतिरिक्त उस समय कुछ भी नहीं था। अर्थात् उस समय केवल "**एकमेवाद्वितीयम्**" था।

यहाँ एक शंका हो सकती है कि बिना वायुके किस प्रकार स्वासोछ्वास किया जा सकता है? प्रश्नका समाधान इस प्रकार किया जा सकता है— स्त्रीके पेटमें जो गर्भ होता है वह आवरणसे ढँका हुआ होता है। नाल भी माताके हृदयसे जुड़ा हुआ होता है। यहाँ एक विशेष बात यह है कि उस गर्भको कहींसे भी वायु नहीं मिलता। माताकी ओरसे लिया जानेवाला स्वासोछ्वास भी गर्भको नहीं मिलता। केवल माताके खाये हुए अन्नसे उत्पन्न हुआ "अन्न—रस" ही उसे मिला करता है। वह गर्भ बिना वायुके स्वासोछ्वास लेता है। उसके हृदयकी धड़कन नित्य चालू रहती है। इससे भी आश्चर्यकी बात यह है कि वह जिवन्त होता हुआ भी मलमूत्रका त्याग नहीं करता। गर्भके इस विवरणसे यह सिद्ध होता है कि अदृश्य रूपसे पंचमहाभूत उस अवस्थामें भी वहाँ विराजमान रहते हैं। जब गर्भ उदरसे बाहर आता है तब दृश्य पंचमहाभूतोंका असर होते ही बालकका स्वासोछ्वास जारी हो जाता है मल-मूत्रका त्याग और रोना भी उसी समयसे प्रारम्भ हो जाता हैं। उपर्युक्त विवेचनसे इस बातकी पुष्टि होती है कि गर्भ बिनाही वायुके स्वासोछ्वास की क्रिया करता है। अर्थात स्वतः स्वतःमें ही स्फूरता रहता है। इसे स्पष्ट करनेके लिए हम प्रतिदिनका व्यवहारीक उदाहरण ले सकते हैं। दाल अथवा पतली भाजी अधिक खराब हो जानेपर बुरकनेकी क्रिया स्वयं जारी हो जाती है। इस क्रियामें मनुष्यके हस्तक्षेपकी आवश्यकता नहीं पड़ती। इसी प्रकार गर्भ भी स्वयं स्फूरता है।

इस सूक्तको जिस ऋषिने निर्माण किया उन्हें इस बातका स्मरण नहीं रहा कि जो अकेला था वह स्वतः की शक्तिसे ही स्वासोछ्वास किया करता था। और अपनी अपरम्पार शक्तिके बलपर ही डुलता भी था। फिर ये था क्या यह एक महाशक्ति थी। इसीको मैंने महाब्रम्ह स्वीकार किया है। अब हिन्दी भाषांतर भी देखिए—

(मृत्युः न आसीत्) उस समय मृत्यु न था। (तर्हि न अमृतम्) और न उस समय अमृत था। अर्थात् जीवनकी सत्ता और जीवनका लोप दोनों नहीं थे। (नः राज्याः प्रकेतः आसीत) न रात्रिका ज्ञान था और (न अह्नन् प्रकेतः आसीत्) न दिनका ज्ञान था। उस तत्वका स्वरूप (आनीत्) प्राण शक्ति रूप था। परंतु (अवातम्) वह स्थूल वायु न था। (तत् एकम्) वह एक (स्वधया) अपनेही बलसे समस्त जगत् को धारण करनेवाला शक्तिसे युक्त था। (तस्मात् अन्यत्) उससे दूसरा पदार्थ (किंचन) कुछ भी (परः न आस) उससे अधिक सूक्ष्म न था।

अब राजवाड़े महोदयका कथन भी सुनिए—

तर्हि—उस समय, जगत् निर्माण होनेके पूर्व।

मृत्यु—मृतत्व-मरणभाव। (Mortality) (Death)

अमृत—अमृतत्व-अमरणभाव। (Immortalily) (life)

प्रकेतः—चिन्ह।

राज्या प्रकेत—रात्रिका चिह्न।

अहन् प्रकेत—दिनका चिह्न।

तदेकं—तत् एकम्-वह अकेला एक।

स्वधया—स्वतःकी शक्तिसे।

अवातं—बिना वायुके।

आनीत्—स्वासोछ्वास करता था।

तस्मात्—वह जो वायुके बिना स्वासोछ्वास करके स्थित था उससे

ह— सचमुच।

अन्य न पर:— दूसरा भिन्न।

किंचन न आस—कोई भी न था।

उपसंहार:— प्राग्जगत् कालमें मृत्यु, अमृत, रात तथा दिन का चिन्ह नहीं था। वह केवल अकेला अपनी शक्तिसे वायुविरहित श्वसन करता था। इसके अतिरिक्त सचमुचही कुछ भी नहीं था। जगदुत्पत्ति पूर्व अजग स्थितिमें जहाँ सद्सत् द्वन्द्व नहीं था वहाँ मृता-मृत द्वन्द्व नहीं रह सकता। अर्थात् नहीं था। रात और दिन पहचाननेके चिन्ह सूर्य तथा चन्द्र नहीं थे फिर काल किस प्रकार रह सकता है? ऐसी अवस्थामें वह केवल अकेला एक था। अतएव वायु बिना स्फूरता था। उसे किसी भी प्रकारकी अपेक्षा अथवा किसी प्रकारकी प्रतियोगिता नहीं थी अतएव वह निर्द्वन्द्व एकमेवाद्वितीयं था।

अबतक जिन दो सूक्तोंकी आलोचना की गयी उससे यह सिद्ध हुआ कि उक्त सूक्तोंका परब्रम्हसे कुछ भी सम्बन्ध नहीं है। वह एक शक्ति है। इस शक्तिमें तेज, चित् और आनन्द नहीं है। केवल असत् है। किन्तु परब्रम्ह तेजस्वी सच्चिदानन्द स्वरूप है। इससे यह निर्विवाद स्पष्ट हो जाता है कि दोनों भिन्न भिन्न हैं। अन्तमें यह कहना पड़ता है कि यह शक्ति परब्रम्हको निर्माण करनेवाला महाब्रम्ह है।

सूक्तकार ऋषि दो सूक्तोंमें महाब्रम्हकी स्थिति बतलाकर तीसरे सूक्तमें एकदम अंधकार (तम) था और अंधकारमें जगत् डूब गया था यह बतलाते हैं। यहाँ भी निम्न शंकाएँ उपस्थित हो जाती है। ऐसी

अवस्थामें परब्रम्ह किस प्रकार निर्माण हुआ ! और जगतकी उत्पत्ति कैसी हुयी ? दृश्यादृश्य पंचमहाभूत किस प्रकार निर्माण हुए इत्यादि सूक्तकारने इन शंकाओंका निवारण बिलकूल नहीं किया है।

सूक्त ३ रा

तम् आसीत तमसा गृढ मग्रेऽ- ।
प्रकेतं सलिलं ँ सर्वमा इदम् ॥
तुच्छेनाभ्व पिहितं यदासीत् ।
तपस स्तन्महिना जायतैकम् ॥३॥

जगदारम्भ कालमें अंधकार व्याप्त था । जल भी न जानने योग्य व्याप्त था । मायाने परब्रह्म पर आवरण डाल दिया था और वह केवल तपश्चर्याकी माहिमासे प्रगट हुआ । हिन्दी भाषांतर देखिए—

(अग्रे) सृष्टि होनेके पूर्व (तमः आसीत्) "तमस्" था, वह सब (तमसा गूढम्) तमस् से व्याप्त था। वह (अप्र–केतम्) ऐसा था कि उसका कुछ भी विशेष ज्ञान योग्य न था। वह (सलिलम्) सलिल एक व्यापक गतिमत् तत्व था, जो (सर्वम् इदम् आ) इस समस्त को व्यापे था। उस समय (यत) जो था भी वह (तुच्छेन) तुच्छ, सूक्ष्म रूपसे (आभु–अपिहितम्) चारोंओरका सब विद्यमान पदार्थ ढँका था। (तत्) वह (तपसः महिना) तपस्के महान सामर्थ्यसे (एकम्) एक (अजायत) प्रकट हुआ । अब राजवाड़े महोदयका कथन भी सुनिए—

तमस्—प्रकाशका अभाव "अंधकार"
तम आसीत्—अंधकार था।
गूळम् गूढम्—ढँका हुआ।
अग्रे—आरम्भमें जगत् बननेके समय।

इदं सर्वम्—यह सारा दृश्यमान जगत्।

अप्रकेतं—न जानने योग्य।

सलिलं—गतिमान जगत्; गतिमान जल।

आः—था।

तुच्छेन—फोल (फलके ऊपरका छिलका)

आभु—जो चारों ओर था अर्थात् उत्पन्न होने वाला वह आभु।

अपिहित—ढँका हुआ था।

यत् तत्—जो वह।

एकं—तमसे व्याप्त था अतः जिसका भेदाभेद न जानने योग्य था। एक एकमेव सलिलं।

तपसः महिना अजायत–तपकी महिमासे जन्म हुआ।

उपसंहार—जगदारम्भ कालमें तम था। और उस तमके भीतर ढँका हुआ यह सम्पूर्ण सलिल अप्रकेत स्थितिमें था। इस प्रकार यह तुच्छसे आच्छादित तमसे ढँका हुआ आभु सलिल एकमात्र था, और वह केवल तपकी महिमासे जन्मको प्राप्त हुआ।

जगत्के पूर्व कालमें असत्, सत्, मृत्यु तथा अमृत नहीं था। परन्तु जगदारम्भ कालमें तम था। और तमके भीतर न पहचानने योग्य सारा जगत् डूब गया था। यह तुच्छसे ढके हुए अंधकारमें व्याप्त। सब ओरसे उद्भव पानेवाला गतिमान जगत् सर्वथैव उस मूल अज अव्यय आत्माके तपकी महिमासे प्रकट हुआ।

इस सूक्तमें “जगदारम्भ कालमें तम था” और जगत् उसमें डूबा हुआ था यह बतलाया गया है। ऐसी अवस्थामें निम्न लिखित प्रश्न उत्पन्न होते हैं–

(१) प्राग्जगत् कालमें कुछ भी नहीं था तब जगदारम्भ कालमें "तम" कहाँसे आया। तमकी उत्पत्ति किस प्रकार हुयी ?

(२) जगदारम्भ कालमें तम था और उस तममें जगत् डूब गया था। इससे यह साबित होता है कि तमके पूर्व जगत्की उत्पत्ति नहीं हो चुकी थी। जबतक तमके पूर्व जगत्की उत्पत्ति नहीं हो जाती तबतक तमके भीतर जगत् कदापि नहीं डूब सकता। यदि तमके भीतर जगत् डूब गया था तो जगत् किस प्रकार निर्माण हुआ ? इन प्रश्नोंका विवरण यहाँ नहीं किया गया है। प्रस्तुत ग्रंथमें हमें केवल ३ सूक्तोंके विवरणकी आवश्यकता थी शेष सूक्तोंको हम ज्यों का त्यों दे देते हैं–

सूक्त ४ था

काम स्तदग्रे समवर्तताधि।
मनसो रेतः प्रथम यदासीत् ॥
सतो बंधमसति निरविन्दन।
हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ॥ ४ ॥

सूक्त ५ वाँ

तिरश्चीनो विततो रश्मि रेषाम्।
अधःस्विदासी ३ दुपरि स्विदासी ३ त् ॥
रेतोधा आसन् महिमान् आसन्।
स्वधा अवस्तात प्रयतिः परस्तात् ॥ ५ ॥

सूक्त ६ वाँ

को अद्धा वेद क इह प्रवोचत्।
कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः ॥

अर्वाक् देवा अस्य विसर्जनेना ।
थ को वेद यत आबभूव ॥ ६ ॥

सूक्त ७ वाँ

इयं विसृष्टिर्यत आबभूव ।
यदि वा दधे यदि वा न ॥
यो अस्याध्यक्षः परमेव्योमन् ।
सो अंग वेद यदि वा न वेद ॥ ७ ॥

यह सारी हलचलें किस प्रकार होती गयीं इसे अब हम देखेंगे—

अद्वैत

O शून्य । मूलारम्भमें कुछ भी नहीं था । किन्तु जो अकेला, अकेलाही था वह स्वतः की अपरम्पार शक्तिसे बिना वायुके स्वासोच्छ्वास करता था । तात्पर्य वह स्वतःके भीतर स्वतः ही स्फुरता था । [इस स्फूरनामें नैसर्गिक हलचल थी । इसी अवस्थामें वह आगे पीछे जोरोंसे डुल रहा था । और इसी लिए उसे स्वयंभू गति प्राप्त हुयी थी ।] इससे यह सिद्ध हुआ कि जहाँ कुछ भी नहीं है वहाँ कुछ ना कुछ भयंकर है । (There is something dangerous where there is nothing). इसे स्पष्ट

करनेके लिए हम एक उदाहरण देते हैं—रेलगाड़ी में Vacuum Brake वेकूम ब्रेक रहता है। यह केवल हवाके बलपर काम करता है। एंजिनसे लेकर गार्डके डिब्बे तक एक मोटीसी लम्बी नली लगी हुयी होती है। इस नलीमें कुछ भी नहीं होता। वह भीतरसे पोली होती है। जिस समय गार्ड ट्रेन रोकना चाहता है उस वक्त गार्ड एक डंडेको दबा देता है और ट्रेन एकदम रूक जाती है। जिस नलीमें कुछ भी नहीं था वहाँ इतनी शक्ति कैसी स्वयं उत्पन्न हो जाती है ?

कुछ नहीं का विवरण इस प्रकार है—अज=कभी जन्मको प्राप्त नहीं हुआ अत: उसे मृत्यु तो नहीं है। वह त्रिकालाबाधित है ? मृत्युके परे है। अदृश्य=चर्मचक्षुओंसे न दिखनेवाला। अव्यक्त=जड़ सृष्टिके समान प्रकट न होनेवाला। अरूप= बिना आकार वाला। अनन्त जिसे न आदि है न मध्य है और न अन्त है। अतर्क्य=तर्कसे भी न जानने योग्य। निर्गुण-मन, बुद्धि, चित् और अहंकारसे रहित। मायातीत=मायासे रहित। निरानन्द=किसी भी आनन्दसे मुक्त। भासात्मक निराभास=अति प्रयासके कारण हमारे ज्ञान चक्षुको आभास होता है किन्तु चर्मचक्षु और शरीरको इसका बिलकुल आभास नहीं होता स्वयंभू=स्वयं निर्मित। स्वत:की तपश्चर्यासे प्रकट हुआ। स्वयंभू-शक्ति, स्वयंभूगति और स्वयंभू आकर्षण शक्ति इन तीनोंसे जो अपरम्पार पूर्ण शक्ति उत्पन्न हुयी है उसीको महाशक्ति अथवा महाब्रह्म कहा जा

सकता है। (दासबोध देखिए) श्री समर्थ स्वामी रामदासजीने अपने मनाचे श्लोक नामक पुस्तकके पहिले श्लोकमें जो मूलारम्भ बतलाया है वही महाब्रह्म-मूलारम्भ है। स्वामीजीने अपनी दासबोधके ७ वे समासमें चौदह ब्रह्मोंको साफ उड़ा दिया है। इसके बाद विमल ब्रह्म नामक ब्रह्म शेष रहता है उस ब्रह्मका अर्थात् जो कुछ भी नहीं है उस ब्रह्मका दासबोधमें सर्वत्र वर्णन किया गया है। यह महाब्रह्म निर्माण होनेके बाद इसी महाब्रह्मसे परब्रह्मकी उत्पत्ति हुयी है। इस परब्रह्मके पूर्व अदृश्य, अव्यक्त पंचमहाभूत निर्माण हुए थे। इस विषयमें श्री समर्थ रामदास स्वामी लिखते हैं-" ऐसी पंचमहाभूतें। पूर्वी होती अव्यक्तें। पुढें झालीं व्यक्तें। सृष्टि रचनेसी ॥५६॥ दशक ८, समास ३, अब यह देखेंगे कि अव्यक्त पंचमहाभूत किस प्रकार निर्माण हुए।

स्फूरना+स्वयंभू – शक्ति, गति। इसलिए अत्यन्त भयंकर शक्ति और वेगसे डुलनेके कारण पोलापन (Empty space) निर्माण होने लगा। अर्थात आकाश निर्माण हुआ। डुलनेके लिए खुला भाग अर्थात पोला स्थान चाहिये। जिस समय स्त्रीके उदरमें गर्भ रहता है उस समय की अवस्थाका विचार करनेसे ये सारी बातें समझमें आ सकती हैं। गर्भधारणाके प्रारम्भमें पुरुषके वीर्यम गर्भोत्पादक जन्तू होते हैं। इन जंतुओंमेंसे केवल १ जन्तु गर्भाशयमें प्रवेश करता है। भितर प्रवेश करनेके बाद वह अपनी पुँछसे गर्भाशयका द्वार बन्द कर लेता है कारण दूसरा जन्तू भीतर प्रवेश न करे इसलिए उसकी हलचल शुरू होती है। किसी बड़े सर्पको मारनेपर जब मृत्युके समय वह बड़ी भयंकरतासे फड़फड़ करता है उसी प्रकार इस जन्तूकी हलचल होती है। जब यह क्रिया जोरोंसे शुरू होती है तब स्त्रीके बीजकोषमेंसे (Female ovary) एक दूसरा पदार्थ उस गर्भाशयमें आ विराजता है और उस जन्तूको आकर मिल जाता है। इन दोनोंकी क्रियासे गर्भाशयमें मोटा

द्रव पदार्थ निर्माण होता है। यह द्रव पदार्थ स्वयं पकनेके मुताबिक पकते रहता है। इसीका माँस पिन्ड बनता है और बढ़ने लगता है। ५ मासके बाद उस गर्भको स्वयंभूगति प्राप्त होती है और हलचल भी प्रारम्भ होती है। इस प्रकार वह गर्भ सारे पेटमें घूमने लगता है। यहाँ यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि " क्या उस गर्भको घूमनेकी इच्छा होती है अथवा माताकी इच्छानुसार वह गर्भ घूमता है ? नहीं इन दोनोंकी भी बिना इच्छाके यह कार्य होता है। इसी हलचलको स्वयंभूगति कहते हैं।

उपर्युक्त विवेचनसे दो बातें सिद्ध होती हैं–१ जिस प्रकार उपर्युक्त जन्तूकी हलचल शुरूवात होती है उसी प्रकार उस महाब्रह्मकी भी भयंकर वेगसे आगेपीछे to and fro हलचल शुरू थी। २ स्त्रीका गर्भाशय तथा उदरका Empty space पहलेसेही तैयार रहनेपर भी वह लिमिटेड होता है किन्तु महाब्रह्मके विषयमें अनलिमिटेड होता है।

आकाशका जैसे २ प्रसरण होता गया वैसे २ उस स्वयंभू शक्तिमें स्वयंभूगति निर्माण होती गयी। और जब इस शक्ति गतिका आकाशसे संघर्ष शुरू हुआ तब वायु प्रकट हुआ। इसे स्पष्ट करनेके लिए हम एक उदाहरण देते हैं—जिस दिन वायु बिलकूल न बहा हो उस दिन भी रेलगाड़ीसे प्रवास करनेवाले यात्रीको ट्रेनमें बैठे २ इस बातका अनुभव हो जाता है कि ट्रेनकी खिड़कियोंमेंसे हवा बड़े जोरोंसे भीतर प्रवेश कर रही है। यद्यपि उस समय वायुकी गति अत्यन्त मंद होती है फिर भी ट्रेनका आकाशसे जो तीव्र संघर्ष जारी रहता है उसीसे वायुकी वृद्धि होकर वह भीतर जोरोंसे प्रवेश करती है। उस अपरम्पार शक्तिके अत्यन्त तीव्रतासे डुलनेके कारण आकाश और वायुकी उत्पत्ति हुयी। महाब्रह्म और आकाशसे वायुका अत्यन्त जोरदार संघर्ष शुरू होतेही तेजयुक्त बिन्दुका प्रादुर्भाव हुआ और उसी समय "नाद" की भी उत्पत्तिं हुयी। इसे स्पष्ट करनेके

लिए भी हम ट्रेनका उदाहरण अपने सामने रख सकते हैं—किसी ऊँचे स्थानके किनारेसे जब ट्रेन अपनी पूरी शक्तिसे चलती है तब पटरी और चाकोंके बीचसे चिनगारियाँ निकलती हुयी दीख पड़ती हैं। इन चिनगारियोंमें और उपर्युक्त बिन्दुमें केवल इतनाही भेद है कि बिन्दु यह अत्यन्त शीतल, दाहकपनसे रहित है। यह गतिमान और मन-मोहक होता है। इसलिए इसे अग्नि नहीं कहा जा सकता। किन्तु ट्रेन और पटरीके बीच जो चिनगारियाँ उड़ती हैं वह अग्नि है।

उपर्युक्त विवेचनसे यह निर्विवाद सिद्ध हो जाता है कि बिन्दुके समूहसे तेज तथा बिन्दुसेही अणुरेणु भी उत्पन्न हुए। यहाँ हम सृष्टि Nature अर्थात सृष्टिका नियम बतला देना चाहते हैं कि सृष्टिमें जो भी चीज निर्माण होती है उसकी अमर्याद वृद्धि प्रारम्भ होती है। कुछ कालके बाद वृद्धि स्थगित होती है। ठीक यही प्रकृतिका नियम उपर्युक्त तेज और बिन्दु तथा अणुरेणुको भी लागू होता है।

महाब्रह्म + वायु + तेज=तेजमें आर्द्रता निर्माण हुयी (आर्द्रता का अर्थ पानी नहीं है।)

वायु + तेज + आर्द्रता-सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणुरेणु उत्पन्न हुए।

बिन्दू और नाद इन दोनोंने अपना अलग अलग संसार चालू रखा। हठ योगशास्त्रका अभ्यास करते समय बिन्दू और नादका अनुभव आता है इसेही " सर्वम् बिन्दूमय जगत " ऐसा सूत्र है। नादका अनुभव " अनाहत " ध्वनिके रूपमें आता है। इसमें दस नाद हैं।—आकाश और वायु इन दोनोंके संघर्षसे नाद उत्पन्न हुआ। तेजमें प्रकाश नहीं था। इस महाब्रम्हके समय तक अंधकार नहीं था और प्रकाश भी नहीं था। उस समय सूर्योदयके पूर्वके जिस कालको हम " पंच पंच उषःकाल " कहते हैं वह उषःकालकी अवस्था थी।

अव्यक्त पंचमहाभूतोंका निर्माण इस प्रकार हुआ—जैसा कि ऊपर

हमने बतलाया है ! निर्माण कालके बाद् आकाश और वायुकी अमर्याद् वृद्धि हुयी । तद्नुसार तेज, आर्द्रता और अणुरेणुकी भी खूब वृद्धि हुयी । हमारे ख्यालसे इसी समय महाब्रह्मके ऊपरका आवरण फट गया होगा । बिना किसी आवरणसे शक्तिका अनुभव नहीं हो सकता ।

आकाश की भयंकर वृद्धि हो जानेसे अंधकार निर्माण हुआ कारण आकाशमें स्वाभाविक ही अंधकार है ।

वायुकी भयंकर वृद्धिके कारण हवा निर्माण हुयी । तेजकी इतनी अधिक वृद्धि हुयी कि वह बिना शक्तिका परब्रम्ह हो गया और झट अग्नि उत्पन्न हुआ ।

आर्द्रताकी भयंकर वृद्धिके कारण जलकी उत्पत्ति हयी। अणुरेणुकी भयंकर वृद्धिके कारण पृथ्वी निर्माण हुयी और पृथ्वी अंधकारमें डूब गयी।

अब इसी समय दूसरी ओर क्या हुआ यह भी देखेंगे—

तेजकी भयंकर वृद्धिके कारण जब सारे पदार्थ व्याप्त हो रहे थे उसी तेजने महाब्रम्हको निगल लिया । निगलतेही शक्तियुक्त परब्रम्ह निर्माण हुआ फिर भी महाब्रम्ह किंचित शेष रह ही गया । इसी शक्तिसे यह प्रकाशयुक्त भयंकर तेजस्वी, जन्म मृत्युरहित, अत्यन्त मोहक, सुंदर और आनंद युक्त सारी चराचर सृष्टिमें व्याप रहा है ।

इस परब्रम्हसे रवि-चन्द्र निर्माण होकर रात और दिनका विभाजन हुआ ।

परब्रम्ह+नाद+सृष्टि, इनके संयोगसे चित्त—दूसरोंकी संवेदना जिसके कारण जानी जाती है—ऐसा एक स्वसंवेद्य स्थिति निर्माण हुयी अर्थात् "चित्" निर्माण हुआ । यही स्वरूप आनंदयुक्त है ।

यह परब्रम्ह है इसीको बादमें "एकोहम् बहुस्याम ऐसी कामवासना उत्पन्न हुयी । अर्थात् बाह्य शक्तिकी उसे आवश्यकता महसूस हुयी ।

परब्रम्ह महाब्रह्मसे निर्माण होकर किस प्रकार सदाके लिए रहा इसे स्पष्ट करनेके लिए नीचे एक संक्षिप्त वंशावली देते हैं—

महाब्रम्ह + मारुती, राहू ।

स्फुरना + डुलना

आकाश + डुलना —— अव्यक्त

हवा (नाद)

बिन्दु (तेजका । यह अग्नि नहीं है)

आर्द्रता (यह पानी नहीं है गीलापन, कला)

अणुरेणु

तेज

परब्रम्ह-रवि सत्

प्रकृति-चन्द्र

महत्-(बुद्धी) बुध

चित्त-मंगल

अहंकार-गुरु

मन-चन्द्र

पंचज्ञानेन्द्रिय, —— पंचकर्मेंद्रिय

पंचज्ञानेन्द्रिय	पंचकर्मेंद्रिय
सत्व-अ-रवि	रज-उ-चन्द्र
श्रोत्र-मंगल	वाक्-बुध
त्वक्-बुध	पाणी-गुरु
चक्षु-रवी	पाद-मंगल
रसना-चन्द्र	गुद-शनि
घ्राण-शुक्र	उपस्थ-शुक्र

पंचमहाभूत, दृश्य तम शनि "म"

सूक्ष्म पंच तन्मात्रा

आकाश नील, गुरु, दत्त

वायु हरा, बुध, गणेश

अग्नि रवि, लाल, मारुति

जल चन्द्र, सफेद, देवी

पृथ्वी पीला, शनी, काली

—×—

स्थूल पंच तन्मात्रा

आकाशका गुण-शब्द गुरु

वायुका गुण-स्पर्श बुध

अग्निका गुण-रूप रवि

जलका गुण-रस चन्द्र

पृथ्वीका गुण-गंध शनि

दृश्य सृष्टिकी उत्पत्तिका मूल कारण बिन्दू है। और बिन्दुसे अणुरेणु, अणुरेणुसे सृष्टि और सृष्टिसे मानवी शरीरकी उत्पत्ति होती है।

बिन्दूका कोष्टक

अव्यक्त {
- ८ बिन्दु = १ सूक्ष्मातिसूक्ष्म रेणु
- ८ सू. सू. रेणु = १ सूक्ष्म रेणु
- ८ सूक्ष्म रेणु = १ रेणु
- ८ रेणु = १ सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमाणु
- ८ सू. सू. परमाणु = १ सूक्ष्म परमाणु
- ८ सू. परमाणु = १ परम अणु
- ३ परम अणु = १ त्रसरेणु
- ९ त्रस रेणू = १ सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणु, यहाँसे दृश्य

दृश्य

- ८ सूक्ष्मातिसूक्ष्म अणु = १ सू. अणु
- ८ सू. अणु = १ अणू

ऊपर दी गयी सब कोष्टकोंसे निकला हुआ परिणाम—

निसर्ग–यदृच्छा

प्राणी–मनुष्य	मनुष्येतर जीवजंतू	स्थावर जंगमात्मक पदार्थ अणुरेणुइ
ईश्वर अवस्था-जागृत	स्वप्न	सुषुप्ति
इन्द्रिय—सेन्द्रिय	सेन्द्रिय	निरीन्द्रिय

इस प्रकार महाब्रह्मसे सृष्टिकी उत्पत्तिका संक्षिप्त विवरण इस ग्रंथमें किया गया किन्तु जिन पाठकोंको इसके अतिरिक्त अधिक जानकारी प्राप्त करना हो वे 'पंचिकरण' देखें। हमने जिस प्रकार महाब्रह्मका वर्णन किया है ठीक इसी प्रकार श्रीमद्भगवद्गीतामें भी वर्णन किया

गया है-" ज्ञेयं यत्तत् प्रवक्षामि यज्ज्ञात्वाऽ मृत मश्नुते । अनादि मत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते ॥ श्लोक. १२ अ. १३—अर्थ= जिसे जाननेसे अमृत अर्थात् मोक्ष मिलता है वह मैं तुझसे कहता हूँ । वह अनादि (सबके) उस ओरका शाश्वत महाब्रह्म है । इसे सत् और असत् कुछ भी नहीं कहते ।

तैतिरीय ब्राह्मण पाठमें "नासदीय सूक्त" आया हुआ है । कुछ उपनिषदोंमें और कुछ आरण्यकोंमें (बृहत आरण्यक तथा अन्य कुछ ग्रंथोंमेंभी इस महाब्रह्मका वर्णन आया हुआ है ।

अबतक महाब्रह्मसे परब्रह्मकी उत्पत्तिका विवेचन किया गया । अबतक जितने भी संत महात्मा हो गये हैं वे सब इसी परब्रह्ममें विलीन हो चुके हैं । भविष्यमें भी जितने भी महात्मागण निर्माण होंगे वे भी इसीमें विलीन होंगे । महाब्रह्म तक सहसा कोई भी नहीं पहुँचता । इस पदकी यात्रा करनेवालोंमें महाराष्ट्रके प्रसिद्ध समर्थ स्वामी रामदासजीका नाम अग्रगण्य है । अतः स्वामी रामदासकी योग्यता महान थी यह स्वयं सिद्ध हो जाता है । स्वामी रामदासजीने महाब्रह्म अर्थात् मूलारम्भ देखा था और इसी लिए आपने अपने (" मनाचें श्लोक ") मनके १ ले श्लोकमें मूलारंभ शब्द का प्रयोग किया है । यदि आपने मूलारम्भ न देखा होता तो कदापि मूलारम्भ शब्द न लिखते ! " आत्मा; परब्रह्म अथवा परमात्मा आदि शब्द लिखते । स्वामी रामदास हनुमानजीके अवतार थे और भगवान मारुती तो स्वयं महाब्रह्म हैं । अतएव स्वामीजीने महाब्रह्म दर्शक " मूलारम्भ " शब्दका प्रयोग किया है और यही सत्य भी है ।

परिच्छेद पाँचवा

माया (चन्द्र Universal Mother)

"दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥"
"त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिःसर्व मिदं जगत् ।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥"

अर्थात्, यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत त्रिगुणमयी मेरी योग-माया बड़ी दुस्तर है; परन्तु जो पुरुष मेरेको ही निरन्तर भजते हैं, व इस मायाको उल्लंघित कर जाते हैं, अर्थात् संसारसे पार हो जाते हैं। गुणोंके कार्यरूप सात्विक, राजस और तामस इन तीनों प्रकारके भावों से अर्थात् रागद्वेषादि विकारोंसे और सम्पूर्ण विषयोंसे यह सब संसार मोहित हो रहा है, इसलिये इन तीनों गुणोंसे परे मुझ अविनाशी तत्वको नहीं जानता।

जिसको गार्हस्थ्य-जीवन व्यतीत करना है, उसे गृहिणीकी आवश्यकताका अनुभव होता है। पुरुषने अपने रहनेके लिये मकान बांधा और उसमें वह निवास करने लगा। उसने विवाह किया और अपनी पत्निको गृह स्वामिनी बनाया। स्वयं भगवान् श्रीकृष्णजीने कहा है—"मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्। हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते ॥" अर्थात्, "हे अर्जुन! मुझ अधिष्ठाताके सकाशसे यह मेरी माया चराचर सहित सर्व जगतको रचती है और इस ऊपर कहे हुए हेतुसे ही यह संसार आवागमनरूप चक्रमें घुमता है।" माया एक बड़ी ही अजीब शक्ति है। अदृश्यका दृश्य होना और दृश्यका

अदृश्य होना इसीको माया कहते हैं। मेरी समझमें मायाका स्वरूप लोहचुम्बककी उस आकर्षण शक्तिके समान है जो लोहेको खींचती तो है ही परन्तु आंखोंको दिखलाई नहीं देती। लोहचुम्बकमें लोहा और लोहचुम्बक ये दोनों भिन्न भिन्न पदार्थ मौजूद हैं। इसी तरह पुरुष व स्त्री दोनों एक ही तत्वसे बने हुए हैं। जिस सप्तरसात्मक धातुसे पुरुषका शरीर बना हुआ है उसी सप्तरसात्मक धातुसे स्त्रीका भी शरीर बना हुआ है। स्त्री और पुरुषको मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार तथा आत्मा समान दिये गये हैं। इतना होते हुए भी दोनोंके शारीरिक गुणधर्म भिन्न भिन्न हैं। यदि स्त्रीको लोहचुम्बक कहा जावे तो हम पुरुषको लोह कह सकते हैं। स्त्रीमें एक ऐसी महान् आकर्षण शक्ति होती है कि जिसके बलपर वह पुरुषको अपनी ओर हठात् आकृष्ट कर लेती है। दोनोंमें एक ही शारीरिक तत्त्व वर्तमान होते हुए भी एक भोक्ता है और दुसरा भोग्य है। इसी क्रियाको मैं माया कहता हूँ। यह कार्य किस प्रकारसे होता है यह हमें दिखाई नहीं देता। इस कार्यका हेतु सृष्टिका विस्तार तथा पालन अबाधित रूपसे जारी रखना है। यह एक ऐसी क्रिया है कि जो बाल्यकाल अथवा वृद्धावस्थामें नहीं की जा सकती। वह तो केवल युवावस्थामें ही हो सकती है। इससे एक बात सिद्ध होती है कि इस क्रियाका काल सीमित है—कुछ काल तक ही यह क्रिया हो सकती है और कुछ काल तक नहीं हो सकती। मायाका भी यह एक लक्षण है। माया इस सृष्टिका पालन व संवर्धन करने वाली, दृश्यादृश्य होने वाली, स्वयं प्रकाशित न होकर ब्रह्मसे प्रकाशित होनेवाली, ब्रह्मको अपने वशमें रखनेवाली, मोहमें फंसानेवाली, सदा भ्रममें डालने वाली, स्वकर्तव्यदक्ष, दयाशील होते हुए भी ममत्त्वहीन है। जिसकी कर्तृत्व शक्तिका आदि अंत नहीं और जो वेश्यासदृश है (सत्यानृताच परुषा प्रियवादिनीच। हिंस्रा दयालुरपिचार्थ परावदान्या:। नित्यम्-

व्यथा प्रचुर नित्य धनागमाच वारांगनेव नृपनीति अनेक रुपाः ॥) माया के गुणधर्म चन्द्रमें भी पाये जाते हैं। एक आँग्ल महिला Bassie Leo अपने ग्रंथमें लिखती हैं—

The Moon although apparently a barren and exhausted world, presides over birth and death, being concerned with the shaping and moulding of the forms which we inhabit in the lower worlds. Astrologically, the moon has rule over all the instincts in the animal kingdom, and in the human family the Moon influences the brain cells, causing fancies, notions, vague and undefined imaginings. It is concerned with collecting and reflecting, causing speculations, opinions and changes in the human mind, in which the intellect is but a reflection and often a distortion of impressions unreasoned sentiments and apprehensions in a word the Moon represents the personality of each individual the fleeting, transitory and impermanent bundle of inconsistencies bound together in the physical body and expressed through the brain cells in the various faculties of the head. It is the representative of the one life on earth, known as the personal during which time the individual ray shines through the persona or mask for the purpose of gleaning and gathering objective experiences.

By moulding the forms through which all life on our physical globe is manifested she brings all things to fruition, being the great Shakti of the god Saturn goddess of the deva kingdom, ruling the lower astral and physical world.

In conclusion we may note that the Moon has a light and a dark side, one half being turned to the Sun, the other away from it. She has also a good and evil influence upon huminity. There are secrets connected with the Moon that none save an adept may fully understand, but for all practical purposes she may be considered as the vehicle of prana, and a collector of all forces that sustain and nourish animal life, for without her etheric moulds life cannot be made manifest in the form. But she is also the goddess of death as well as life, and in a minor reflective manner she is also the "three in one" on the form-side-namely the collector of the cells and molecules of matter their preserver and their dissolver. Influence of Planets by Bassie Leo. Page 15-17-18.

उपरोक्त विवेचनके आधारपर हम यह कह सकते हैं कि माया और चन्द्रका स्वरूप एक ही है।

संसारमें अमरत्व की कल्पना किस प्रकार निर्माण हुयी ?

भारत वर्षमें प्राचीन कालमें हिरण्यकश्यपु नामक एक शिवोपासक तेजस्वी योगेश्वर हो गये हैं। इन्हें अमर बननेकी इच्छा थी। और इसी लिए हिरण्यकश्यपुने भगवान शंकर की कठीन तपश्चर्या प्रारंभ की। भगवान भोलेशंकर प्रसन्न हुए और भक्तकी इच्छा पूर्ण करनेके हेतुसे बोले कि हे वत्स इच्छित वर मांगो ! हिरण्यकश्यपुने जब अमर बननेकी इच्छा व्यक्त की तब विश्वनाथ शंकरजीने कहा कि, भक्तराज शरीरधारी प्राणियोंके लिए यह अवस्था अत्यन्त दुःसाध्य है। सृष्टि यह मृत्युग्रस्त है अतएव यहांके प्राणि अमरत्व नहीं प्राप्त कर सकते। हिरण्यकश्यपुने अपनी वाक्य रचना बदलकर पुनः भगवान शंकरसे वही वर मांगा—हे

नाथ ! देव, दानव मानव तथा स्थावर जंगम जीव जंतुओंसे मेरी मृत्यु न हो। न मैं दिनमें मरूँ और न रातको। न घरमें और न घरके बाहर मेरी मृत्यु हो। भगवान् शंकरने तथास्तु कहा और हिरण्यकश्यपु उस दिनसे स्वतःको अमर समझने लगा। इसके पश्चात कथा का विस्तार तथा अन्त किस प्रकार हुआ यह प्रत्येक पाठक जानते हैं। उपर्युक्त उदाहरण देकर हम अपने पाठकोंका ध्यान "अमरत्व" की ओर आकर्षित करना चाहते है। यह अमरत्व की भावना किस प्रकार निर्माण हुयी यह बड़ाही मनोरंजक विषय है।

यहाँ हम अति प्राचीन कालकी एक कथा सुनाते हैं। इसका निश्चित कालमान अबतक ज्ञात नहीं हो सका है। कथा की उत्पत्ति के सम्बन्धमें जो कुछभी प्रमाण मिलते है उसमे यह प्रकट होता है तब कि है जब कि मानव प्राणि का जन्म हुआ था। तब मानव पूर्ण तथा अज्ञानी तथा नग्नावस्थामें विहरता था।

उस समय मनासुर नामक एक मायावी असुर निर्माण हुआ। यह बड़ाही प्रतापी, भयंकर तेजस्वी, अहंकारी, निडर, तमोगुणी और मृत्युरहित था। जैसे जैसे यह बडा होने लगा वैसे वैसे सृष्टीमे भयंकर विप्लव मचाने लगा यह राक्षस देव, दानव तथा मानवोंसे लढ़ने लगा। देवता और मानवोंकी स्त्रियां तथा लड़कीयों को भगाना, उनकी सम्पत्ति को लूटना, लोगोंकी हत्या करना आदि-आजकलके सीमाप्रांतीय गुंडोमें समान-नीच कर्म करने लगा। मनासूर के कई उत्पातोंने जनता को आपत्तिमें झोंक दिया। भयसे लोग कांपने लग उस समय उन्हे अपनी रक्षा करनेवाला कोईभी नहीं दीखता था चूंकी वह राक्षस अमर था इसलिए देवता और मानव उससे युद्ध नहीं कर सकते थे। अन्तमें विवश होकर देवताओंने अपना एक शिष्ट मंडळ भगवान शंकर के पास भेजा। (जैसा आजकल जनताका शिष्टमंडळ हिन्द सरकारके

पास जाता है।) शिष्ट-मंडल की दलीलोंको सुनकर भगवान शंकरने उन्हें यह विश्वास दिलाया कि हम आपके कष्ट निवारण का उपाय अवश्य ढूंढ निकालेंगे। भगवान शंकरसे आश्वासन पाकर देवतागण अपने अपने स्थानके लिए बिदा हुए। देवताओंके कष्टोंका निवारण करनेके हेतुसे भगवान शंकर बहुत कुछ सोचते रहे किन्तु उन्हें कोईभी उचीत मार्ग न सूझ सका। अतएव वे सीधे भगवान महावीर के पास गये। और महावीरजीकी स्तुति करते हुए कहने लगे कि "हे भगवन! आपनेही प्रकृति तथा पुरुष को निर्माण किया है। आप अज और अमर हैं। इस चराचरमें आपके समान शक्तिशाली कोईभी नहीं है। आप स्वयंभू शक्ति शाली हैं। शंकरजीके स्तुतिपर वचनोंको सुनकर महावीरजी मुस्कराते हुए बोले, देवश्रेष्ट शंकरजी, आप बड़ेही चिंताशील जान पड़ते हैं। कहिए, आपकी चिन्ताका कारण निःसंकोच बतलाईए। अपनी चिन्ताका कारण व्यक्त करते हुए शंकरजी बोले—हे प्रभो! पृथ्वीपर एक मनासुर नामक का असुर अपनी प्रबल शक्तिके कारण बड़ाही उत्पात मचा रहा है। भूमंडल उनके अत्याचारसे काँप रहा है। उसके नाशका कोईभी उपाय हमे दीख नहीं रहा है। अतएव हम बड़ेही चिंतित है। कृपा कर आप इस चिंताके निवारणका इलाज बतलाईए। भगवान् महावीरने कहा—हे शंकरजी मैं उसके कृत्योंसे अनभिज्ञ नहीं हूँ। उसके नाशका शीघ्रही उपाय किया जायगा। आप निश्चित रहे। भगवान् महावीरसे आश्वासन पाकर शंकरजी अपने धामकी ओर चले गये।

शंकरजीके चले जानेके बाद महावीरजी इस विषयपर बहुत कुछ सोचते और अन्तमें इसी निर्णयपर पहुँचे कि मनासुर का नाश केवल स्त्री के द्वाराही हो सकता है। महावीरजीने अपनी पूँछसे कहा हे काली तुम्हे मनासुरसे युद्ध करके उसे मारना है अतएव तयार हो जाओ। देवीने कहा—हे प्रभो मनासुर बड़ाही मायावी अष्टसिद्धिको

प्राप्त और बडाही चंचल है। वह एक स्थानपर कदापि नहीं रहता उसे अमरत्वभी प्राप्त है ऐसी अवस्थामें उसकी मृत्यु किस प्रकार हो सकेगी ? मनासुरके नाशका उपाय देवीसे महाबीरजी कहही रहे थे कि शंकरजी वहाँ आ विराजे नीचे का अति गूढ, परम और चरम कल्याणकारी संवाद शंकरजीको सुननेका बड़ा सौभाग्य प्राप्त हुवा। देवी और महाबीरजीका संवाद प्रारम्भ हुआ। महाबीरजीने कहा हे देवी तुम जिस स्थानपर हमेशा बैठती हो वहांसे हटकर अपना मुंह ऊपरकी ओर कर दो। तुम्हे एक विवर मालूम होगा। इसीमें प्रवेश करो। वहाँ प्रवेश करनेपर तुम मनासुरको देख सकोगी किन्तु मनासुर तुम्हे न देख सकेगा। मनासुर एक स्थानपर नहीं रहता उसके छः दुर्ग हैं। ये बडेही दुर्ग हैं जिनके भीतर मनासुर रहा करता हैं। इनमेंसे जो पहला दुर्ग हैं उसकी ४ मजबूत दीवार हैं। इस दुर्ग को चारोओरसे दरवाजे हैं। प्रत्येक दरवाजेपर खडा पहरा रहता है। मनासुर पर्व दरवाजे में रहा करता है; वह बडीही सावधानीसे रहा करता ह। अतएव तुम पश्चिम दरवाजेसे भीतर प्रवेश करो। यहाँ यदि वह न मिले तो उसके रहनेका रंगमहल तोडफाडकर नष्ट कर देना चाहिए। इसके आगे दुसरा दुर्ग है। यह बडाही विचित्र है। इसकीभी छः दीवार हैं। चार दिशाओंपर चार और वायव्य तथा आग्नेय दिशामे दो इसप्रकार कुल छः दरवाजे इस दुर्ग को हैं। प्रत्येक दरवाजेपर भयंकर असुर पहरा देते हैं। पूर्व दरवाजेपर "काम" दक्षिण दरवाजेपर "क्रोध" पश्चिम दरवाजेपर "लोभ" उत्तर दरवाजेपर "मोहासुर" आग्नेय दरवाजेपर "मद" और वायव्य दरवाजेपर "मत्सर" नामक असुर पहरा देता हैं। ये सभी पहरेदार असुर बडेही भयंकर तथा जल्दीसे वशमें न होने वाले हैं। यहा तुझे मनासुर नहीं मिला तो यह दुर्ग तहस नहस करके आगे बढना। इसके आगे एक तीसरा दुर्ग हैं। इस दुर्ग म प्रवेश करना

अत्यन्त काठिण है। यह दस मजबूत दीवारोंसे घिराहुआ है। और इसकी चारोओरसे अग्निकी लपटे निकला करती हैं। इस दुर्गमें देव, दानव तथा मानवोंमेंसे कोईभी प्रवेश नहीं कर सकता। इस दुर्गमेंभी हे देवी तुम पश्चिम मार्गसेही प्रवेश करो। भगवान् महाबीरसे इस दुर्गोंका वर्णन सुनकर देवीने तुरंत उसमें प्रवेश किया। दुर्गसंरक्षक सेनापति देवीको देखतेही पूर्ण साह्यता देनेके लिए तैयार होगया। उसने बड़ीही नम्रताके साथ देवी को भतिर का रास्ता बतला दिया। सहसा इसी दरवाजेपर मनासुरसे देवीकी मुठभेड़ होगयी। मनासुरने अपने महलमें बैठे २ देवीके आति भयंकर क्रोधी स्वरूप को देखा। देखतेही वह युद्धके लिए उठ खड़ा हुआ देवीने तीन दिन युद्ध किया किन्तु मनासुर न मरा और न देवीके शरणही आया। अंतमें देवी थक गयी। भगवान् महाबिरने देवीकी यह अवस्था देखी तो उन्हे ऐसा जान पड़ा कि देवीको और भी कुछ सहारा की आवश्यकता है। भगवान् महाबिरने देवीसे उस राक्षसके विषयमें पूछा तब देवीने उत्तरमें निवेदन किया कि हे देव, यह राक्षस बड़ाही मायावी है। यह अमर है अतः इसे जीतना बड़ाही दुर्गम है। मेरे विचारसे यह जबतक शरण नहीं आता तबतक कोई भी काम सिद्ध नहीं हो सकेगा। भगवान् महाबीरने देवीकी सहारेके लिए विवेक और भक्ति नामक दो अस्त्र प्रदान किये। इन अस्त्रोंको पाकर देवी पुनः युद्धके लिए तैयार होगयी। महाबीर इन दोनोंका युद्ध देखते रहे। उपर्युक्त दो नये अस्त्रोंका प्रयोग करतेही मनासुर ना दो ग्यारह हो गया। अंतमें विवश होकर उसे देवी की शरण लेनी पड़ी। शरणमें आये हुए मनासुरको देखकर देवीने कहा कि हे राक्षस, तेरे अस्तित्व को सदाके लिए नष्ट कर देना चाहिए, किन्तु यह काम मेरा नहीं है अतएव तू भगवान् महाबीरके पास चल।

मनासुर भगवान् महावीर के समक्ष उपस्थित किया गया। भगवान्की क्रोधकारी आखोंसे मानो अग्नि की लपटें निकल रही थी। इस भयंकर रूपको देखकर मनासुर घबड़ाकर काँपता हुआ भगवान्के चरणोंमें गिर पड़ा। उस उद्दंड राक्षस की ओर देखकर भगवान् महावीर-जीने कहा—हे राक्षस तुम बड़ेही मायावी, निडर ओर दुष्ट हो। पृथ्वी पर तुमने अपने अत्याचारोंसे लोगोंको घोर कष्टोंमें झोंक दिया है। तुम इस बातको बिलकूल भूल गये हो कि तुम्हारा शासक जो सर्वशक्तिमान ईश्वर है वह सर्वत्र विराजमान है तुम्हारी उद्‌दण्डता को देखकर उन्हें उचित दण्ड अवश्य देना चाहिए। महावीरजीके कड़े रूख को देखकर मनासुर घबराया और स्तुती करता हुआ चरणोंपर गिर पड़ा। दीनदयालु महावीरने मनासुरके भयभीत पश्चातापयुक्त अंतःकरण को देखा। उन्हे उस राक्षसपर दया आगयी। मनासुरसे भगवान्ने कहा कि हे असुर, आजसे तुम भ्रुमध्यमें रहो। जो मानव, दानव तथा देव ईश्वरका स्मरण न करेगा उसे कष्ट देकर ईश्वरकी याद दिलाते रहना। समीपही हाथ जोड़े हुए देवी खड़ी थी। देवी की ओर देखकर महावीरजीने कहा कि हे देवी मैं तुमपर प्रसन्न हूँ अतएव इच्छित वर माँगो! देवीने पति दर्शनकी इच्छा व्यक्त की।

देवीकी पतिदर्शन की लालसा पूर्ण करनेके हेतुसे महावीरजीने कहा हे देवी तुम्हे पति दर्शन के लिए इससे भी आगे बढना होगा। इस के आगे एक चौथा दुर्ग है। इसके चारोंओरसे खून की नदियाँ बहती है। इस दुर्गको बडी बारह दीवारें हैं। इस दुर्गके भीतर भयंकर नाद सुननेमें आता है। इसी स्थानपर बडे जोरोंसे आँधी चला करती है। इस आँधीमें मार्ग बिलकूल नहीं दीखता। इस दुर्गम दुर्गको तोडफाडकर आगे बढना होगा।

इसके बाद तुम्हे सोलह दीवारोंसे घिरा हुआ एक पाँचवा दुर्ग मिलेगा। यह आकाशमें स्थित है। इसे भी तुम्हे नष्ट करना होगा। इसके आगे एक चमत्कारिक छठा दुर्ग मिलेगा। यह दुर्ग आकाशमें झुलता रहता है। इस दुर्गके सर्व प्रथम स्थिर करना होगा इसके बाद सूक्ष्मरूप धारण कर हे देवी, तुम्हे उस दुर्गमें प्रवेश करना होगा। दुर्गके स्थिर होतेही उस दुर्गके भीतर तुम्हे पतिदेव का पता लगेगा। वहाँ एक अद्भूत समुद्रमें दिव्य मंचपर तुम्हारे पतिदेव बिश्राम कर रहे हैं। वहाँ समीपमेंही एक अमृत कुंड है। देवी, इस युद्धमें तुम्हे बडे बडे कष्टोंका सामना करना पडा है। अतः पतिके समीप जानेके पूर्व तुम्हे उस कुंडसे अमृत प्राशन कर लेना चाहिए। भगवान महाबिरिसे मार्ग की समूची जानकारी प्राप्त करने पर देवी पति दर्शनके लिए चल पडी। मार्गके कठिन दुर्गोंको नष्ट करनेपर उसे पतिदेव के दर्शन हुए। झट पतिदेवको गाढ आलिंगन दिया। पतिके दर्शन पातेही देवी एकदम समाधिस्त हो गयी। कुछ समयके बाद जब समाधि भंग हुयी तो प्रसन्नवदना देवीने। अपने पतिसे पूछा—हे देव, क्या इस संसारमें कोई व्यक्ति अमर हो सकता है? पतिदेवने कहा हे प्रिये, इस संसारमें महाबीरजीके अतिरिक्त कोईभी अमर नहीं है। संसारमें जिनका जन्म हुआ है उन्हें एकदिन अवश्य मृत्युको प्राप्त होना पडता है।

उपर्युक्त कथासे यह जाना जा सकता है कि मनासुर भगवान के शरण जातेही अमर हो गया। और तभीसे असुरोंमें "अमरत्व" की भावना निर्माण हो गयी। और इस अमरत्व की कल्पनापर चन्द्रमाका असर होता है।

अगले परिच्छेदमें "वैराग्यके विषयमें विचार करेंगे।"

परिच्छेद छठवाँ

वैराग्य (शान्ति) लय

मनुष्यके मन पर जन्म-जन्मांतरसे एक विशिष्ट प्रकारका संस्कार होते आया है। मोह व लोभके कारण वह गार्हस्थ्य—जीवन बिताना चाहता है तथा जायदाद, बालबच्चों आदि की इच्छा है। इस इच्छाका त्याग करना अति दुस्तर है। इसी विचार—प्रणालीके कारण जन्म-जन्मांतरित इच्छा दिलमें रह जाती है। जन्म-मरणके चक्रका मूल इसी इच्छामें है। सभी प्रकारकी इच्छाओंका त्याग करना ही वेदान्तमें सबसे महत्त्वकी बात है। ये त्याग तीन प्रकारके होते हैं:—

(१) किसी भी वस्तुका त्याग विचारपूर्वक अपनी इच्छासे एवं आत्म संयमसे करना और त्याग करते समय अपने शरीर, मन व आत्माको या किसी अन्य व्यक्तिके मन या शरीरको किसी भी प्रकारका कष्ट न पहुँचाना। इस प्रकारका वैराग्य श्रेष्ठ श्रेणीका होता है।

(२) शरीर, मन और आत्माको आधिभौतिक, आध्यात्मिक, तथा आधिदैविक इन त्रिविधतापोंसे पीड़ा पहुँचती है। ये ताप असह्य होनेके कारण जब वासनाका त्याग बलपूर्वक किया जाता है तब वह त्याग अधूराही रह जाता है जोकि गुरूके ज्ञानोपदेशसे पूर्ण होता है। इस प्रकार का त्याग द्वितीय श्रेणी का है और वर्तमान जन्म स्वप्रयत्नों पर निर्भर है।

(३) कनक व कामिनी की अभिलाषा मनमें रखना किन्तु वह पूरी न होना। इसे हम "अभाव–वैराग्य" कहते हैं। जिसे परमार्थ मार्गका

अनुसरण करना है उसे चाहिये कि वह वैराग्यका अभ्यास करे। मनुष्यके मनमें वैराग्य-भाग जगानेका कार्य शनिका है। मनुष्यको त्रिविधतापोंसे संत्रस्त कर आपही उसे भगवान्‌की याद दिलाते हैं।

The Saturn

He is pre-eminently The Reaper, and all experiences that fall under Saturn's sway are deeply engraven upon the soul. Of him it may be said, He bringeth all humanity to their knees, he is the chastener, the subduer, and scourgeth every mother's son that he receiveth.

He causes the rain of tears which, falling from a heart oppressed by the bitterness of grief or anguish (let it take what form it may), at learst thrusts the soul from the external conditions of everyday life into its own innermost sanctuary, in which it seeks to solve the mystery and purpose of life.

The power of sympathy is evolved by Saturn through the experience of pain; thus moral growth with its accompanying conscientiousness, is due to his influence; for every painful experience that the soul undergoes is but the slow producer of greater rectitude and morality in the future. Saturn is the great planet of perfectness. In his sight there is nothing small nor is there anything great; he waits with patience for the perfecting of man's inner growth. He tests and tries each human heart, and thus has been called the great Tempter: but without that temptation the soul could never become firm, sure or mighty, and it has been said that when the soul is strong enough to resist the temptation that Saturn throws across its path the god himself rejoiceth.

In studying the influence of Saturn we meet with many paradoxes. It causes very great pride, and so, by the pain of a fall, produces the virtue humility. It has within it a dual nature. Truth and Delusion, the genuine and the counterfeit, yet ever gives that inner reality which alone makes self-consciousness possible. If able to deceive others, itself it cannot deceive; if critical with others it is also self- critical, for it is seeking the truth. Thus the pain, and the darkness, and oft times the poverty of the life is the means by which the animal nature is subdued, chastened and purified. For Saturn rules as king over the senses, and if the scope of his influence be merely justice and truth, rather than love faith or devotion, nevertheless it gives that genuineness and absence of artificiality which prevent hypocrisy and self-deception.

Saturn gives the power to concentrate, to reflect, to meditate. And if he causes experiences that are painful rather than pleasurable, yet when we remember that wisdom is born of pain, then shall we look with different eyes upon the mission of Saturn, the Subduer, who if a stern taskmaster is yet a friend in disguise. His mission is to draw the soul by means of matter out of matter, by means of sorrow out of sorrow, by means of pain to that Peace which passeth all understanding. He causes the soul to become self-reliant to dare to stand alone by the bracing influences of trouble and sorrow leaving to the other Sons of the Father the shedding forth of joy bliss and pleasure. A powerful influence indeed is his, deep, silent, strong, calm and gentle, taking the soul into the darkness where alone can be heard the still small voice of the Divine.

But Saturn mighty and profound Minister of the Darkness, works with a deeper love to chasten and to subdue to awaken the sleeping Inner one because he knows that in the hour of the deepest woe he is bringing the light of the Father near to the soul.

शनिका स्वरुप इस प्रकारका है। मनुष्यको भगवान्‌का याद दिलाना एक कठिन कार्य है, इसीलिये शनि मनुष्यमात्रको विविध आपदाओं विपदाओंसे जर्जर कर देते हैं। इसकी प्रतिक्रिया यही होती है कि मनुष्यके मनमें वैराग्य-भाव उत्पन्न होते हैं और इस प्रकार मनुष्य का संत्रस्त हृदय परमेश्वरकी शरण लेता है। इस तरह हम देखते हैं की शनि दयाशील, करुणानिधी और मनुष्यको मनुष्यत्व प्राप्त करानेवाले हैं। सारे ग्रहोंमें शनिके समान कोई भी दूसरा ग्रह ऐसा नहीं है जो कि मनुष्यको वैराग्यके प्रति ले जाता हो।

अगले परिच्छेदमें "मोक्ष" के विषयमें विचार करेंगे।

परिच्छेद सातवाँ

मोक्ष (ज्ञान) राहु ।

"नही मोक्षस्य वासोऽस्ति नग्रामान्तरमेववा ।
अज्ञानहृदयग्रंथीनाशो स मोक्ष इति स्मृत ः॥ "

शिवजी प्रभु श्रीरामचन्द्रजीसे कहते हैं कि मोक्षकी कोई ऐसी बस्ती नहीं है कि एक स्थान छोड़कर दूसरे स्थानमें जा सके; जिस तरह लोग एक गाँवको छोड़कर दूसरे ग्राममें जाते हैं ।

आत्मा जीव स्वभावसे कहता है—" यह घर मेरा है, ये बाल-बच्चे मेरे हैं, यह औरत मेरी है"। मायाके मोहवश होकर आत्मा जीवस्वरूप होता है। इस अज्ञान रूपी अंधकारको दूरकर " मैं ही आत्मा हूँ, ब्रह्म हूँ, ईश्वर हूँ " इस प्रकारका ज्ञान आत्माको देकर उसमें स्वरूप जाग्रत कराना ही मोक्ष कहलाता है ।

मनुष्यमात्रके आत्मा पर अनेक जन्म-जन्मान्तरसे एक विशिष्ट प्रकारका संस्कार होते आया है। जब सृष्टिमें मनुष्यका जन्म हुवा तब वह स्त्रीके आधीन हुवा और मायामोहके वशीभूत होकर अपना मूल स्वरूप भूल गया एवं प्रापंचिक बातोंमें आसक्त हो गया। इसका परिणाम यह हुवा कि उसके मनमें यह अभिमान जाग्रत हुवा कि " यह सारा प्रपंच मेरा हैं, घरबार और बालबच्चे मेरे हैं, मैं ही मालिक हूँ, मैं ही सब कुछ हूँ "। कई जन्मके कारण इस अभिमानकी जड़ मनुष्य के मनमें इतनी पक्की हो गयी है कि उसको निर्मूल करना बड़ाही कठिन है। महाराष्ट्रके सुपरिचित स्वामी श्री समर्थ रामदासजीने

अपने "मनाचे श्लोक (मनके श्लोक) में लिखा है—"जेणें मक्षिका माक्षिली जाणिवेची। तया भोजनाची रुचि प्राप्त कैंची॥ अहंभाव ज्या मानसीचा विरेना। तया ज्ञान हे अन्न पोटी जिरेना॥ इस श्लोकका भावार्थ यह है कि जिस प्रकारसे भोजनके साथ पेटमें मक्खी जानेके कारण अन्न नहीं पचता उसी प्रकार मनमें अहंभाव उत्पन्न होनेके कारण ज्ञान रूपी अन्न भी नहीं पच पाता। मनुष्य स्वभाव ही ऐसा है कि सारे प्रपंच का त्याग करनेके लिये पर्याप्त मनोबल उसके पास नहीं होता। ऐसी अवस्थामें उसके मनमेंसे अहंभाव कैसे जा सकते हैं? यही कारण है कि भगवानने सांसारिक जीवन दुखमय बना दिया है ताकि मानव-प्राणी ठोकरें खा खाकर आखिरमें उसकी शरणमें आवे। एक आंग्ल महिला लिखतीं हैं—

When a great sorrow falls upon one; when the face that lightened all the world lies cold in death and life seems now to have on longer any attraction; then, driven in upon itself, unable to find any comfort in the outside world, despairing soul is led to seek, perhaps for the first time, the hidden God within **Standing amidst the ruins of the fife and surveying the scene of hopeless desolation, it is led to ask—what does it all mean ? What is the purpose of life ? What am I hear for ? CAN there really be a GOD at all .... That man or woman has begun a search for the self, has touched the reality of his or her ywn nature and that is the moment of the Soul's awakening.**

Planetery Influence.
by–Bassie Leo.

इस प्रकार आत्मज्ञान (Self-realization) प्राप्त होने पर मनुष्य सर्व प्रकारके सांसारिक दुःखों तथा झंझटोंसे विमुक्त हो जाता

है। इसीको 'मोक्ष' प्राप्त करना कहते हैं। जिस प्रकारसे किसी भी सरकारी कर्मचारीको सरकारी नौकरी पूरी करनेके बाद पेन्शन मिलती है उसी प्रकार सांसारिक नौकरी पूरी करनेके उपरान्त मनुष्यको ईश्वर मोक्ष रूपी पेन्शन देता है। राहू मोक्षका अधिकारी ग्रह है। पाश्चात्य ज्योतिषियोंके मतसे अधिकारी ग्रह हर्षल है; परन्तु मैं इस मतसे सहमत नहीं हूँ।

अगले परिच्छेदमें "पुनर्जन्म और पूर्वजन्म" के विषयमें चर्चा करेंगे।

परिच्छेद आठवाँ

पूर्वजन्म—पुनर्जन्म (शनि और चन्द्र)

"I (writer Alen Leo) believe that **character is destiny** and that we, in our Past lives. have woven the web of destiny by our own thinking, and thus today are weaving the web of our future horoscope. All sin is a result of ignorance or non-knowledge, therefore to **know** ourselves is to become wise and thus to master fate, All fate, good or evil, is made originally by our thoughts and actions and has its roots in our **character.** therefore I believe that character is destiny and that during this life we must work to develope our characters. In the far future we are destined to take an active part in the management of the world's evolution, and to this end we should fit ourselves, for eventually we must become perfect.

Key to your own nativity—
page 232--39 by Alen Leo-

पूर्वजन्म और पुनर्जन्म एक विवादास्पद प्रश्न है और इसका अभीतक कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिल सका है। इस वादमें दो पक्ष हैं— एक पक्ष पूर्वजन्म मानता है और दूसरा इस पर विश्वास करने के लिये तैयार नहीं। पूर्वजन्मको माननेवाले अपने कथनकी पुष्टिके लिये कोई प्रत्यक्ष प्रमाण पेश नहीं कर सकते; ग्रन्थोंके आधार पर ही वे पूर्वजन्मको सिद्ध करनेकी चेष्टा करते हैं। परन्तु इससे विरुद्ध पक्षका समाधान नहीं हो पाता। मेरी समझमें पूर्वजन्मका ज्ञान अतीन्द्रिय

तथा योगबलयुक्त बुद्धिवादकी सहायतासे हुवा है। इसीलिये पूर्वजन्मका पुरस्कार करनेवाला पक्ष प्रत्यक्ष प्रमाण (eye-witness) देकर अपने कथनकी पुष्टि करनेमें असमर्थ होता है। मैं तो पूर्वजन्म व पुनर्जन्म माननेवाला हूँ; अतएव जन्म परम्पराको सिद्ध करनेकी चेष्टा करूंगा। परन्तु इसके पहले जन्म परम्परा कैसे निर्माण होती है, किन साधनोंसे निर्माण होती है आदि बातोंका विचार करना ठीक होगा।

जो लोग यह मानते हैं कि मानव-प्राणीको जन्म परम्परा भोगनी ही पड़ती है, वे लोग यह भी मानते हैं कि जन्मपरम्पराका कारण वासना है। अब यह देखना चाहिये कि वासना कैसे पैदा होती है? वासना उत्पन्न होती है आशा से, आशा निर्माण होती है इच्छा से, इच्छा पैदा होती है कल्पना से और कल्पना पैदा होती है नेत्रसे, संकल्पविकल्प मनसे और वासना जीवात्मासे पैदा होती है।

कल्पना (Idea) (इस पर चन्द्रमाका असर होता है) आपने समुद्र या नदी देखी होगी। समुद्रके पानीकी लहरें किनारों पर सावेग आकर टकराती हैं और फेनिल-से तुषार-कण ऊपर की ओर उड़ते हुए दिखाई देते हैं। हमारे मन-रूपी समुद्रमें भी इसी तरह विचारकी तरङ्गे उठती हैं और विलीन होती हैं। इसको हम कल्पना कहते हैं। कभी कभी यह कल्पना लघुलहरोंके समान क्षणभङ्गुर भी होती हैं। उदाहरणके लिये 'अ' मार्गमें किसी कमनीय युवतीके सौन्दर्यकी मनोहारिता देखकर लुब्ध हो जाता है जिसके कारण उसके हृदयमें विचार तरङ्गे उठती हैं। कुछ समयके बाद अन्य कार्योंकी झंझटोंमें फंसने पर वह यह घटना भूल जाता है। उपरकी कल्पना नेत्र से हुई।

इच्छा (Desire) (इस पर मंगलका असर होता है). उपरोक्त उदाहरणका विस्तार करनेसे हम देखते हैं कि यदि 'अ' की नजरों

में वह युवती सतत आवे तो 'अ' के मनकी प्रवृत्ति उस युवतीको पानेकी अभिलाषाकी ओर सावेग बढ़ती है। इसीको हम इच्छा या अभिलाषा कहते हैं। इस तरह कल्पनाका रूपान्तर इच्छामें होता है।

आशा (To Covet) (इस पर गुरुका असर होता है) उपरोक्त उदाहरणमें हम यह देखते हैं कि 'अ' के मनमें उस युवती को पानेकी तीव्र अभिलाषा उत्पन्न होती है। फिर वह उस युवतीका रातदिन चिन्तन करने लगता है; लेकिन उसे अपनानेके लिये तनिक भी प्रयत्न नहीं करता।

वासना (To long for) (इस पर शनिका प्रभाव होता है) क्रमशः उसका हृदय उस स्त्रीके केवल चिन्तनमें ही सन्तोष न मानकर उसे पानेकी चेष्टा भी करता है लेकिन उसकी लाख कोशिशें बेकार जाती हैं। बेचारा कामज्वरसे पीड़ित होता है। दुनियाकी कोई भी बातें उसे दिलचस्प नहीं मालूम पड़तीं। रातदिन उसका दिल खोया–सा रहता है। आखिर परिणाम यह होता है कि बेचारा उस स्त्रीको पानेकी वासना लेकर ही अपनी आखरी सांस छोड़ता है। इस जन्ममें उस स्त्रीको पानेकी विफल वासना अतिप्रबल होनेके कारण वह दूसरा जन्म लेता है और उस स्त्रीको प्राप्त करता है। बलवती वासनाका यही प्रभाव है। इसी वासनाके कारण जन्म-मरण की परम्परा बंध-सी जाती है।

वासनाका प्रभाव कितना प्रबल होता है यह सिद्ध करनेके लिये मैं एक उदाहरण देता हूँ:— पुरुष और स्त्री समाजमें एक विशिष्ट प्रकारकी क्रिया अखंडित रीतिसे हजारों सालोंसे चली आ रही है। वह क्रिया है स्त्रीसे पुरुष होना और पुरुषसे स्त्री होना। यह क्रिया बिना शस्त्रक्रिया (Operation) से हो रही है। इस बातका

प्रमाण देनेके लिये हम क्लीब पुरुष या स्त्री (Eunuch) का उदाहरण देते हैं। ये कैसे पैदा होते हैं, किस लिये पैदा होते हैं, इसमें उनके मातापिताका कुछ दोष होता है अथवा नहीं ? आदि बातोंका सूक्ष्म विचार करना जरूरी है। हमारे वेदान्तमें लिखा है कि यदि स्त्री और पुरुषके रज और वीर्य दोनों सम प्रमाणमें गर्भमें प्रवेश करे तो क्लीब पैदा होते हैं। हम इस विचारसे सहमत नहीं हैं क्योंकि इस क्लीबके अन्य भाई या बहन पूर्णतः स्त्री या पुरुष होते हैं। दूसरा कारण यह बतलाया गया है कि माताके मनमें किसी प्रकारका भय या आशंका होनेसे क्लीब पैदा होते हैं। इस मतके भी हम अनुकूल नहीं हैं। शरीरशास्त्रकी दृष्टिसे देखा जाय तो दोनों माता-पितामें कुछ भी दोष नहीं है ऐसा जान पड़ता है। फिर दोष किसका है ? पुनर्जन्म लेनेवाले क्लीबका ही है।

अब हम क्लीब कैसे पैदा होते हैं इसका विचार करेंगे।

किसी भी पूर्व पौरुषत्व लेकर पुरुष देहमें पैदा हुए। पुरुषका भावात्मक या धनात्मक (Positive) गुणधर्म है स्त्रीको भोगना। पुरुषका स्त्रीको भोगना तथा स्त्रीका पुरुषको भोग देना ये दोनों गुणधर्म भावात्मक होते हैं। दूसरी एक बात निश्चित हो जाती है कि पुरुषका पौरुषत्व तथा स्त्रीका स्त्रीत्व दोनों भावात्मक हैं। ठीक इसके विपरीत पुरुषमें स्त्रीके गुणधर्म तथा स्त्रीमें पुरुषके गुणधर्म पाये जाना अभावात्मक या ऋणात्मक स्वभाव (Negative) के अन्तर्गत आता है। जब कोई भी पुरुष या स्त्री अपने भावात्मक स्वभावको भूलकर अभावात्मक स्वभावका हमेशा विचार करे तो उसका अर्थ यही होगा कि वह (पुरुष या स्त्री) अभावात्मक गुणधर्म की ओर बढ़ रहे हैं। कोई भी विवाहित पुरुष अपनी पत्नीसे वार्तालाप करते समय यदि हमेशा यही कहे कि

'स्त्रीका जन्म बहुत ही अच्छा होता है; किसी भी बातकी चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं होती '—आदि, तो एक अवस्था ऐसी आती है कि स्त्रीके जन्म पानेकी अभिलाषा उसके हृदयमें अपना पक्का घर बना लेती है। अपने जीवनके अन्त तक यदि, उसके विचार इसी दिशामें बहते रहे तो मृत्युके बाद वह स्त्री जन्म लेनेके लिये जो पथ है उसका अनुसरण करने लगता है। फिर वह भविष्यमें क्रमशः क्लीबका जन्म लेता है। क्लीबके जन्मका इतिहास इस प्रकारका है। इसी तरह फिर इच्छा, आशा इस क्रमसे बढ़ते बढ़ते उसमें स्त्री-जन्म लेने की प्रबल वासना पैदा होती है और अन्तमें वह पूर्णरूपेण स्त्री जन्म लेता है। पूर्ण स्त्रीत्वको प्राप्त होते तककी अवधिमें कई प्रकारके क्लीबके जन्म ऐसे पुरुषको लेने पड़ते हैं।

(१) स्त्री-जन्म पानेकी तीव्र अभिलाषा लेकर ही मृत्यु होनेके बाद पुरुष पुनः पुरुषका जन्म लेता है। विवाहबद्ध होकर स्त्रीसे संभोग करता है लेकिन स्त्री-संभोगसे उसे आनन्द नहीं होता। उसका मन पुरुष संभोगके लिये लालायित रहता है। पुरुष संभोग (Sodomy) की यह इच्छा दिन प्रतिदिन तीव्रतर होते जाती है। इस इच्छाकी प्रबलता का अर्थ है कि पुरुषत्वके भावात्मक गुणधर्मोंके एक कदम नीचे आता है। इस प्रकारके पुरुषमें पुरुष-बीजकोष (Male Ovaries) कम ताकदवर होती है और स्त्री-बीज कोष (female ovaries) अधिक ताकदवर होती है। इस तरहकी इच्छा रखते हुए उसकी मृत्यु होती है।

(२) उपरिनिर्दिष्ट इच्छा लेकर ही पुनः वह पुरुष देहमें जन्म लेता है और विवाह करता है। उसके मनमें पुरुष-संभोगकी इच्छा प्रबल होने के कारण तथा पुरुष-बीजकोष कम ताकदवर होनेके कारण वह अपनी

स्त्रीको न तो संभोग-सुख ही दे सकता है और न तो स्वयं ही संतुष्ट होता है। बल्कि कोई अन्य पुरुष उसकी स्त्रीसे संभोग करे तो उसको देखकर ही उसे अधिक आनन्द प्राप्त होता है। इस जन्ममें पुरुष संभोगकी इच्छा अधूरी ही रह जाती है और इसीलिये क्रमशः उग्र-स्वरूप धारण करते जाती है। यह दूसरी अवस्था भावात्मक स्वभावके एक कदम नीचे की है।

(३) इस अवस्थामें वह फिरसे पुरुष-देहमें जन्म लेता है और विवाह करता है। लेकिन स्त्रीको संभोग सुख पूर्णतः नहीं दे सकता इसीलिये अपने घरमें ही किसी दूसरे युवकको अपनी स्त्रीकी संभोग इच्छा पूरी करनेके लिये रख लेता है। रात्रिके समय एक ही शय्या पर संभोग क्रिया चलती है जिसे देखकर वह मन ही मनमें आनन्दका अनुभव करता है। इस जन्ममें उसकी इच्छा 'आशा' में परिणत होती है। वह उस युवकको आलिङ्गन देता है, उसकी गोदमें बैठता है और पुरुष संभोगकी उसकी इच्छा भी अंशतः पुरी होती है। यह तीसरी अवस्था भावात्मक स्वभाव (Positive Nature) के एक कदम नीचे की है।

(४) इस अवस्थामें वह फिरसे पुरुष देह धारण कर जन्म लेता है। परन्तु इस जन्ममें उसका विवाह नहीं हो पाता, अतः उसका स्त्रीसे सम्बन्ध छूट जाता है। दिनभर और रातके दस बजेतक तो यह पूर्ण पुरुष-सा व्यवहार करता है किन्तु रात्रिके दस बजेके बाद वह निरुपयोगी बन जाता है और पुरुष संभोगकी आवश्यकताका अनुभव होता है। उसके शरीरमें स्त्रीकी कोमलता व नाजनखरे आने लगते हैं। नितम्ब-भाग पुष्ट बनने लगता है। लिङ्ग लम्बाईमें केवल २ या २॥ अंगुलीका ही होता है। वक्षस्थल उन्नतसे जान पड़ते हैं और आवाजमें

स्त्रीकी मृदुता आ जाती है। पुरुष-बीजकोष (Male ovaries) बहुत ही कम ताकद्वर होते हैं और स्त्री-बीज कोष (female-ovaries) की ताकत बढ़ते जाती है। इस जन्मसे शरीरमें क्रमशः परिवर्तन होना प्रारम्भ हो जाता है। यह चौथी अवस्था है और भावात्मक स्वभावसे एक कदम निम्न श्रेणीकी है।

(५) इस अवस्थामें वह फिरसे पुरुष-देह लेकर पैदा होता है। इस प्रकारके क्लीब सर्व साधारण लोगोंमें काफी मशहूर होते हैं। इनके मूछें तो होती हैं किन्तु स्त्रीके समान विपुल केशसंभार होता है तथा इनकी चाल व नजाकत स्त्रीकी सी होती है। इन्हें हंसी, दिल्लगी और छेड़छाड़ बहुत प्रिय होती है। मनचले नौजवानोंकी टोलीके सदैव साथ रहनेमें इन्हें बहुत आनन्द आता है। कभी कभी स्त्री-वेश धारण करनेका इन्हें शौक होता है। इस प्रकारसे स्त्रीके संपूर्ण गुणधर्म इनमें धीरे धीरे आने लगते हैं (This is the bridge between male and female birth) यह पाँचवी अवस्था होती है जिसमें वह भावात्मक स्वभावका पूर्ण त्याग कर देता है। अभीतक ऐसी अवस्था थी कि देह पुरुषका होता था और विचार स्त्रीके समान होते थे। उसी तरह मुख नीचेकी ओर था किन्तु अब इस जन्मसे मुँह स्त्री सदृश ऊपरकी ओर हो जाता है। इस जन्मसे पुरुष—संभोग की इच्छा तीव्रतर होते जाती है।

(६) इस अवस्थामें वह 'अर्धनारीनटेश्वर'—आधा शरीर स्त्रीका व आधा पुरुषका—इस रूपमें पैदा होता है। साड़ी पहिनने लगता है, लम्बे बाल रखता है। वक्षस्थल उन्नत होता है। लिंग लम्बाईमें छोटा होता है। मूंछे साफ करता है। शरीरमें मृदुता व नाज नजाकत आती है। आवाज स्त्रीकी सी जान पड़ती है। इस तरह पूर्ण स्त्रीके

लक्षण इस प्रकारके क्लीबमें धीरे धीरे आने लगते हैं। यह छठवीं अवस्था है जिसमें वह स्त्री–जन्म पानेके मार्गकी ओर एक कदम और आगे बढ़ता है। पुरुष–संभोगकी इच्छा अति तीव्र होती है। स्त्री–बीज–कोष (female ovaries) की ताकत बहुत ही बढ़ जाती है।

(७) इस अवस्थामें आधा पुरुष और आधी स्त्रीका रूप लेकर वह पैदा होता है। और उसमें सम्पूर्ण स्त्रीके गुणधर्म पाये जाते हैं। गांभीर्य आने लगता है तथा शरीरमें मृदुता व खूबसूरती आने लगती है। वक्षस्थल स्पष्टतया उन्नत जान पड़ता है। मूछोंका लोप होता है और नयन तेजस्वी दिखाई देते हैं। गर्भाशय भी उत्पन्न होता है परन्तु उसमें आकर्षण शक्ति नहीं होती। ऋतुस्राव भी शुरू हो जाता है। स्तनोंमें दूध नहीं होता। पुरुषकी गुह्येन्द्रिय भी गुप्त हो जाती है; केवल मूत्र द्वार बच जाता है। यह सातवी अवस्था है और अभावात्मक स्वभाव (Negative Nature) की ओर ये दो कदम आगे बढ़ गई है इस अवस्थामें भी पुरुष संभोगकी लालसा प्रबल रहती है।

(८) इस अवस्थामें पुरुषका स्वरूप अदृश्य होकर उसकी जगह स्त्रीका स्वरूप प्राप्त होता है जोकि सम्पूर्ण स्त्रीका सा प्रतीत होता है। स्तनका पूरा पूरा विकास होता है लेकिन उसमें दूध नहीं पैदा होता योनिका भी पूर्ण विकास होता है। गर्भाशयकी पूर्ण वृद्धि होती है लेकिन उसमें आकर्षण शक्ति उत्पन्न नहीं होती जिसके कारण गर्भोत्पादक जन्तु नहीं रह पाते। नयन बहुत ही तेजस्वी होते हैं। सारे अवयवोंका सम्पूर्णतया विकास होता है। फिर वह स्त्री विवाह कर लेती है। पुरुष–संभोगकी इच्छा प्रबल बनी रहनेके कारण एक पुरुषसे संभोगकी प्यास तृप्त नहीं होती इसलिये एक रात्रिमें अनेक पुरुषोंके साथ संभोग करनेमें उसे बहुत आनन्द आता है। इसके कारण शरीर

में से एक विशिष्ट दुर्गंध आने लगती है कभी कभी मेंढ्र पर उलटे बाल होते हैं। कई पुरूषोंसे संभोग सुख लूटते लूटते आयुके पैतालीस साल बीत जाते है। फिर अन्य स्त्रियोंके बालबच्चोंको देखकर उसके भी हृदयमें सन्तानकी अभिलाषा जाग्रत होती है। यह आठवी अवस्था है और अभावात्मक स्वभावकी ओर एक कदम आगे बढ़ गई हैं।

(९) इस अवस्थामें सम्पूर्ण स्त्री-रूप प्राप्त होता है। जीवनके अन्ततक सन्तानकी लालसा तीव्र बनी रहनेके कारण वह पूर्णरूपेण प्रबल होती है किन्तु दैवी, दानवी व मानवी प्रयत्न करने पर भी सन्तान प्राप्त करनेकी अभिलाषा पूरी नहीं हो पाती। क्योंकि गर्भोत्पादक जन्तु निर्माण होते है किन्तु गर्भधारण करनेकी शक्ति उसमें नहीं होती। अधिक पुरुष संभोग करनेकी इच्छा लुप्त होती है। इसके बाद सम्पूर्ण स्त्रीका जन्म होता है। इस जन्ममें स्त्री योनिके भावात्मक स्वभाव [Positive nature of the female sex] का सम्पूर्ण विकास होता है। बादमें वह किसी पुरुषसे विवाह कर लेती है और उसको सन्तान पैदा होती हैं।

इस प्रकारसे हम देखते हैं कि पुरुष क्रम क्रमसे स्त्री जन्म प्राप्तके होता है। इसी रीतिसे स्त्रीको भी क्रमा-नुसार पुरुष जन्म प्राप्त होता है। वात्सायनने अपने कामसूत्रमें क्लीबके दो प्रकार बतलाये हैं—"स्त्री रूपिणी पुरुषरूपिणी द्वेच"। इसके सिवाय एक तीसरे प्रकारके क्लीब होते हैं जिन्हे स्त्री और पुरुष दोनोंके गुह्येन्द्रिय होते हैं। इन्हें अंग्रेजीमें Hermaphrodite कहते हैं। मुसलमान समाजमें कृत्रिम (Castrated) क्लीब (मेहरे) होते हैं।

उपरोक्त विस्तृत चर्चाके कारण पाठकोंको यह विदित होगा कि मनुष्यके हृदयमें किस तरह क्रम क्रमसे कल्पनासे इच्छा, इच्छासे

आशा और आशासे वासना निर्माण होती है और इसी वासनाके कारण किस प्रकारसे जन्मपरम्परा उत्पन्न होती है । जो पुर्वजन्म और पूनर्जन्म के खिलाफ हैं, उनसे मेरा सवाल यही है कि क्लीबके जन्मका कारण क्या है, और पुरुष देहमें सम्पूर्ण स्त्रीके गुणधर्म पाये जानेका क्या कारण है ?

शनि पूर्वजन्मका दिग्दर्शक है और चन्द्र पुनर्जन्म का ।

आगामी परिच्छेदमें "द्वैताद्वैत विचार" के बारेमें कुछ चर्चा करेंगे.

परिच्छेद नववाँ

द्वैताद्वैत विचार (रवि चन्द्र युति और प्रतियोग)

" प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्धयनादी उभावपि ।
विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसंभवान् ॥

अर्थात् " प्रकृति अर्थात् त्रिगुणमयी मेरी माया और परमात्मा अर्थात् क्षेत्रज्ञ, इन दोनोंको ही तूं अनादि जान और राग द्वेषादि विकारोंको तथा त्रिगुणात्मक संपूर्ण पदार्थोंको भी प्रकृतिसे ही उत्पन्न हुए जान "

द्वैतवाद आर अद्वैतवाद पर इस देशमें काफी चर्वित-चर्वण हुआ है और फलतः कई पंथ बने हैं । कोई अद्वैतवादी हैं तो कोई द्वैतवादी इसकी उत्पत्ति, स्थिति और लय करनेवाला परमेश्वर एक है या दो यह वाद किस प्रकारसे प्रारम्भ हुवा यह दिग्दर्शित करनेके लिये हम एक उदाहरण देते हैं । किसी गाँवमें एक बहुत ही अमीर आदमी रहता था । उसको एक पत्नी थी और एक लड़का । उसके घरमें कई लोग आते जाते थे । एक दिन एक आदमी उसके यहाँ जाकर देखता है कि घरमें लड़का व उसकी मा उपस्थित है । उसने विचार किया कि जब लड़का आंखों के सामने आता है तब उसकी माका अस्तित्व भी जान पड़ता है । घर बार चलानेके लिये पत्नी और लड़केकी आवश्यकता होती है । लड़केका अस्तित्व मा-बापके अस्तित्वको सिद्ध करता है । इस प्रकार के विचार उस आदमीके मनमें आये जिसका प्रतिबिम्ब, " ब्रह्म सत्यं जगत् सत्यं । जीवो ब्रह्म सनातनः " इस श्लोकमें पड़ा हुवा है । यहाँसे

ही द्वैतवादका प्रारम्भ हुवा हैं। एक दूसरा आदमी उस अमीरके घर उससे मिलनेके लिये गया तो उसने भी लड़केको तथा उसकी माँको देखा। उसके भी मनमें विचारोंको गति मिली। वह अमीरके घर गया तो किसलिये गया? यदि वह घर-मालिकसे मिलने गया तो फिर गृह-स्वामिनीका विचार करना क्या युक्तिसंगत है? सच पूछा जाय तो घरका मालिक और उसकी पत्नी दोनों एक ही हैं। इस तरहके विचार उसके मनमें उठते रहे और उसने अपने विचारोंको 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या। जीवो ब्रह्मैव नापरः" इस श्लोकमें प्रगट किया। जिसका अर्थ है ब्रह्म सत्य है और जगत् मिथ्या, ब्रह्मके सिवाय कोई दूसरा जीव नहीं है। वैसे देखा जाय तो दोनोंका ही कहना कुछ अंशोंमें सत्य ही क्योंकि दोनों यह मानते हैं कि ब्रह्म सत्य है। विवादग्रस्त प्रश्न तो यह है कि माया सत्य है या असत्य, जीव सत्य है अथवा असत्य? इसको स्पष्ट करनेके लिये हम उदाहरण देते हैं:—

आपने डीजलॅन्टर्न या फिलिप्स का इलेक्ट्रिक बल्ब देखा ही होगा जरा सोचिये तो लेन्टर्न प्रकाशके लिये है या प्रकाश लेन्टर्नके लिये है? इसका स्पष्ट उत्तर यही है कि लेन्टर्न प्रकाशके लिये है न कि प्रकाश लेन्टर्नके लिये। इस प्रकार हम देखते हैं कि इसमें 'प्रकाश' ही प्रधान है न कि लेन्टर्न। अब यहाँ निम्न प्रश्न उपस्थित होते हैं:— (१) लेन्टर्न सत्य या असत्य? (२) लेन्टर्न प्रथम या प्रकाश प्रथम? लेन्टर्नका जो टिनका भाग चर्मचक्षु गोचर होता है वही मुझे सत्य जान पड़ता है।

मानवी शरीरके टुकड़े बनाकर यदि उनको खूब पीसा जावे उनके Atom (अणु) और Ions प्राप्त होते है। इन Atoms और Ions को पीसनेसे अन्तमें केवल बिन्दू रह जाता है। सर

ऑलीव्हर लॉजने अपने ग्रंथमें होमिओपॅथिक तत्व पर विचार प्रदर्शित करते हुवा कहा है "That the ultimate divisibility of matter dose not stop at the atom but they atoms can be and are divisible even under influence of differnt coloured light and the fragments become electrons and ions which are radio-active and are basis of electric energy and as the number of broken atoms is increased the dynamic energy will be increased. "हमारे वेदान्तमें लिखा है" सर्व बिन्दुमय जगत। भूमितिशास्त्र (geometry) का पहला सिद्धान्त है— ' Point has got no magnitude ' बिन्दू ब्रम्हका एक हिस्सा है जोकि तेजस्वी, प्रकाशमान और गतिमान होता है। इस सृष्टीमें परिवर्तन होते होते जब अन्तमें वह बिन्दुमय हो जाती है तब हम उसे महाप्रलय कहते हैं। उदाहरण के लिये अपने शरीरको ही देखिये : अपना शरीर पैदा होता है और बादमें नष्ट हो जाता है।

हम एक और उदाहरण देते हैं। आपने किटसन लाईटका लॅम्प देखा ही होगा ! इसका प्रकाश अतिशान्त तथा तेज होता है। इसके सम्मुख एक छोटासा हेण्ड-लॅम्प (Hand-lamp) लाकर रख दिजीये। अब आप क्या देखते हैं कि हेन्ड लॅम्पका प्रकाश किटसन लाईटके प्रकाशमें विलीन हो गया है। यद्यपि हेन्ड लॅम्पके प्रकाशका कोई स्वतंत्र अस्तित्व जान नहीं पडता तो भी प्रकाश वहां खेलता ही रहता है। हेन्ड लॅम्पको किसी दूसरे कमरेमें ले जाकर रखनेसे कमरा प्रकाशमान हो जाता है। इसी प्रकारसे जीव और परमात्माकी भेंट होने पर जीन परमात्मा में उसीतरह विलीन होता है जिस तरह हेन्ड लॅम्प का प्रकाश किटसन लाईटके प्रकाशमें। यहां इस बातका ध्यान रहे कि जिस प्रकार हेन्ड लॅम्पका प्रकाश किटसन लाईटके प्रकाशमें विलीन होकर भी अपना अस्तित्वको खो नहीं देता उसी तरह परमात्मा

में विलीन होने पर भी जीव अपना जीवत्व खो नहीं देता। अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि हेन्डलॅम्पके प्रकाशको किटसन लाईटके प्रकाशमें चिरंतन विलीन करनेके लिये किन साधनोंसे काम लिया जा सकता है? इसके लिये एक ही सरल मार्ग है और वह यह है कि या तो बत्ती बुझा देना या हेन्डलॅम्पको पूरी तरहसे नष्ट कर देना। आत्मज्ञानके द्वारा ब्रह्मस्थिति व विदेही स्थिती प्राप्त होने पर भी हम देखते हैं कि आत्मा परमात्मामें पूर्णतः विलीन नहीं होने पाता जिसका कारण शरीरका अस्तित्व होता है। इस अस्तित्वको पूर्णतः मिटा देने पर आत्मा परमात्मामें पूर्णतः लीन होता है।

हम एक और उदाहरण देते हैं:—कोई भी नव विवाहित युवक और युवती जब रात्रिके समय अपने कमरेमें परस्पर प्रगाढ आलिंगन करते हैं; तब उनके मनकी क्या अवस्था होती है? दोनोंके मन एक हो जाते हैं, वाणी मौन हो जाती है और श्वाससे श्वास मिलते हैं। इस समय पत्निका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता। वस्तुतः स्त्री और पुरुष दोनोंके गुणधर्म भिन्न भिन्न होते हैं। पुरुष भोक्ता है और स्त्री भोग्य है। इतना होते हुए भी रात्रिक एकान्तमें जब दोनों परस्पर मिलते हैं तब उनका स्वरूप अभिन्न-सा जान पड़ता है। स्त्री माया है, अतः मायाका स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। इसका कारण यह है कि स्त्री और पुरुष दोनोंके शरीर, आत्मा व मन एकही तत्त्वके बने हुए हैं यही अद्वैतवाद है।

अब प्रश्न यह उठता है कि लेन्टर्न प्रथम या प्रकाश प्रथम? वैसे देखा जाय तो लेन्टर्न पहले बनाया जाता है, फिर उसमें तेल डालकर जलाया जाता है और तभी उससे प्रकाश उत्पन्न होता है। इस दृष्टि से लेन्टर्न ही प्रथम है ऐसा कहा जा सकता है। यही द्वैतवाद है। इस सृष्टिकी उत्पत्तिका मूलभूत आधार बिन्दु है। कई बिन्दुओंको मिलकर परमाणुसे परमाणू बनता है और अणुरेणु परमाणुसे पदार्थ निर्माण होता

है। हमारे मांसपिंडसे बने हुए शरीरका मूलभूत आधार रज और वीर्यके दो बिन्दू हैं। उसी प्रकार इस सृष्टिकी उत्पत्ति दो बिन्दूओं से हुई है। बिन्दू परमात्माका एक भाग है। गर्भाशयमें बिन्दू प्रवेश करनेके बाद उससे मांसपिंड बनता है और प्रतिमाह बढ़ते जाता है। मेरी ऐसी धारणा है कि गर्भ बढ़नेकी क्रियाके पीछे चैतन्यशक्ति या परमात्मा है। सृष्टि निर्माण होनेके पहले पुरुषकी उत्पत्ति हुई है और इस पुरुषके वीर्यसे कुछ बिन्दूओंसे सृष्टि निर्माण हुई है। इसको स्पष्ट करनेके लिये मैं एक लौकिक दृष्टांत देता हूँ। मेरा जन्म इस घरमें हुवा है। युवावस्था प्राप्त होनेपर मैंने विवाह कर लिया और दांपत्य जीवन बीताना शुरू कर दिया। युवावस्था तक साथ देकर मेरी पत्नी मेरे वृद्धावस्थामें मुझे छोड़कर चली जाती है। मैं पहले जैसा अकेला था, वैसेही अब भी रह गया हूँ। मेरी स्त्री मेरे युवावस्था और वृद्धावस्थाके बीचमें मेरे जीवनमें आई और कुछ काल तक जीवनका साथ देकर चल बसी। इसी प्रकार सबसे पहले ब्रम्हही था और अंतमें वह अकेले ही रहनेवाला है। यथा वृक्ष निर्माण होनेके लिये सर्व प्रथम जमीनमें फलके बीज डालते हैं। बादमें वृक्ष बढ़ता है और उसको फल आते हैं। यहाँ पर हम यह देखते हैं कि आदि और अन्तमें 'फल' ही है। वृक्ष कुछ काल तक अदृश्य हो जाता है किन्तु फल दृश्य ही रहता है। इसी तरह माया और जीव ब्रम्हके बीचमें होते हैं। इसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता। इस सृष्टिमें जो सत्य है ऐसा हमें भास होता है उसका कारर्ण हमारे चर्मचक्षु हैं। ज्ञान दृष्टिसे देखनेसे सभी बातें असत्य जान पड़ती हैं। इसीलिये आद्य आचार्य शंकराचार्यजीने सृष्टिका ज्ञान दृष्टिसे अवलोकनकर लिखा है- "ब्रम्ह सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रम्हैव नापरः।" एक दूसरे द्वैतवादी आचार्यने चर्मचक्षुसे सृष्टिका अवलोकन कर लिखा है-"ब्रह्म सत्यं जगत सत्यं, जीवो ब्रम्ह सनातनः"

माना कि माया स्वतंत्र है पर वह परब्रम्हसे प्रकाशित है। जीवात्मा और परमात्मा अभिन्न है इसका एक ठोस उदाहरण देता हूँ।

जीवात्मा और परमात्माका एकही स्वरूप है। और एक रूप है ऐसा रह कर जीवात्मा परमात्मासे अलग है ऐसा प्रतीत होता है। ऐसा क्यों प्रतीत होता है इसका मैं एक उदाहरण देता हूँ। आपने बरफ देखा है। यह क्या चीज है? यह पानीसे बनता है। यह दो प्रकारसे बनता है। एक नैसर्गिक और दूसरा कुत्रिम। नैसर्गिक बरफ हिमालयके पहाड़ों पर बनता है और कभी कभी आकाशसे जल धारा वर्षा होती है उस वक्त जल धारामें से बरफ गिरता है। दूसरा कुत्रिम बरफ जलको यंत्रसे बहुत ठंडी हवा बनाकर उस ठंडे हवासे बरफ बनाते हैं। इन दोनों प्रकारका बरफ संस्कारसे होता है। प्रथम प्रकारका नैसर्गिक संस्कार उनपर होता है और दूसरे प्रकारका बरफ यांत्रिक संस्कारसे होता है। इसमें महत्वकी बात तो यह है कि संस्कार होने की। बरफ यह पानीकी चीज होते हुए भी पानीसे अलग मालूम होता है। आप एक कांचका गिलास ले लीजिए। उसमें पानी भर लो और उस पानी में बरफका टुकड़ा डाल दीजिए और ध्यानसे देखिये कि पानीमें वह बरफका टुकड़ा नहीं डूबता। पाठकगण! आप थोड़ासा बिचार करके देखिए कि बरफ असली पानीका होते हुए भी पानी में डुबता नहीं पानीसे अलग है ऐसा नजर आता है। ऐसा कैसा यह होता है। इस पर ऐसा कहा जाता है कि बरफ ये संस्कारसे बनता है। इनमें प्रधान लक्षण "**संस्कार**" है। और आप बिचार करे तो यह मालूम हो जाता है कि असली पानी का बना हुआ चीज पानी मे डुबता नही वस्तुत: पानी और बरफ दोनों एकही चिज है एक ही चीज होकर भी अलगसा मालूम होती है। ऐसा ही जीवात्मा परमात्मा का अंश रहकर हमें अलग मालूम होता है। परमात्मामें डुबता नहीं

लेकिन परमात्मा और जीवात्मा एकही है फिर बरफके मुताबिक जीवात्मा है। कारण यह है कि अनेक जन्म जन्मान्तरोका बरफके तरह इस पर कल्पना वासनाका "संस्कार" का असर हुवा रहता है इसलिये जीवात्मा और परमात्मा हमें अलग मालूम होता है। यही कारण भारतवर्षमें अज्ञान मूल कारण होनेसे द्वैताद्वैतका झगड़ा सुरू होगया लेकिन सारा संसार एक रहनेसे अद्वैत सिद्ध है, यह स्पष्टतया मालूम होता है।

एक बार प्रभु रामचंद्रजीने श्री हनुमानजी से पुछा–" हे पवनसुत! आप कौन हो!" हनुमानजीने उत्तर दिया–" देह दृष्टया तु दासोऽहं। जीव दृष्टया त्वदंश के। आत्मदृष्ट्या त्वमेवाहम्। इति निश्चितम् मतमुत्तम्। हमारा हिन्दू वेदान्त केसरी भी यही गर्जना कर कह रहा है कि अद्वैत ही सत्य है और तुम ब्रह्म हो।

खगोलशास्त्र द्वारा (Astronomically) यह बात सिद्ध हो चुकी है कि चन्द्र की उत्पत्ति रविसे हुई है। रविचंद्र युति अमावस्या अद्वैत के निदर्शक हैं एवं रविचंद्र प्रतियोग पूर्णिमा द्वैत के।

अगले परिच्छेद में हम "ग्रहयोनि भेदाध्याय" की चर्चा करेंगे।

परिच्छेद दसवाँ

ग्रहयोनि भेदाध्याय

रवि (Universal Father) यह काल पुरुषका आत्मा है। सर्व चराचर वस्तुओंमें तथा अणुरेणु परमाणुसे भी परमाणुमें (Electrons और Ions से भी) भरा हुआ है। स्थूल और सूक्ष्म सृष्टि का आधार है। अचिंत्य, अगोचर, वर्ण अत्यंत तेजस्वी "सूर्य कोटिसमप्रभः" शान्त, निम्बूके वर्णके सदृश, पुरुष तत्त्व, इस सृष्टि को गती देनेवाला, ब्रह्मपति, उत्पत्तिकर्ता, बीज।

रविमें दो प्रकारका तेज होता है—एक दृश्य और दूसरा अदृश्य। प्रातःकालसे लेकर संध्याकाल तक अर्थात् सूर्योदयसे सूर्यास्त तक हमें जो तेज दिखाई देता है व हमारे शरीरको जिसकी उष्णता जान पड़ती है वह रविका पहले प्रकारका दृश्य तेज है। रविका दूसरा तेज अदृश्य है और भासमान नहीं है। हमारे हिन्दू धर्मने इस अदृश्य तेजको देखनेके लिये वेदान्त एवं योगमार्ग दर्शाया है। पाश्चात्य देशोंमें इस तेजको देखनेके लिये कोई भी मार्ग नहीं बतलाया गया है। सन १९०० ईसवीमें हॉलेन्डके प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ हेस (Dr. Hess) महोदयको प्रयोगके सिलसिलेमें यह ज्ञात हुवा कि आकाशसे किरणें आती हैं। १९१० साल तक इस दिशामें अधिक खोज करने पर उसने यह सिद्ध किया कि ये किरणें (Cosmic rays) रवि से आती हैं। परन्तु अमेरिका के जगप्रसिद्ध नोबेल प्राईझ प्राप्त महान वैज्ञानिक तथा खगोलज्ञ डॉ. मिलिकनने (Dr. Millikan) डॉ. हेसके सिद्धान्तका खण्डन करते हुए अपने The

Natural History of the cosmic Rays "नामक ग्रन्थमें यह कहा है कि ' जब यह तेज रविसे आता है तब फिर रातके समय नहीं आना चाहिये। जब यह तेज रात्रिको भी दिखाई देता है तो यह अवश्य ही किसी दूसरे स्थानसे आता है। यह स्थान आकाशगंगा है परन्तु डॉक्टर साहाब यहाँ इस बातको भूलते हैं कि रात्रिको रवि नष्ट नहीं होता बल्कि कहीं अदृश्य हो जाता है। यह तेज परब्रह्म है जिसके जानने में पाश्चात्य वैज्ञानिक अभीतक असफल रहे हैं। Alvidas" नामक ज्योतिषीने अपने "Esoteric Astrology" नामक ग्रन्थ में लिखा है–Inner rays of Sun we cannot see by our naked eyes"

चंद्र—(Universal Mother) प्राचीन शास्त्रकारोंने काल पुरुषके राज्यमें चंद्रको रानीका पद दिया है। वेदांतमें माया परब्रह्म की पत्नी मानी गई है। स्त्री स्वयंप्रकाशी न होकर परप्रकाशी होती है। पतिसे प्रकाश और तेज लेकर दूसरोंको प्रकाश देती है। चंद्र की क्षय व वृद्धि उसी तरह एक दिनका पूर्ण होना और एक दिन सम्पूर्ण अस्त होना दृश्य सृष्टिमें ही जान पड़ते हैं। चंद्र अत्यंत चंचल और जीवसृष्टीको पालन करनेवाला ग्रह है। चन्द्रका वेदान्तमें माया कहते हैं। यह ग्रह जीवात्मा भी कहलाता है। स्त्रीतत्व का ग्रह है और रजोगुणी है।

मंगल—शास्त्रकारोंने मंगलको कालपुरुषके राज्यमें सेनानायक के अधिकार दिये हैं। सेनानायक राष्ट्रकी शक्तिका आधार होता है। मानवप्राणीके शरीरमें भी ताकद होती है जिससे वह निरोगी, दीर्घायुषी तथा निर्भय होता है। जिस प्रकारसे मनुष्यके शरीरमें शक्ति होती है उसी प्रकारसे इस दृश्यमान सृष्टिमें भी अपूर्व शक्ति होती है। शक्तिके बिना अखिल सृष्टि हलचल नहीं कर सकती। इसका अर्थ यही है

जहाँ शक्ति होती है वहाँ मंगलका अस्तित्व होता है। मंगल पुरुषतत्व सत्त्वगुण माना गया है। आसन, प्राणायाम, मुद्रादि करनेके लिये इस शक्तिका काफी उपयोग होता है। मंगल मानव-प्राणिका मंगल करनेवाला होता है।

Desire causes all manifestation for without desire no manifestation in matter would be possible. The centre of desire is generation. Mars has been called the planet of generation, the god of Life as expressed in matter and it is exactly this same generative force upturned which is the creative process of spiritual life.

Mars mighty god of generation, mighty monarch of powerl Life that is mortal,and life that is immoratal,are not they both brought about by Desire ?

But in the physical world Mars typifies the great principle of Desire and it is mainly from his kingdom the elemental essence is drawn that builds up the desire-body sometimes called the ' astral ' body, which we each use.

The moving energy and force of the world is brought about by Mars. He is the god of Action, Life, and Motion, as distinguished from reflection,thought,or stillness. He is particularly the agent for transmitting animal life, being the god of generation; while the instinctual consciousness, as manifested apart from any of the processes of thought comes particularly under his vibration, thus force, emotion, and movement are all martial attributes.

That positive will, giving the power of leadership and rulership which must be at the head of things,comes

through Mars; that superb courage which can face death with impunity, that fears no foe, that ever goes forward, self-reliant, independent, confident, is given by Mars.

It is by desire we rise, it is by desire we go forward; indeed, evolution would not be possible at all without the influence of desire; it is for those who are students of the mystical side of Astrology, to be carefnl what they desire for desire brings about its own fulfilment.

बुध—प्राचीन शास्त्रकारोंने कालपुरुषके राज्यमें बुधको युवराज-पद पर नियुक्त किया है। रवि और चंद्रके बीच इसकी स्थिति होती है। पूर्वजन्मके कर्मोंको पुनर्जन्ममें भोगनेके लिये शरीर तैयार करता है। "बुद्धिकर्मानुसारिणी" योगीके हृदयमें इसका निश्चयात्मक निवास होता है। इस बुद्धीके प्रभावसे मनुष्य ईश्वरपदको पाता है। पुरुष-तत्व, नपुंसक नहीं।

गुरु—शास्त्रकारोंने काल पुरुषके राज्यमें गुरुको मंत्रिपद दिया है। गुरु शब्दका अर्थ इस प्रकारका है—गु— अंधेरा (अज्ञान) रु—प्रकाश (ज्ञान)। जिसतरह सूरज अंधेरा विच्छिन्न कर प्रकाश फैलाता है, उसी तरह गुरु हमारे हृदयसे अज्ञान दूर कर ज्ञानरुपी प्रकाश फैलाते हैं। माया और ब्रह्म इनके मध्यमें इसकी स्थिति है। मनुष्य प्राणीके मनमें विवेक रुपमें निवास करता है। अविद्या अस्मिता इत्यादिसे वेष्टित है। गुरु विज्ञानमय कोशका अधिकारी है। पुरुषतत्व, यह ग्रह सम्पाति देनेवाला नहीं है।

शुक्र—शास्त्रकारोंने कालपुरूषके राज्यमें शुक्रको मंत्रिपद पर नियुक्त किया है। परंतु वेदान्त शास्त्रमें योगियोंके लिये यह ग्रह विघ्नकर्ता माना गया है। जब योगी प्रत्याहारकी अवस्थाको प्राप्त होता है तब यह ग्रह योगीको अष्टसिद्धि या स्त्रीके भुलानेमें डालकर

योगविन्मुखकर उन सांसारिक झगडोंमें फँसाना चाहता है। लेकिन यदि योगी सिद्धि या स्त्रीके मोहजालमें फँसनेसे खुदको बचा लेता है तो यही ग्रह योगका सच्चा आनन्द देनेवाला होता है। शुक्र ध्यानावस्था का कारक है तथा आनन्द कोशका अधिकारी है। शुक्रका मूलस्वरूप योगी, तपस्वी, ज्ञानी, विषयत्यागी, आनन्दस्वरूप तथा राजयोगी है। स्त्री स्वरूप माना गया है।

शनि—शास्त्रकारोंने कालपुरुषके राज्यमें शनिको दास नियुक्त किया है। फिर योगिको हृदयमें विवेकरूपमें रहकर सब मोह-जालसे दूर रखनेवाला अदृश्य गुरु है। रात्रिके अंधकारमें दुरबीनके जरियेसे आकाशकी ओर दृष्टि डालनेसे यह ग्रह ईश्वरके लिंगके समान दृग्गोचर होता है। यद्यपि शनि रविका पुत्र माना गया है; उसमें रविके गुणधर्म वर्तमान नहीं हैं। केवल एक ही साधर्म्य है, वह यह कि जिस प्रकार रविके मंगल आदि ग्रह उपग्रह हैं, उसी प्रकार शनिको भी नौ उपग्रह हैं। शनिको काल, यम शंकर आदि नाम दिये गये हैं। सृष्टिका प्रलयकारक, नई सृष्टि निर्माण करनेवाला रुद्र है जिस प्रकारसे रवि उत्पत्ति कर्ता है और चन्द्र सृष्टिका पालनकर्ता उसी तरह शनि संहारकर्ता है। पुरुषतत्वका ग्रह है, नपुसक नहीं।

राहू—प्राचीन शास्त्रकारोंने कालपुरुषके राज्यमें राहूको कोई भी स्थान नहीं दिया हैं। परन्तु आचार्य वराहमिहिरके बाद जो आचार्य हुए हैं उन्होंने इस विषय की ओर कुछ ध्यान दिया है। हमने राहूको कालपुरुषके राज्यमें बड़ेही महत्वका स्थान दिया है। वेदान्त में ॐ (ओंकार) में जो सिरपर अर्धमात्रा है वही मेरी रायमें राहू का स्थान है। सृष्टिमें प्रकृति और पुरुष दोनों निर्माण होनेके पहले "जो कुछ नहीं है महाब्रम्ह" इस महाब्रम्हसे प्रकृति और पुरुष निर्माण

हुए। जब कभी अर्धचन्द्राकृति चन्द्रग्रहण होता है तब हमें जो ग्रहण दिखाई देता है वह अर्धमात्राके समान होता है। इसका अर्थ यही है कि रवि और चंद्र दोनोंका निर्माणकर्ता राहू है। यथा—

श्री. मंत्रेश्वरजीने अपनी 'फलदीपिका' में प्रस्तुत ग्रहका स्वरूप स्त्री-स्वरूप बतलाया है और श्री विलीयम लिलिने (William Lily) इसे पुरुष ग्रह माना है। हम भी इसे पुरुषग्रह मानते हैं।

नेपच्यून—यह एक बिल्कुल ही नया ग्रह है। इसके स्वरूपका सम्पूर्ण आविष्कार पाश्चात्य ग्रन्थोंमें उपलब्ध नहीं है। मेरी समझमें यह ग्रह अति मोहक, गोलाकार, स्त्रीसदृश, मृदु शरीर, नेत्र मदान्ध, मुखपर गूढ हास्य, वाणीमें मिठास, गति एवं वृषभके समान होती है। आचार्य वराह मिहीरने अपने 'बृहज्जातक' में वृषभराशीका जो वर्णन किया है वह इस ग्रहको लागू होता है। प्रस्तुत ग्रह लिंग शरीर और मन पर अधिक प्रभाव डालता है The best looking specimans have better proportions clear complexions, dimples instead of wrinkles and a golden gleam as of sunshine in their hair but actual beauty among the sons and daughters of Neptune is very rare. नेपच्यून संसारका नाश करनेका प्रयत्न करता है और स्त्री सुख नहीं देता।

मैंने यहाँ हर्षलके गुणधर्म अनुभवके अभावमें नहीं दिया है।

ग्रहोंका मूल नैसर्गिक स्वभाव

रवि—अति तेजस्वी, अति उष्ण। तेज बाहर फेंकता है। इस तेज में सभी दबते हैं। जैसे तेज बाहर फेंकता है वैसे ही त्यागी होता है। इसलिये रवि में आकुंचन और प्रसरण (Contraction and expantion) दोनों भी गुणधर्म मौजूद होते हैं। आकाशमें रविका

उदयास्तका कार्य प्रतिदिन नियमपूर्वक चला रहा है। कर्मयोगी अर्थात कर्मके फलकी अपेक्षा या अभिलाषा मनमें नहीं रखना। धैर्यशाली, उच्च विचारों और भावनाओंसे भरा हुवा स्पष्ट और निर्भीक वक्ता, यशस्वी, गंभीर, अपने बुद्धिसामर्थ्यसे दूसरोंका पराभव करनेवाला, सामाजिक कार्योंमें निपुण, निस्वार्थी, लोकहितदक्ष दिखने में कठोर किन्तु हितैषी ऐहिक और प्रापंचिक बातोंके प्रति उदासीन, परोपकारी, मर्मज्ञ स्थिर, कल्पक दूरदर्शी, व्यवहार चतुर, आचार शुद्ध सुधारक (Reformer) हृदय दया और प्रेमसे ओतप्रोत भरा हुवा माया मोहके परे। ये सब रविके नैसर्गिक स्वभाव गुणधर्म हैं। रविके अमलमें पैदा होने वाले साधु सत्पुरुषोंने कोई भी पंथ नहीं चलाया है बल्कि जंगलमें डेरा डालकर एकान्त कुटीरमें जविन बीताया है और मुश्किलसे एकाध शिष्य बनाकर स्वयं समाधिस्थ हुए हैं।

चन्द्र—शुक्ल प्रतिपदासे लेकर पूर्णिमा तक चन्द्र एक एक कलासे बढते जाता है यहाँ तक कि पूर्णिमाको सोलहों कलाओंसे परिपूर्ण होता है। इसी तरह कृष्ण प्रतिपदासे लेकर अमावस्या तक चन्द्र एक एक कलासे क्षीण होते जाता है यहाँ तक कि अमावस्याको पूर्णरुपेण अदृश्य होता है। शुक्ल प्रतिपदासे लेकर अष्टमी तक चन्द्र अति तेजस्वी दिखाई देता है; अष्टमीसे लेकर कृष्ण द्वितिया तक थोड़ा निष्प्रभ होता है। पूर्णिमाको पूर्णबिम्ब होते हुए भी चन्द्र निष्प्रभ दिखलाई देता है। कृष्ण द्वितियासे अमावास्या तक पुनः थोड़ा थोड़ा तेजस्वी दिखाई देता है।

पालन (Preserve) और नाश (Dissolve) ये दोनों गुणधर्म इस ग्रहमें पाये जाते हैं। माया, मोह, चंचलता, अविचार विलासवृत्ति, द्रव्याभिलाषा, प्रापंचिक आसक्ति, आत्मविश्वास, स्त्री-लम्पट

कर्तृत्वहीन, स्वार्थी, अस्थिरता, कल्पनाएँ ऊंची किन्तु व्यवहारमें ला सकने में असमर्थ, अविश्वसनीय, (Unreliable) मृदु, सौम्य व मीठी वाणी, वर्ताव मनःपूतं समाचरेत्, अनियमित, उदार, अपनी डींग हांकनेवाला, बेपरवाह, कोई भी कार्य अधूरा करना, आदि इस ग्रहके नैसर्गिक स्वभाव हैं। जिन साधुसत्पुरुषोंपर चन्द्रका प्रभाव रहता है वे बहुत ही दयालू, सेवातत्पर, परोपकारी व प्रेमी होते हैं। ये कुछ क्षुद्र सिद्धियाँ प्राप्त कर मठ बांधकर अपनी शिष्य परम्परा बढ़ाते हैं। कालान्तर से ये कनक और कामिनीके मोहजालमें फँसकर 'अतोभ्रष्ट ततो भ्रष्टः होते हैं। रवि, शनि, राहू इनके प्रभावमें जो सत्पुरुष पैदा होते हैं, वे ही परमार्थ मार्गमें पूर्णत्वको पहुँचकर मोक्ष प्राप्त करते हैं। चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र इन ग्रहोंके प्रभावमें जो जन्म लेकर परमार्थ मार्गकी ओर जाते हैं वे कनक और कामिनीके मोहजालमें फंसकर परमार्थ मार्गसे च्युत होते हैं। पूर्णावस्थाको पहुंचनेके पहले ही वृद्धावस्थामें अधःपतन होता है। केडगांवकर कै—श्रीमंत नारायण महाराज, और हुबलीके कै. सिद्धारूढ स्वामी महाराज।

मंगल—शास्त्रकारोंने इस ग्रहका वर्णन अग्निके समान उष्ण व रूक्ष ऐसा किया है। इसीलिये इसका स्वभाव उग्र, क्रोधी, साहसी, 'मनःपूतं समाचरेत्' दुराग्रही, दुनियामें न किसी की परवाह करता है, न किसीसे दबता है। दीर्घप्रयत्न वादी, उदार, द्रव्यकी अभिलाषा बिल्कुल नहीं होती। बल्कि द्रव्य मनचाहे खर्च करता है, अधिक सहनशीलता, धर्म से प्रेम नहीं होता, व्यवहारमें सच्चा, साफदिल किन्तु बर्तावमें कडा, वाणीमें कटुता त्यागी, निष्कपटी, अनाथोंका संरक्षण करनेवाला स्नेहके योग्य, परोपकारी, संस्थाओंका स्थापन करना आदि इस ग्रहके नैसर्गिक स्वभाव हैं। इस ग्रहके प्रभावमें जो साधु सत्पुरुष जन्म लेते हैं वे क्रोधी, अभिशाप देनेवाले होते हैं। लोग इनसे बहुत ही डरते हैं।

लेकिन लोग यह नहीं जानते कि यद्यपि इनका बर्ताव तीखा होता है तो भी इनके हृदयमें सारी मनुष्य जातिका कल्याण करनेकी प्रबल भावना होती है। ये आपदाओं व विपदाओंमें लोगोंकी सहायता करने में तत्पर, अपने प्राणोंका मोल देकर अबलाओंके शीलका संरक्षण करनेवाले और स्वदेशाभिमानी होते हैं। इस ग्रहके प्रभावसे महाराष्ट्र के महा संतपुरुष श्री समर्थ रामदास, बंगालके स्वामी विवेकानन्द, पंजाबके गुरु नानक, बंदावीर बैरागी, गुरु तेजसिंह, गुरू गोविंदसिंह, स्वामी दयानन्द सरस्वती, कलकत्तेके बाबा भारती, स्वामी सत्यदेव और स्वामी श्रद्धानन्द आदि पैदा हुए हैं।

बुध—सब ग्रहोंमें यह ग्रह छोटा माना गया है। अपनी बुद्धिपर इसका अमल होता है। अंग्रेज लोग इसको 'winged messenger of the gods' कहते हैं। उन्होंने इसका स्वरूप इस प्रकारका दिया है:—"एक नन्हा २–३ वर्षका मनोहर बालक है और उसको दो पंख हैं। उसके पास एक देवता बैठी है जिसके कानमें वह परमेश्वरका संदेश कह रहा है। उसके हाथमें धनुष्यबाण है"

आपने रेडियो सुना ही होगा? दिल्ली या बम्बईमें गवैया मायक्रोफोनके सामने बैठकर गाता है और आप अपने कमरेमें बैठे बैठे उसका गीत सुनते हैं। आकाशमें विद्युतकण (Electrons) होते हैं जो गतिशील होते हैं। उन प्रवाहोंमें (currents) आवाज ग्रहण कर वह आवाज दुनियाके हरएक कोनेमें पहुंचानेकी शक्ति होती है। पुराणोंमें "आकाशवाणी" का उल्लेख पाया जाता है। सिद्ध-पुरुष तपोबलके द्वारा शरीर और वाणीमें विद्युत् शक्ति उत्पन्न कर उसका तेज बढ़ाते थे। ऐसे दो सिद्ध पुरुष अपने कुटियामें बैठे बैठे आपसमें वार्तालाप कर सकते थे। इनके मुखसे जो वाणी आवाजके रूपमें

निकलती थी वह आकाशमें बिजलीके प्रवाहमें मिलकर इप्सित स्थान पर पहुँचती थी और फिर उसका परिस्फोट होता था। इस आकाशवाणी में और आधुनिक रेडियोमें कोई अन्तर नहीं है। बुध आकाशमें बिजली के प्रवाहसे सन्देश पहुँचानेका कार्य करता है। आकाशमें दुरबीन लगाकर बुधको देखनेसे हमें दिखाई देता है कि चन्द्रकी तरह बुध को भी कलाएँ होती हैं जिनकी क्षय और वृद्धि होती है। मनुष्योंमें भी किसी की बुद्धि प्रखर होती है और किसी क्षीण। जितनी अधिक कलाओंसे मनुष्य युक्त होता है उतनी ही उसकी बुद्धि भी चंचल और बोथल होती है। इस ग्रहके नैसर्गिक स्वभाव निम्न लिखित हैं-सदा प्रफुल्लित, मुखपर हास्य, विनोदयुक्त बचन, वाक्चतुर, सदा आनंदी, उत्साही व्यवहार कुशल और सरल, चालाक, बुद्धिमान, स्वभावसे शान्त, सौम्य किन्तु अहंकारी, दूसरों पर विश्वास रखनेवाले, घरबार की औरसे उदासीन, अध्यात्म की ओर विशेष झुकाव। इस ग्रहके प्रभावसे जो साधुसत्पुरुष जन्म लेते हैं वे पहले क्षुद्र सिद्धियाँ प्राप्त करते हैं और लोगों को फंसाकर पैसा इकठ्ठा करते हैं और खा पीकर मौज उड़ाते रहते हैं। वाक्चतुर होनेके कारण वेदान्त पर प्रवचन और भाषण देते रहते हैं। ये नाममात्रके ही गुरु होते हैं। ये शिष्य बनाते जरूर हैं किन्तु इनसे किसीका भी कल्याण नहीं हो पाता।

गुरुः—सब ग्रहोंमें गुरु बड़ा ग्रह है। यही कारण है कि श्रेष्ठ व ज्ञानी इस अर्थमें हमेशा गुरु शब्दका प्रयोग किया जाता है। गुरु शब्दमें दो शब्द हैं, व एक "गु" और दूसरा "रु"। "गु" का अर्थ है अंधेरा या अज्ञान और "रु" का अर्थ है प्रकाश या ज्ञान-गुरु उसे कहते हैं जोकि हृदयस्थ ईश्वरके विषयमें हमारा अज्ञान दूरकर हम कौन हैं कहाँ से आये हैं, किस जगह जानेवाले हैं तथा हमारे कर्तव्यकर्म क्या हैं आदि प्रश्नोंपर प्रकाश डालता है।

अंग्रेजीमें गुरुको **Divine mother** या **Higher Moon** कहते हैं। स्कूल कॉलेजमें पढ़ानेवाले अध्यापकोंको भी 'गुरु' कहा जाता है। लेकिन ये लोक ऐहीक विषयका ज्ञान प्रदान करते हैं। सद्गुरु उन्हें कहते हैं जो गुह्य ज्ञान प्रदान करते हैं। इनका शिष्योंपर जो प्रेम होता है वह निष्काम होता है। इसीलिये गुरुके प्रेमको सबसे महत्व का स्थान है। गुरुका अपने शिष्योंपर किस प्रकारका प्रेम होना चाहिये इस विषयपर स्वामी विवेकानन्दजीने "My Master" नामक एक ग्रन्थ लिखा है जिसे हरएक को पढ़ना चाहिये। प्राचीन ग्रन्थोंमें यह ग्रह सम्पत्ति देनेवाला बतलाया गया है लेकिन मेरी रायमें यह ग्रह पैसे देनेवाला नहीं है। इस ग्रहका नैसर्गिक स्वभाव परमेश्वर विषयक ज्ञान देना है। शिक्षक और प्राध्यापक भी इसी ग्रहके प्रभावमें आते हैं। बाहरसे रूक्ष किन्तु भीतरसे अतिकोमल, बाहरी रहन सहन मामूली किन्तु बुद्धि कुशाग्र, दिखनेमें नास्तिक किन्तु हृदय भक्तिरससे पूर्ण, पैसेके लिये हाथ फैलानेवाले किन्तु पूर्ण निर्लोभी, संसारमें व्यावहारिक जीवनमें विचित्र बर्ताव लेकिन व्यवहार कुशल, जितना विषयी उतना ही विरागी; इस प्रकारके परस्पर विरोधी स्वभाव गुण इस ग्रहमें पाये जाते हैं।

गुरुकी आवश्यकता क्यों प्रतीत होती है और 'गुरुकृपा' इसका क्या अर्थ होता है? तपोबलके कारण प्राप्त हुए आत्मिक बलसे इनमें एक प्रकारकी विद्युत शक्ति उत्पन्न होती है। यह शक्ति इनके हाथोंमें खेलती रहती है। गुरुका वरदहस्त याने क्या! आत्मज्ञानकी खोजमें कोई किसी देवस्थानमें ईश सेवा करते रहते हैं। परन्तु वह देवता उसे प्रत्यक्ष दर्शन न देकर किसी सत्पुरुषको आदेश देती है कि "मैं मेरे सेवकको भेज रही हूँ उसको तू ज्ञान दे"। जब गुरुको ऐसे सेवक को ज्ञान देना पड़ता है तब वह उसके सिरपर अपना वरदहस्त

रखता है और कानोंमें 'ओम् तत्सत्' कहता है। हमने उपर बतलाया है कि गुरुके हाथमें एक विशिष्ट प्रकारकी विद्युत-शक्ति खेलती है। ऐसा हाथ उसके सिरपर रखनेसे गुरुके हाथमें जो विद्युतशक्ति होती है उसका धक्का उस शिष्यके सुप्तावस्थामें पड़े हुए कुंडलीनीको लगता है और वह जाग उठती है। उस कुंडलीनीसे ज्ञान-प्रवाह शुरु होकर उस शिष्यके सिरमें आता है और वह प्रवाह सिरमें आनेपर शिष्यको 'तूही परब्रह्म है' इसका ज्ञान करा देना पड़ता है। अपने आत्मबल के द्वारा सद्गुरु शिष्यको यह ज्ञान करा देते हैं। यह कार्य हम स्वयं नहीं कर सकते इसीलिये सद्गुरुकी आवश्यकता प्रतीत होती है। सिरपर वरद्हस्त रखकर कुंडलिनीको जगाना और आत्मज्ञानका परिचय करा देना इसीको 'गुरुकृपा' कहते हैं।

इसी ग्रहका रंग पीला होता है इसलिये इस ग्रहके प्रभावमें जन्म लेनेवाले अधिकांश पीले वर्णके होते हैं, शारीरीक दृष्टिसे सुदृढ़ मृदु स्वभाववाले व ज्ञानी होते हैं। ये लोग ज्ञानका प्रसार करनेवाले भक्तिपंथ चलानेवाले व हजारों शिष्य बनाकर भक्तिमार्ग पर लगानेवाले होते हैं। इस ग्रहके अमलमें स्वामी रामतीर्थ चंडीदास, महाराष्ट्रके साधुसन्त, ज्ञानेश्वर, तुकाराम, एकनाथ, जनार्दन स्वामी, निवृत्तिनाथ बरारके गुलाबराव महाराज, कबीर कमाल, गदगके शरीफ साहेब सिशुनाळकर आदि अनेक साधुसन्तोंने जन्म लिया है।

शुक्र—यह ग्रह आकाशमें अति तेजस्वी दिखाई देनेवाला छोटा ग्रह है। पुराणोंमें इसे दैत्योका गुरु माना गया है। इसे संजीवन विद्या विदित थी और यह ज्ञानी है। ज्योतिषशास्त्रमें इसे स्त्री-ग्रह माना है और निसर्ग कुंडलीमें धन और सप्तम इन दोनों मारक स्थानोंका अधिपति माना है। इसीलिये ज्ञान प्राप्तिके बाद यदि किसी

का भय होता है तो स्त्रीका, क्योंकि स्त्री साधु, सत्पुरुष, महात्माओंको परमार्थ मार्गसे विचलित कर फिरसे मायामोहमें फंसानेवाली होती है। लेकिन स्त्री परमेश्वरका मार्ग बताकर ईश्वरका दर्शन करानेवाली भी होती है। स्त्रीके ही कारण मनुष्यके हृदयमें वैराग्य भावना जाग्रत होती है और वह परमार्थ मार्गकी ओर जाता है। इसीलिये हम देखते हैं कि इस ग्रहमें तारक मारक दोनों गुणधर्म मौजूद होते हैं। स्त्री सुख देना या न देना इसकी इच्छापर निर्भर है। इसीलिये कन्या, धनु और मीन लग्नके लोग ही नैष्ठिक ब्रम्हचारी रह सकते हैं, दूसरे लग्नके नहीं। इस ग्रहके अमलमें जन्म लेनेवाले मनुष्य, साधु, सत्पुरुष और ज्ञानी होते हैं और सिद्धिके चमत्कार दिखानेवाले होते हैं। इस ग्रहके प्रभावमें जन्म पाये हुए सत्पुरूष काशीके सुप्रसिद्ध स्वामी तैलंग, सिरडीके साईबाबा, के. श्रीमंत नारायण महाराज, उपासनी बाबा, हालमें मद्रास प्रांतके रमण महर्षी आदि हैं। ये लोग सिद्धिके चमत्कार दिखलाकर जनसंमर्द जमा करते हैं और बहुत-सा पैसा कमाते हैं। इनसे लोगोंका न तो आत्मकल्याण ही हुआ है और न तो इन्होंने शिष्य व पंथ ही बढ़ाया है या ज्ञानोंपदेश दिया है एवं भक्तिमार्ग बतलाया है। इनके स्वयं समाधिस्थ होनेके बाद इनकी गद्दीके लिये शिष्यगणोंमें बहुत झगड़े मचते हैं। मेरी रायमें ये लोग निरुपद्रवी होते हैं, क्योंकि इनके लोगोंका कल्याण नहीं हुआ है।

शनिः—सब ग्रहोंमें शनिका स्थान विशेष महत्वपूर्ण है। मानवप्राणी जब दाम्पत्य जीवनमें प्रवेशकर मायामोहके जंजालमें फंस रहनेके कारण ईश्वरका स्मरण नहीं करता तब यह ग्रह आधिभौतिक और आधिदैविक इन दो साधनोंसे मनुष्यको विविध और विपुल आपदाओंसे पीडित कर उसे ईश्वरकी याद दिलाता है। यदि मानवी-जीवन दुःख, क्लेश आपदाओं विपदाओंसे परे—शुरूसे ही भरा

हुआ होता तो मनुष्य शायद ही परमेश्वरका स्मरण न करता। इसीलिये हम देखते हैं कि मनुष्योंपर विपदाओंकी बौछार करना और इस प्रकारसे ईश्वरकी याद दिलाना, मायामोहके परे रहना, वैराग्य परिपूर्ण होना और एकान्त जीवन बिताना आदि इस ग्रहके नैसर्गिक स्वभाव हैं। यह ग्रह थोड़ा क्रोधी व पूर्ण निर्लोभी, अचूक पथ बतानेवाला, शिष्यको योग्य गुरुके आधिन कर अध्यात्म ज्ञानका अभ्यास पूर्ण होते तक शिष्यपर कड़ी नजर रखनेवाला होता है। इस ग्रहके प्रभावसे पैदा हुए महात्मा तथा सत्पुरुष स्वभावसे क्रोधी, एकान्तप्रिय, शिष्योंपर अलौकिक प्रेम करनेवाले, किसी एक शिष्यको ही आत्मज्ञान देनेवाले होते हैं। इनके पास केवल वे ही शिष्य अन्ततक टिकते हैं जिनको आत्मज्ञान प्राप्तिकी तीव्र इच्छा होती है। और जिसका हृदय वैराग्य भावनाओंसे भरा हुआ होता है। यह ग्रह मनुष्यको बहुत पीड़ा पहुँचाता है और अनेक प्रकारकी आपदाओंसे संत्रस्त करता है। यही कारण है कि शनिको कई लोग निष्ठुर, दयाहीन और पापफल देनेवाला मानते हैं। लेकिन जब इसकी कृपादृष्टि होती है तब यह ऐहिक सुख देता है। सबसे विशेष बात यह है कि यह ग्रह ईश्वरके बारेमें ज्ञान प्रदान करता है। मेरी रायमें शनि शुभग्रह है। इस ग्रहके अमलमें ब्रह्मीभूत विद्यानन्दसरस्वती, महाराज बेलापूरकर, श्रीमत् टेम्बे महाराज, श्री ब्रह्मचैतन्य गोंदावलेकर महाराज, अक्कलकोटके स्वामी महाराज, काशीके किलारामनगरमें रहनेवाले कुत्ताबाबा, नागपुरके ताजुद्दीन बाबा, कोल्हापूरके दत्तमहाराज आदि महापुरुषोंने जन्म लिया है।

राहू—यह ग्रह धनद्रव्यका बना हुआ नहीं है बल्कि पूर्ण अदृश्य है। यह ग्रह केवल ग्रहणके समय दिखाई देता है। इस ग्रहके नैसर्गिक स्वभाव निम्न लिखित हैं:—शरीरसे पूर्ण अनासक्ति रखना और विदेही स्थितिमें जाकर मोक्ष प्राप्त करना। यह ग्रह त्रिगुण (सत्व,

रज, तम,) के परे जाता है अर्थात् विचारशक्ति और क्रिया स्थगित हो जाती है; केवल शरीरके नित्य नैमित्तिक व्यवहार चालू रहते हैं। इसका दुनियाको कुछ भी उपयोग नहीं हो पाता; लेकिन नीचले दर्जेमें याने तुरीयावस्थामें भक्तियोगी होता है। इस ग्रहके प्रभावसे पैदा हुए साधुओं तथा महापुरुषोंका बर्ताव बड़ा ही बेढंगका होता है। निजाम स्टेटमें येलेगांवके रहिवासी तुकामाई समर्थ रामदासके प्रशिष्य थे किन्तु अर्धनारी नटेश्वरके समान रहा करते थे। इनके पास हमेशा कुत्तेका बच्चा रहा करता था और इनके हाथमें बड़ी भारी चिलम रहा करती थी। लोग इन्हें हनुमानजीका अवतार मानते थे। आप पूर्णावस्था और विदेही स्थितिको पहुँचे हुए सिद्ध पुरुष थे। सातारा प्रान्तमें तासगाँव नामक गाँवमें कई साल पहले महादुबुवा नामक एक नग्न महापुरुष रहा करते थे। आप हमेशा गाँवके कुड़ाकचरेमें लेटे पड़े रहते थे और मुँहसे 'सांभारभात' इस तरह चौबीस घन्टे रट लगाया करते थे। बहते हुए गन्द पानीमें ही लेटकर नहा लिया करते थे। उनका इस तरहका बड़ा ही बेढंगा बर्ताव था; किन्तु आप बड़े ज्ञानी पुरुष थे। अपनी सारी जिन्दगीमें इन दोनों महापुरुषोंने केवल एक एकही शिष्य तैयार किया है। इस कोटिके महात्मा बहुत ही बिरले होते हैं, किन्तु भक्तियोगी इसी ग्रहके प्रभावसे जन्म लेते हैं। यथा—सन्त तुलसीदास, तुकाराम, नामदेव, भगवान रामकृष्ण परमहंस, गौरांगप्रभु, मीराबाई, गजानन महाराज शेगाँवकर, भक्त सूरदास, ढाक्काकी श्री श्री मा. आनंदमयी देवी आदि।

अगले परिच्छेदमें "ग्रहोंके कारकत्व" का विचार करेंगे।

परिच्छेद ग्यारहवाँ

कारकत्व

रवि–ब्रह्म, विराट, उत्पत्ति, सत्व, अकार, भूतात्मा, प्राणवायू, सलोकतामुक्ति, वैखरीवाणी, स्थूल शरीर, विश्व, यम, तेज, अंतःकरण, व्यान, पूर्णत्व, असंगत्व, व्यापकत्व; सर्वबीजत्व, ऋग्वेद, महिमासिद्धि, ईशीत्व, महालिंग, परमात्मा, आत्मवेद, मणिपुरचक्र, सर्वसाक्षी, निर्विकल्प, परब्रह्मरुप, पुरुषतत्व, बिंदू, अद्वैत, सूर्यभेदन, उज्जायीमुद्रा, सूर्यनाड़ी, (पिंगला) ह (सूर्य) सत, चित्त, आनंद, शब्दब्रम्ह, मेरुदंड (Spinal cord) गायनकास्वर–मध्यम, चक्षुस, नाथपंथ, शिवोपासक, पितासे प्राप्त, अस्थि, शिरा, मज्जा, भुवन ज्ञान सूर्ये सयंमात। अधिदेवता–शिव प्रत्याधिदेवता–अग्नितेज।

चंद्र–(मन–जीव) प्रकृति; रज, नियम, इडा, प्रपंचासक्ति, वैष्णव, अज्ञान, आवरण, सीत्कारी, सीतली, पवनयोग, रेचक, उकार, द्वैत, अध्यात्मिक दुखः, लघिमा, विष्णु, विकरण–अपने देह बिना वहाँ कार्य करना, समीपता, मध्यमा वाणी, तैजस, कंठ, समानवायु, मनोमय कोश, शीतल, अजत्व, परात्परत्व, निर्मलत्व, अजत्व, गुरु यजुर्वेद, भाव अभावविहीत चंद्रामृत, (अमरवारुणी) मातासे-प्राप्त–त्वचा, रोम मांस, रक्त, विशुद्धचक्र, गायनकास्वर=निषाद, ठ (चंद्र) चंद्रेतारा व्युह ज्ञानम्। अधिदेवता=उमा प्रत्याधिदेवता–जल Cerebrospinalfluid

इंद्रियजय होनेसे शरीर रुपलावण्य, बल वज्रके समान शरीर बनता है, इस प्रकारकी शरीर संपत्ति बहुत अच्छी होती है, जब शरीर

सुदृढ हो तब मनपर विजय प्राप्त करना बहुत ही आसान होता है। ततो मनो जवित्वम् विवरण भावः प्रधानश्च। जब मनकी जय होती है तब अपने शरीरको अपने मन गति प्राप्त होती है। इसका फल यह होता है की मनुको जिस स्थलपर जानेकी इच्छा हो वहाँ शरीर जाता है।

मंगल—स्वयंभूलिंग,तामस अहंकार, तम, आसनोंका अभ्यास, नाद, प्राणायाम, रसना, क्रोध, गाणपत्य, भैरवोपासना, बलभीमोपासना गीरि-गुसाई पुरीगुसाई, मुद्राका अभ्यास, शाक्तमतवादी, भस्रिका, भ्रामरी, महामुद्रादि, अस्तेय, स्मशान व प्रसूतवैराग्य, आधिभौतिक कारण शरीर, मैथुनक्रिया, नाद–समुद्रमेघ, भेरी झर्झरी, अनाहतचक्र, गायनका स्वर गांधार, बलेषु हस्ति बलादीनि पंचाग्निसाधन, अनाहत ध्वनी अन्नमयकोश. अधिदेवता=स्कंद=प्रत्यधिदेवता=पृथ्वीके साथ सूर्यके अभिमुख जा रहे हैं।

बुध—चित्त, वायु, परोक्षज्ञान, अभाव वैराग्य, त्वक, जिव्हा, वाणि, शब्द, बुद्धि, उदान धारणा, मुमुक्षुत्व, लिंगशरिर (सूक्ष्मशरीर) नाद–मर्दल, शंख, अणिमा (सिद्धी), प्राकाम्य, मूलाधारचक्र, गायनका स्वर धैवत, प्राणमयकोश, Cerebellum. Pituitary Body. अधिदेवता–नारायण प्रत्यधिदेवता–विष्णु।

गुरु—(ज्ञानाहंकार) आज्ञाचक्र, ज्ञान, सूक्ष्माहंकार प्रत्याहार विवेक, आकाश, सुषुप्ति, ज्ञानयोग, सद्गुरू, ज्ञानमद, दत्तउपासना, अपरोक्षज्ञान, आत्मसाक्षात्कार, अपरिग्रह, क्रियायोग, आत्मानात्मविवेक विचार, सिद्धांत वाक्यश्रवण, विज्ञानमयकोश, गरिमा, संन्यासमार्ग, नाद-घंटा, काहल, चित्त, अमृतत्व, कृपालुत्व, सूक्ष्मवेद, सगुण, ज्ञान, ज्ञानात्मा, कैवल्यदिक्षा, गायनका स्वर–ऋषभ, Cerebrum. अधिदेवता–ब्रम्ह। प्रत्यधिदेवता–इंद्र।

शुक्र—ध्यान, महामोह, राजयोग, अष्टसिद्धि, काम, देवीउपासना, मंत्रयोग, ब्रह्मचर्य, आनंदमयकोष, भक्तियोग, वशित्वसिद्धी, रज, नाद—किंकिणी वंशे, वीणा व भ्रमर, सर्वाधारत्व, परकायाप्रवेश, क्षुद्रसिद्धि, स्वाधिष्ठान, गायनका स्वर—पंचम अधिदेवता—इंद्र—प्रत्याधिदेवता—चंद्र, Thyroid Gland पर रवि और शुक्रका अमल होता है।

शनि—तूर्या, सविकल्पसमाधी, संप्रज्ञात, सृष्टिकाप्रलय, त्रिकास्थि Vertebral Column कुंभक, लययोग, नागाबाबाजीपंथ, प्लाविनी, अपानवायु, शोकनिवृत्ति परमहंसयती, निर्वासना, कर्मयोग, रुद्र, अपर-वैराग्य, संहार, लय, मकार, शुद्धात्मा सरुपतामुक्ति, पश्यंतिवाणी, कारण-देह, जागृत (मोक्षमार्गमें) सुषुप्ति (प्रपंचमें) पृथ्वी, प्राज्ञ, आनंद, सामवेद अघोरपंथ, संस्कार साक्षात्कारणात्पर्व जाति ज्ञानम्। सहस्रारचक्र, सुषुम्नानाड़ी—शांभवी, मध्यमार्ग, ब्रम्हरंध्र, महापथ, स्मशान, शून्यपदवी नामसे प्रसिद्ध है। गायनका स्वर—दोनों षडज, अधिदेवता—यम प्रत्यधिदेवता—प्रजापति।

राहू—असंप्रज्ञात समाधि, (निर्विकल्प) भक्तियोग, कुंडलिनी, पराभक्ति, अनासक्तयोग, अर्धमात्रा ॐ निरंकुशातृप्ति, मारुतीउपासना, परवैराग्य, परावाणी, मूलप्रकृती, सर्वसाक्षी, महानआत्मा, ज्ञानशक्ति, शुद्धसत्वगुण ईश्वरप्रत्यगात्माअभिमानी, ओंकारमातृका, स्वप्रकाश-स्थान, सायुज्यतामुक्ति, महाकारणदेह, तुर्यातीतअवस्था, ज्ञेयभोग्य, मूर्धास्थान, विस्मृति, चित्रिणी नाडी, अथर्वणवेद शिवस्वरुप, पिंडब्रम्हांड-पूर्ण, कुंडलिनी चक्र; खड्जस्वर=Filum Terminale. अधिदेवता=काल प्रत्यधिदेवता=सर्प।

कायरुप संयमात्तद् ग्राह्यशक्तिस्तम्भेचक्षुःप्रकाशासंप्रयोगेऽन्तर्धानम्॥ केतू=अधिदेवता—चित्रगुप्त, प्रत्यधिदेवता—ब्रह्म।

नेपच्यून:—स्वप्नमें दृष्टांत, उपासना, भक्ति, अंतर्ज्ञान, साक्षात्कार अदृश्य सृष्टीमेंका अपने आखोंको दिखाई देनेवाला दृश्य (Vision) स्फूर्ति, अंतरेंद्रियदृष्टि, अपने विचार दूसरेके हृदयमें निर्माण करना, भूत, प्रेत पिशाच्च, देवता आदिका दर्शन होना और इनका शरीरमें संचार होना, मानवी समाजपर विशुद्ध और सात्विक प्रेम करना; विश्वबंधुत्व, तुर्यावस्था. Pariatal eye, canalis Centralis, Pineal Gland (body) प्रत्ययस्य परचित्त ज्ञानम् ॥ इस कारकत्वका उपयोग ज्योतिषि अपने बुद्धिबलसे करें यह प्रार्थना है ।

परिच्छेद बारहवाँ

मेषादि राशियोंका वेदान्तकी दृष्टिसे विचार

वेदकालसे एक बात निश्चित हो चुकी है कि रात्रिके समय आकाशकी ओर नजर डालनेसे कई नक्षत्र देखनेमें आते हैं। इन नक्षत्रोंके विषयमें हमारे भारतवर्षमें बहुत प्राचीन कालसे ज्ञान प्राप्त किया गया है। प्राचीन समयसे ही इन नक्षत्रोंको आश्विनी, भरणी, कृत्तिका आदि नाम दिये गये हैं। इन नक्षत्रोंके समूहको राशि कहते हैं। इसीके विषयमें हमें मेष आदि राशियोंके क्रमसे विचार करना है।

मेष (स्वामी मंगल)—पहले इस राशिका वर्णन दिया जाता ह यह आद्यराशि है। पहले पहल जब मनुष्य पैदा हुए तब नंगे घूमा करते थे। उनका कोई घरबार न था; स्त्री-पुरुष मिलकर एक झुंडमें वृक्षके नीचे या किसी गफामें रहा करते थे और कन्दमूल फल तथा झाड़ोंके पत्ते व पशुपाक्षियोंका मांस खाकर अपना उदरनिर्वाह करते थे। जब कभी कामेच्छा पैदा होती थी, तब किसी भी स्त्रीसे अपनी इच्छा पूर्ण कर लिया करते थे। इस समय विवाह संस्था अस्तित्वमें न थी। इसीलिये कोईभी पुरुष किसीभी स्त्रीसे अपनी भोगलालसा पूरी कर लेता था। उस समय मानवप्राणीका जीवन केवल खाना-पीना और स्त्रीको भोगना ही था। सुख दुःखके विचार उनमें नहीं थे। ये झुण्ड आपसमें स्त्रीके लिये लढ़ते थे। इसी तरह कुछ काल व्यतीत होनेपर स्त्रीके मनमें लज्जाका प्रादुर्भाव हुआ। अब आमतौरसे भोगलालसा पूरी करना असभ्य-सा जान पड़ने लग। इसीलिये उन्हें झाड़की पत्तियाँ, लकड़ियाँ और घांसफूसकी साह्यतासे झोपड़ियाँ बांधनेकी कल्पना

सूझी। इस प्रकारसे जब स्त्रीको गुप्तरीतिसे भोगना प्रारम्भ हुवा तब जिनके स्त्री नहीं थी, उनके दिलमें ईर्ष्या उत्पन्न हुई, जिसका परिणाम यह हुआ कि स्त्रीके लिए पुरुषोंमें झगड़े होने लगे। मानवप्राणीकी इस अवस्थापर मेषराशिका अमल था। कामसे लज्जा, लज्जासे क्रोध और क्रोधसे मारपीट यह गुणधर्म निर्माण हुए। यह मेषराशिके गुणधर्म हैं। मेष (ram) के चार पैर, दो सिंग, एक पूंछ, लम्बा मुँह और शरीरपर सघन बाल होते हैं। इसका प्रधान लक्षण है जमीनपर खाद्य-पदार्थ ढूंढते हुए आगे चलना। जब वह भेड़ीके पीछे जाता है तब दूसरे भेड़ोंको पासमें आनेसे रोकता है और पास आनेपर उनसे लढ़ता भी है। बकरे बहुतही कामी होते हैं; यहाँ तक कि बचपनमेंही अंडु आना किये हुए (castrated) बकरे भी मादीके पीछे लगते हैं। किन्तु मादी कामी नहीं होती। केवल गर्भ रहते समय (Mating time) वह नर को भोग देती है; अन्य समय नरको अपने पास आनेसे इन्कार करती है।

प्राचीन आचार्योंने इस राशिके निम्न लिखित लक्षण बतलाये हैं:— चर, अग्नितत्व, चतुष्पाद, दिनमें बार बार स्थलान्तर करना, रूक्ष मौज उड़ाना, चालचलनमें बेढगापन, झगड़ालू, भावात्मक (Positive) राशि, निर्जल भूमितलस्थ, मध्यरात्रिको अधस्थिति, रजोगुणी, तेज अल्पप्रसव, विषमराशी, ऱ्हस्वदेही, पुरुषराशि, पुरुषतत्व (Male factors are predominent), पूर्व दिशा, पशुराशि, निवासस्थान—घांसके जंगल, खेती, बनप्रदेश, मुख्यतत्व—आशा, उम्मीद, हृदयके विचार लोगोंके सामने प्रगट करनेकी चेष्टा करना, (He wants to come in public eye) रत्न—याकूत (एक प्रकारका पत्थर) (Amethyst) रंग—रक्तवर्ण, धातु—लोहा, शारिरिक दृश्य—अत्यन्त चंचल, मानसिक स्वभाव—साहस, इस राशिके प्रधान

लक्षण–युद्ध करना, जननेता Public Leader होकर मार्गदर्शन करने की आकांक्षाएँ रखना। इस राशिका मूल स्वभाव–सत्यवादित्व, अपनेसे बड़ोंकी आज्ञा पालना। इस राशिका अमल मस्तक पर है।

इस राशिमें काम, क्रोध और लड़ना ये गुण प्रधान होते हैं, जिनमें प्रधान गुण काम है वह मनुष्यके मनमें दिन रात प्रबल रहता है। यही कारण है कि इस लग्नका मनुष्य सम्पूर्ण योगीश्वर नहीं हो सकता। अष्टांग योग साधनमें यम नियम, आसन, प्राणायाम इन चार अंगोंका वह अभ्यास कर सकता है, किन्तु जब वह प्रत्याहारकी अवस्थामें पहुँचता है तब स्त्रीके वशीभूत होकर योगभ्रष्ट होता है। इसका कारण यह है कि ये न केवल बुद्धिमें ही चंचल होते हैं बल्की शरीरसे भी चंचल होते हैं। योगके लिये बुद्धि स्थिर होनी चाहिये। इसीलिये ये योगाभ्यासके पात्र नहीं होते। हाँ, सौभाग्यसे यदि कोई अवतारी पुरुष मिल जाय, तो गुरुपदेशसे ये ज्ञान-योगी हो जाते हैं। भक्ति पूजन भजनादिमें इनका मन आनन्दका अनुभव करता है। इस राशीमें सांसारिक आसक्ति नहीं होती। मेष राशी कुटुंबपति है।

वृषभ राशि (स्वामी शुक्र)—राशिचक्रमें यह दूसरी राशि है। मेष राशिके बारेमें बतलाते समय हमने मनुष्य जातिकी प्रगति मैथुन-कर्म गुप्तरीतीसे करनेके लिये झोपड़ी बांधने तक किस प्रकार हुई, यह दिग्दर्शीत किया है। आगे चलकर मनुष्य समाजने प्रगतिका एक कदम सामने बढ़ाया। वह किसानी कर शान्तिपूर्वक जीवन बिताने लगा। उसको ढूंढ़ते ढूंढ़ते कुछ धातू मिले जिनका उपयोग खेतीवारीके लिये उपकरणों-सा किया जाने लगा। इस समय आपसके झगड़े काफी प्रणाममें बन्द हो चुके थे। वर्षाऋतुमें खेतीकी देखभाल करना और स्त्रीके साथ आनन्दपूर्वक जीवन बिताना यही मानव-प्राणीका जीवन

क्रम हो गया। धीरे धीरे मनुष्यमें अहंभाव पैदा हुआ– 'यह घर मेरा है, यह खेत मेरा है' इस अहंकारके कारण हृदयमें लोभ उत्पन्न हुआ। अभीतक विवाह संस्था अस्तित्वमें नहीं आसकी थी, अतएव सुखदुःख के विचारोंसे मनुष्य-समाज अनभिज्ञ था। किसी भी स्त्रीके पास जाकर मनुष्य अपनी भोग-लालसा पूरी कर लिया करता था। मेषराशीमें जिस प्रकार काम और क्रोध उत्पन्न हुए, उसी तरह इस राशीमें स्वार्थ और लोभ उत्पन्न हुए। यह सुखाभिलाषी व शान्तिप्रिय राशि है। मेषराशी ध्येयवादी (Idealistic) वृषभराशि व्यावहारीक (Practical)। मेषराशीके लोग किसी भी व्यावहारिक कल्पनाको माननेके लिये सहसा तैयार हो जाते हैं। ठीक इसके विपरीत वृषभराशि होती है। किसी भी कल्पनाको प्रत्यक्ष कृतिमें लाये बिना इस राशीके लोग विश्वास रखनेके लिये तैयार नहीं होते। किसी भी कार्यमें दूसरोंको आगे कर आप पीछे रहकर व्यवस्था देखनेवाली यह राशि है।

इस समय मनुष्य समाज पर वृषभराशीका अमल था। मिथुन-राशीके अमल तक मातृसत्ताक पद्धति (Matriarchal System) प्रचारमें थी अर्थात् पुरुष स्त्रीके अधिन था। इस राशीके अमलके अन्ततक स्त्री-समाजकी हालत बहुत ही खेदजनक और पशुसमान थी। प्राचीन आचार्योंने इस राशिका वर्णन इस प्रकार किया है :—

स्थिर, ठंडी, रूक्ष, उदासीन, वर्ण—राशीका वर्ण निम्बूके समान (पाश्चात्य शास्त्रकारोंके अनुसार) अभावात्मक (Negative) राशि, भूमिराशि, जलाश्रयी, रजोगुणी, मध्यरात्रीके समय अंधस्थिति बहुप्रसव, समराशि, ऱ्हस्वदेही, स्त्रीराशि, स्त्रीतत्व, दक्षिण-दिशा, पशुराशि। रहनेकी जगह–गोशाला, जंगल; राशिका प्रधान तत्त्व–शान्ति। मूल स्वभाव–स्थितिस्थापकत्व। रत्न–मॉस अॅगेट (पन्ना) वर्ण—

नीला (हमारे प्राचीन आचार्योंने इसका वर्णन "गौर" दिया है) धातू–ताम्र। **शारीरिक दृश्य**–जडत्व। **मानसिक दृश्य**–स्थिरता। **राशिका प्रधानधर्म**–निर्माण करना, व्यवस्था करना। **राशिका मूल स्वभाव**–(Inner Nature) प्रापंचिक व्यवस्था रखना। इस राशिका अमल नेत्र और कंठ वाणीपर है।

यह राशि विलासप्रिय, सुखाभिलाषी व शारीरिक परिश्रमोंसे दूर भागनेवाली होती है। इसीलिये इस लग्नमें जो जन्म लेते हैं वे योगी नहीं हो पाते; अधिकसे अधिक राजनीतिज्ञ (Politician) मुत्सद्दी (Statesman) अथवा म्युनिसिपल मेम्बर हो पाते हैं। जब प्रापंचिक झगड़ोंमें दुःस्सह कष्ट प्राप्त होता है तब ये घरबार छोड़कर भाग जाते हैं और संन्यासी बनते हैं। परन्तु इन्हें ईश्वर-ज्ञान प्राप्त नहीं होता; केवल इधर उधर भटकते रहते हैं। जब त्रिविधताप दुःस्सह होता है तब आत्म-हत्याही कर लेते हैं। इस लिए ये लोग योगी नहीं हो सकते। इनकी धार्मिक बुद्धि उत्तम होती है और वे कर्मकाण्ड भक्तिपूर्वक करते हैं। अष्टांग साधनका दूसरी सिढ़ी जिसे नियम कहते हैं उसका ठीक २ पालन करते हैं। इस राशिमें कभी कोई दैविगुणयुक्त व भक्तिमान पुरुष जन्म लेते हैं। इस राशिमें सांसारिक आसक्ति अधिक होती है। यह राशि मेषराशिकी पत्नी है।

मिथुन राशि (स्वामी बुध)— राशिचक्रमें यह तीसरी राशि है। मिथुन, मेष (पिता) और वृषभ (माता) का पुत्र है इसीलिये इसमें मातापिताके गुणधर्म उतर आये हैं। यही कारण है कि मिथुन-राशिको द्विस्वभाव राशि कहा गया है। जब मेष और वृषभ राशियाँ एक स्थान पर आयीं तब वाणी उत्पन्न हुई और फलतः सुखदुःखके विचार उदित हुए। इस राशिका रूपवर्णन इस प्रकारका दिया हुआ

है:— ‘ नृयुग्ममिथुनं सगदंसवीणम् ” । इस राशिमें स्त्री व पुरुष दोनों एकही स्थानपर आ गये हैं । वृषभराशिके अन्ततक स्त्रियोंकी स्थिति अत्यन्त दयनीय थी । इनका न तो कोई संरक्षक ही था, न उनके लिये किसी प्रकारकी व्यवस्था ही रखी गई थी । एक स्त्रीको दो चार पुरुषोंको भोग देना पड़ता था और इसीलिये स्त्रीको बहुत कष्ट उठाना पड़ता था । इसका कारण यह है कि स्त्री एक पुरुषनिष्ठ होनेके कारण दो पुरुषोंसे एक ही समय भोगानन्द नहीं पा सकती, इसके विपरीत पुरुष एक स्त्रीनिष्ठ न होनेके कारण वह एकसे अधिक स्त्रियोंके भोगमें आनन्द प्राप्त करता है । (Woman is quite monogamous so she cannot enjoy two men at time but man is polygamous so he can enjoy two women at time) इस समय समाजमें बहुपातित्व (Polyandry) बहुत प्रमाण पर फैला हुआ था । यह स्थिति स्त्री समाजके लिए कष्टप्रद थी । इसीलिये एक पत्नित्वका वैवाहिक बन्धन पुरुषोंपर स्त्री समाजने डाल दिया । इस प्रकारसे विवाह-बन्धन अस्तित्वमें आया जिसका मुख्य श्रेय स्त्रियोंको ही है, पुरुषोंको नहीं । इसी समयसे पितृसत्ताक पद्धती (Patriarchal system) का आरम्भ हुआ । वाणी पैदा होनेके बाद भाषाशास्त्र की दिशामें अनुसन्धान शुरू हुए । कई लोगोंने कलाकौशल्य और कारीगरीकी ओर अपना ध्यान आकर्षित किया । इसी समय आयुर्वेद, गायन और ज्योतिष शास्त्रोंका भी प्रादुर्भाव हुआ । कुछ दिनोंके बाद लोगोंने कपाससे कपड़े बुनना भी शुरू किया । इन सब विषयोंमें अनुसंधानभी होते रहे । इस समय मनुष्य समाज पर मिथुनराशिका अमल था । इस अमलके शुरू शुरूमें स्त्रीके साथ सांसारीक जीवन बिताना प्रारंभ हुआ और फल स्वरूप स्त्री पर बालबच्चे संभालनेकी जिम्मेदारी आ पड़ी । इस जिम्मेदारीके कारण दाम्पत्य-जीवनमें झगड़े उपस्थित होने लगे और

इस तरह प्रांपचिक जीवन दुस्सर बोझिल और दुःखपूर्ण हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि मनुष्य संसारके प्रति विरक्त होने लगा और सच्ची शान्तिका मार्ग ढूंढ़ने लगा। कभी २ वेदान्त पठन मात्रसे ही सच्ची शान्ति पानेका निष्फल प्रयत्न करने लगा। जिस प्रकार कामशास्त्रमें ८४ आसन दिये हुये हैं, उसी तरह योगशास्त्रमें भी ८४ आसन दिए हैं। जिसकी क्रियासे मिथुन राशि भलीभांति परिचित है। इसी तरह श्रृंगार शास्त्र और योगशास्त्रके विषयमें भी अनुसन्धान शुरू हो गय। इस राशिका अमल कान और गलेपर है।

प्राचीन आचार्योंने इस राशिका वर्णन इस प्रकारः—द्विस्वभाव द्विदेह, वायुतत्त्व, मध्यान्हमें अन्धस्थिति, जलाश्रयी, सत्वगुणी, अल्पप्रसव, विषमराशि, द्विपद, मध्यमदेही, उष्ण, आर्द्र, रक्तिम, दिनकी राशि, भावात्मक (Positive) राशि, पुरुषराशि, पुरुषतत्व, पश्चिमदिशा, वक्षस्थल, मनुष्यराशि, रहनेकी जगह—अखबारका दफ्तर, पोष्ट ऑफीस, टेलीग्राफ ऑफीस, बड़े २ फर्ममें क्लर्ककी जगह, संस्कृत कॉलेज, स्कूल, वेदशाला, ऑबझरव्हेटरी वेधशाला, (Observatory) आदि, इस राशिका प्रधान तत्व–खुष दिल रहना, रुचि वैचित्र्य, रत्न–Beryel Aquamarine वर्ण—आर्यग्रन्थकारोंकी दृष्टिसे फीका हरा और पाश्चात्य ग्रन्थकारोंकी दृष्टिसे पीला हलदी का रंग। धातु–पारा; शारीरिक दृश्य–संकुचन और प्रसरण (Contraction and Expansion) मानसिक दृश्य–कभी उल्लसित व कभी दुःखित। राशिका मूल स्वभाव–कलाकार अन्वेषक (Inventor) और प्रेरक। इस राशिका अमल बाहुपर है।

इस राशिमें एकाग्र चित्त करनेका सामर्थ्य अवश्य है किन्तु शरीरकी मृदुताके कारण योगाभ्यासके कष्ट सहन करनेकी शक्ति

नहीं है। किन्तु दूसरे शास्त्रोंका अभ्यास ठीक ठीक करनेकी क्षमता होती है। प्रापंचिक जीवनमें कितने भी विविधताप हों, न तो इस राशि के लोग परमार्थ मार्गकी ओर जाते हैं और न अपना कष्ट किसी दूसरोंके बतलाते हैं। फलतः इन्हें वैराग्य प्राप्त नहीं होता आर इसीलिए योगी नहीं हो पाते। इनसे केवल वेदान्तकी चर्चा, कथा पुराण, संकीर्तन ही होता है। ये लोग अपने गुरुपरभी विश्वास नहीं करते, अपने मनके अनुसार चलते हैं। इसी कारण परमार्थ मार्गसे वञ्चित रहते हैं। राशि चक्रमें यह पहला कुटुम्ब (family) है जोकि लोगोंका संरक्षण करता है। इसी लिए यह राशि संरक्षण तथा पालन करनेवाली राशि कहलाती है। मेष राशि पुलिस है क्योंकि यह संरक्षण करती है। वृषभ राशि अन्नपानी देकर जीवनकी रक्षा करती है। मिथुन व्यावहारिक और प्रापंचिक ज्ञान देनेवाली राशि है।

कर्क (स्वामी चन्द्र Universal Mother)—राशिचक्रमें यह चौथी राशि है। यह राशि सृष्टिपर अधिकार चलानेवाली होनेके कारण जगन्माता, काली, आदिमाता, जगदम्बा, जगज्जननी, माया आदि विविध नामोंसे पहिचानी जाती है। हम यह देख चुके हैं कि मिथुन राशिमें विवाह-संस्था किस प्रकारसे अस्तित्वमें आई। विवाह संस्थाके कारण धीरे धीरे लोगोंमें यह भावना जागृत हुई कि 'यह घर मेरा है, ये बालबच्चे मेरे हैं'। जहाँ जहाँ देश और प्रान्त थे वहाँ लोगोंको अपने देश और प्रान्तसे भी ममत्व उत्पन्न हुआ। परिणाम यह हुवा कि स्त्रियोंके मनमें अपने पतिको राजा बनानेकी उत्कट अभिलाषा उत्पन्न हुई। स्त्रियाँ बहुत ही धूर्त और राजनीतिज्ञ होनेके कारण अपने पतिको राजा बनानेमें सफल हुई और आप स्वयं राज्यका कारोभार संभालने लगीं। धीरे धीरे चातुर्वर्णाश्रम अस्तित्वमें आये। पाठ-पठन, शम, दम, तप, शौच, शान्ति, क्षमा, सरलता, आत्मज्ञान, सृष्टि-ज्ञान, श्रद्धा और यज्ञ

करना आदि गुण कर्मोंसे जो युक्त होते थे वे ही ब्राह्मण कहलाते। शूरता, तेजस्विता, धारणाशक्ति, दक्षता, युद्धकला निपुणता, दानी और सत्ताधिकारी आदि गुणकर्मोंसे जो युक्त होते थे वे क्षत्रिय माने गये। कृषि, मवेशियोंकी देखभाल, वाणिज्य, व्यापार उद्यम आदि गुणकर्मोंसे युक्त लोग वैश्य कहलाये जाने लगे और जो दूसरोंकी सेवा करने योग्य थे वे क्षुद्र हुए। इस प्रकारसे चार वर्णाश्रम धर्मका निर्माण कर सामाजिक व्यवस्था की गई। इस तरह मेषने क्षत्रिय, वृषभने वैश्य मिथुनने शूद्र और कर्कने ब्राह्मण बनाये। अन्य देशके साथ लड़कर वे देश अपने अधिकारमें लाना तथा सारे राज्यका कारोबार संभालना आदि कार्य भी इन्हींके जिम्में सौंप दिये गये थे। इसी समय गणितशास्त्र (Mathematical Science) और नौविद्या (Art of Navigation) का प्रादुर्भाव हुआ। इस कालमें मनुष्य समाज पर कर्क राशिका अमल था। इस प्रकारसे सारे प्रपंच व संसारकी व्यवस्था देखते देखते, आपदाविपदाओंको तथा नाना प्रकारके कष्टोंको झेलते हुए कर्क राशि जीवनसे ऊब गई और उसके मनमें वैराग्य भाव जाग्रत हुआ। परिणाम यह हुआ कि वह वनमें चली गई और वहाँ योगाभ्यासमें संलग्न हुई।

प्राचीन आचार्योंने कर्क राशिका वर्णन इस प्रकार दिया है:— चर, जलचर, बहुप्रसव, मूकराशि, ठंड, आर्द्र, कफात्मक। **रंग**—नारंगी (Scarlet) या हरा, रातकी फलद्रूपता, भावात्मक (Positive) बहुपाद, मध्यान्हके समय अन्धस्थिती, मध्यमदेही, उत्तर दिशा, सत्वगुणी, कीटराशि। **रहनेकी जगह**—कूप, कुवा, तालाब, नदी, समुद्र तथा जमीनमें छिद्र (Hole) बनाकर रहनेवाली। **वर्ण**—आकाशके समान निला, अथवा जामुनके समान। **प्रधानतत्व**— क्षमा शान्ति। **हृदयमें वास करनेवाला गुण**—सहानुभूति। **रत्न**—मॉस आगेट

(पन्ना) धातु–चांदी, शारीरिक लक्षण–नरम तथा मृदु, मानसिक लक्षण–कल्पना आभास। प्रधान लक्षण–भविष्यवादित्व। इस राशिका मूल स्वभाव–शक्तिमान सत्ताधिकारी।

मेरी रायमें जब यह राशि दैविगुणोंसे युक्त होगी तब दूसरोंका कल्याण करनेके लिये महान त्याग करेगी और जब आसुरी गुणोंसे युक्त होती है तब अपने स्वार्थके लिए दूसरोंकी हानि करेगी। इस राशिका अमल हृदय पर है।

इस प्रकारसे हम देखते हैं कि इस राशिमें आपदाओं, विपदाओं तथा नानाप्रकारके शारीरिक कष्टोंको सहन करने की शक्ति है। प्रापंचिक बातोंमें आसक्ति किन्तु बुद्धि स्थिर। योगाभ्यासके लिये बुद्धि स्थिर चाहिये। वेदान्तके लिए अनासक्तिकी आवश्यकता होती है। इस प्रकारसे इस राशिमें योगी होनेके गुणधर्म मौजूद हैं। त्याग व परोपकार वृत्ति होनेके कारण साधुके योग्य गुणधर्म भी वर्तमान है। यही कारण है कि इस लग्नके लोग प्रापंचिक जीवन बिताकर परमार्थकी ओर जाते हैं और योग ज्ञान प्राप्तकर किसी एक स्थानमें अपना मठ बांधते हैं। तथा लोगोंको ज्ञानोपदेश देते हुए अपना जीवन व्यतीत करते हैं। किन्तु ये अपना कोई भी अधिकारी शिष्य नहीं बनाते जिसका परिणाम यह होता है कि इनके समाधिस्थ होनेके पश्चात् मठमें अव्यवस्था मच जाती है। ये लोग ईश्वर प्राप्तिके लिये घरबार छोड़कर जंगलमें चले जाते हैं और ईश्वर-ज्ञान प्राप्त कर किसी स्थानमें अपना मठ बांधकर लोगोंको ज्ञानोपदेश देते रहते हैं। अपने जीवनके अन्ततक लोगोंने दिया हुआ लाखों–करोडों पैसा इकट्ठा करते हैं; इस प्रकार इनके मठमें भी बड़ा भारी प्रपंच चालू रहता है। जिसके कारण कई झगड़े उपस्थित होते रहते हैं। अन्तर केवल यही है कि वहाँ उनके पत्नी बालबच्चे नहीं होते।

इस प्रकारके दो प्रसिद्ध उदाहरण यहाँ दिए जाते हैं—पंजाबमें एक महान भगवद्भक्त तुलसीदासजी हो गए हैं। यह सर्व विदित है कि तुलसीदासजी घरबार व पत्नी छोड़कर काशीमें आये और अपनी ईश्वर भक्तिके लगनके कारण उन्होंने प्रभु श्री रामचन्द्रजीका दर्शन किया था। बादमें वे लोगोंको भगवद्भक्तिका उपदेश देते रहे। कभी कभी अपनी सिद्धिका चमत्कार भी वे लोगोंको बतलाते थे। इन चमत्कारोंको देखकर भाउक लोग तुलसीदासजीकी ओर आकर्षित हुए और उनके आश्रममें फलतः लोगोंका प्रचंड मात्रामें ताँता लगा रहता था। इसका परिणाम यह हुआ कि तुलसीदासजीके ध्यान, भजन पूजन आदि नित्य कर्मोंमें व्यत्यय आने लगा। कुछही दिनोंके बाद वे आश्रमकी उलझने और झगड़ोंमें फँस गये। काशीमें एक और पंथ है जिसका नाम "अवघड"। इस पंथके आद्यप्रवर्तक किनाराम बाबाजी तुलसीदासजीके समकालीन थे; आप एकनिष्ठ रामभक्त थे। किनाराम बाबाकी निश्चल भक्तिका एक अंश यहाँ उद्धृत किया जाता है जो अल्पकालमेंही किनाराम बाबाकी सर्वत्र ख्याति हो गयी। और उनके आश्रममें लोगोंकी भीड़ एकत्रित होने लगी। आश्रममें बढ़ती हुयी भीड़के कारण भोजन-शयन आदिके प्रबन्धमें बाबाजीका सारा समय बीतने लगा। अब बाबाजी भजन, पूजन, ध्यान, धारणा तथा समाधि आदि कुछ भी न कर पाते थे। सुनते हैं की इनकी भक्तिपर त्रिलोकी नाथ प्रभु राम पूर्ण रूपसे रीझ गए थे। प्रत्यक्ष रूपमें सीता, राम, लक्ष्मण और भक्तराज हनुमान इनके आश्रममें विराजमान रहते थे। स्वयं प्रभु राम, आश्रममें अतिथियोंके भोजन शयनकी व्यवस्था तथा अन्य सभी जिम्मेदारीके काम करते थे। लक्ष्मणजी बझारसे सौदा खरीदकर लाते थे। जगन्माता सीताजी रसोई पकानेमें व्यस्त रहती थीं और भक्तराज हनुमानजी पानी भरना तथा लकड़ी फोड़नेका काम करते थे।

जब किनाराम बाबाने भगवानको कष्टमें देखा तो वे इन झंझटोंसे अलग होनेकी चेष्टा करने लगे। सायंकालका समय था, कथा, पुराण तथा भजन आदि हो रहे थे। लाखोंकी संख्यामें श्रोताओंकी भीड़ लगी थी। इसी समय बाबाजीने अपने शिष्यसे कहा—बेटा, एक बोतल शराब और थोड़ा कलिया भी ले आवो। आज्ञा पातेही शराबकी बोतल और कलिया उपस्थित हो गयी। किनाराम बाबाने लोगोंके देखते देखतेहि कलिया सेवन कर शराबको प्राशन किया। अभद्र चीजोंको सेवन करते देख लोगोंके मनमें बाबाजीके विषयमें घृणा उत्पन्न हो गयी। उनके शिष्योंको छोड़कर सभी लोग वहांसे घृणाके भाव लेकर चले गए। शराबपानकी वार्ता शीघ्रतासे चारों ओर फैल गयी और बाबा किनाराम सर्वत्र बहिष्कृत माने जाने लगे।

गुसाईं तुलसीदासजीके आश्रममें आज भंडारा था। नगरके सभी सन्त महात्माओंको नेवता दिया गया था। बाबा किनाराम समाजकी ओरसे बहिष्कृत किए गये थे अतएव उन्हें तुलसीदासजीने नेवता नहीं दिया था। भक्तराज हनुमानने दो भक्तोंके इस व्यवहारमें अन्याय देखा। भगवान रामसे शिकायत करनेपर श्रीरामजीने दोनों भक्तोंके भावोंकी सरसरतासे हनुमानजीको परिचित कराया। किन्तु हनुमानजीका समाधान नहीं हुवा। वे इसमें बाबा किनारामका अपमान मानते थे और इसी लिए तुलसीदासजीको दंड देना चाहते थे। हनुमानजीके आग्रहपर यह काम लक्ष्मणपर सौंपा गया। तुलसीदासजीके आश्रमपर अतिथीयोंकी भीड़ लगी और सबके सब भोजनके लिए बैठे। लक्ष्मणजीके श्रापके कारण भोज्य-पदार्थोंसे विष्टायुक्त दुर्गंध निकलने लगी। गुँसाई तुलसीदासजी बड़े लज्जित होकर असमंजसमें पड़े। ध्यान लगाकर देखनेके बाद उन्हें इस अनिष्टका कारण समझमें आगया। झट वे किनाराम बाबाकी ओर दौड़े। अनुनय विनय करनेपर बाबाजीने कहा तुलसी हम तो भ्रष्ट हो चुके हैं।

आपकी साद्यता एक भ्रष्ट व्यक्ति कभी भी नहीं कर सकेगा। विरागयुक्त बचन सुनकर तुलसीदासजी बड़ेही दुःखीत हुए। बाबा किनारामजीने तुलसीदासजीकी असहाय तथा दुःखमय अवस्था देखी तो उनके मनमें करूणाका प्रादुर्भाव हो गया। असहाय तुलसीको बाबाजीने अपने आश्रमके भीतर जानेकी आज्ञा दी। भीतर पहुँचतेही तुलसीदासजी प्रभू रामके दर्शन पाकर कृतकृत्य हो गये। तुलसीदासजीने देखा कि भगवान् रामचंद्रजी, सीतामाई तथा भ्राता लक्ष्मणके साथ वार्तालाप कर रहे हैं। एक ओर कोनेमें हनुमानजी क्रोधित होकर वीरासनमें बैठे हैं।

प्रभुके दर्शन पातेही भक्तप्रवर तुलसीदासजी भगवान्के चरणोंपर गिर पड़े। चरणोंपर गिरे हुए तुलसीदासजीको भगवान्ने कहा— "तुलसी तुम हनुमानजीके शरण जाओ। वे तुम्हारा काम पूरा कर देंगे"। आज्ञा पातेही तुलसीदासजी क्रोधित हनुमानजीके चरणोंपर जा गिरे। हनुमानजीने क्रोधावेशमें कहा—तुलसीदास तुम बड़ेही घमंडी हो; मेरे भक्तका अपमान करते हो। किनारामको नेवता न देनेसे मैं तुमपर अप्रसन्न हूँ। हनुमानजीकी ओर बड़ेही करुण भावसे भक्त तुलसीदासने देखा और कहा "प्रभो! लोक-लज्जाके कारण मैंने बाबाजीको नेवता नहीं दिया है यदि किनारामजीको नेवता देता तो कोईभी भोजन न करेगा और समुचा भोजन व्यर्थ जायगा। प्रभो क्षमा करिये। भक्त किनाराम मेरे लिए बड़ेही पूज्य है"। तुलसीदासजीके व्यक्तिगत पवित्र भावोंको देखकर हनुमानजी प्रसन्न हो गए। तुलसीके पूछनेपर हनुमानजीने कहा, भंडारा होनेके पूर्व प्रसादकी एक थाली किनारामके आश्रममें पहुँचानेसे तुम्हारा भंडारा सफल हो जायगा।

इधर लक्ष्मणजीके उःशापसे पूर्ववत अन्नमें पवित्र सुगंध आने लगयी। तुलसीदासजी प्रसादकी थाली लेकर बाबाजीके आश्रममें पहुँचे, उस समय उन दोनोंमें जो संवाद हुआ वह नीचे दिया जाता है—

किनाराम बाबाने तुलसीदासजीसे पूछा—"क्यों गुंसाईजी आप घरबार और पत्नी छोड़कर काशीमें किसलिये आये हैं ?"

"प्रभु श्री रामचंद्रजीके दर्शनके लिये—" गुंसाईजीने उत्तर दिया।

बाबाजीने कहा—"आपको तो प्रभुरामचंद्रजीके दर्शन हो गये हैं।

किनारामबाबाने गुंसाईजीसे फिर पूछा—"कि आप आश्रमके झंझटोंमें फंसे रहनेपर ईश्वरका ध्यान कितने घन्टे कर पाते हैं ?"

"बाबाजी, अब ध्यान, पूजन, पठन सब कुछ छूट गया है" गुंसाईजीने उत्तर दिया।

"तो फिर आप अपनी पत्नीको वापिस बुलाकर यहाँ आश्रममें फिरसे प्रपंच क्यों नहीं शुरू कर देते ?"

गुंसाईजी बड़े चतुर थे, बाबाजीके कहनेका मतलब समझ गये और उसी दिनसे आश्रमकी सारी झंझटोंसे विमुक्त हो गए। इसके बाद आपने रामायण लिखना शुरू किया तथा अन्य ग्रन्थ लिखकर अपना नाम अमर किया। (मैं जब १९१६-१७ में कुत्ताबाबा नामक अवघड पंथी योगीके साथ काशीके सामने किलाराम नगरीमें रहा करता था तब उपरोक्त कथा हमेशा सुना करता था।)

दूसरा उदाहरण सिद्धारूढ स्वामीका है। आप कर्नाटक प्रान्तके धारवाड़ जिलेमें हुबली नामक शहरमें रहा करते थे। आप बड़े सिद्ध योगीश्वर और ज्ञानीपुरुष थे। आपने अपनी उमरके ४० साल ब्रह्मचर्यमें बिताकर योगाभ्यास और ईश्वर-ज्ञान प्राप्त किया था। हिन्दुस्थानमें जगह जगह परिभ्रमण करते हुए आप हुबलीमें जाकर बसे। आपके सिद्ध चमत्कार देखकर बहुतसे लोग दिन प्रति दिन आने लगे। स्वामीजी उस समय लोगोंको ज्ञानोपदेश दिया करते थे। उस समय स्वामीजी

एक पेड़के नीचे रहा करते थे। न आपके शरीर पर कोई वस्त्र ही था और न तो आपके पास सोनेके लिये कोई बिस्तर ही था। आपकी यह अवस्था देखकर लोगोंने आपके लिये मठ बांध दिया। बस, इसी समयसे आप मठकी झंझटोंमें फँस गये। लोगोंसे मिले हुए धनसे लाखों रुपये की इस्टेट बनाई और बड़े बड़े मकान बांधकर आप उनका किराया खाने लगे। धीरे धीरे मठमें बैंकके समान व्याजका व्यवहार भी आपने शुरू कर दिया। यह सब बातें धारवाड़के जिला कोर्टमें दर्ज हैं। लोगोंका कहना है कि इस प्रचंड सम्पत्तिके लोभमें आकर किसीने आपको जहर पिला दिया। इस प्रकार आपका देहावसान होनेके पश्चात् आपके शिष्योंमें बड़े झगड़े उपस्थित हुए। बड़े आश्चर्यकी बात है कि जिसने बचपनमेंही मातापिता और घर-बारका त्याग कर दिया। परमेश्वर प्राप्ति कर ब्रह्मचर्य-जीवन बिताया। इस प्रकार जिसने आधी उम्र व्यतीत कर दी वही आगे चलकर मठ बाँधता है और सम्पत्तिके मोहमें फँसकर योगभ्रष्ट होकर ज्ञानभ्रष्ट हो जाता है।

इस राशिमें विशेष ध्यान देने योग्य बात यह है कि मनुष्य जितना ही आगे बढ़ता है उतनाही वह पीछे आता है। इस लग्नके लोग बड़ी बड़ी संस्थाएँ स्थापन करते हैं। परंतु ये संस्थाएँ उन व्यक्तियोंके जीते रहने तक सुव्यवस्थित चलती हैं। किन्तु उनके देहावसानके पश्चात् बरबाद हो जाती हैं। स्वर्गीय महामना पंडित मदनमोहन मालवीयजी और बाबू अरविन्द घोष ये दो ही महापुरुष ऐसे हैं कि इस बातके अपवाद हैं। पंडित मालवीयजीका कर्क लग्न है। आपने बनारस हिन्दु युनिवर्सिटी प्रस्थापित कर अपना नाम अजरामर किया है। आपने लोगोंसे जो कुछ समय समय पर धन इकट्ठा किया है वह सब हिन्दु युनिवर्सिटीकी उन्नतिके लिए। आपका आचरण योगीके समान था।

दूसरा उदाहरण बाबू अरविन्द घोषका है। आपने बचपनसे ही उच्च शिक्षा प्राप्त करनेके लिए इंग्लैंडमें वास किया था और अन्तमें आपने ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटीकी अत्युच्च डिग्री (M. A.) प्राप्तकी। वहाँसे लौटकर आप अपने देशमें आये और बड़ौदा स्टेटमें कुछ दिनों तक नौकरी की। इसके बाद आप कलकत्ता आये और 'कर्मयोगी' नामक पत्र शुरू किया। बादमें माणिकतल्ला बमकेसके सिलसिलेमें आप पर मुकद्मा चला परन्तु निर्दोष छूट गये। इसके पश्चात् आप पाँडीचेरीमें आये और वहाँ एक गिरिगह्वरमें योगाभ्यास करते रहे। वहाँ उन्होंने 'वेदान्त आर्य' नामक एक मासिक पत्रिका अंग्रेजी भाषामें शुरूकी। भगवद्गीतामें १० वे अध्यायमें श्रीकृष्ण भगवान्ने कहा है—"यद्यद्विभूति मत्सत्वश्रीमदूर्जित-मेववा। तत्तदेवावगच्छत्वं मम तेजोंशसंभवम्।" (अर्थात् जो जोभी विभूतियुक्त अर्थात् ऐश्वर्ययुक्त एवं कान्तियुक्त और शक्तियुक्त वस्तु है, उसको तू मेरे तेजके अंशसे ही उत्पन्न हुई जान) आपको यह पूर्णतः लागू होता है।

सिंह (स्वामी रवि Universal father)—राशिचक्रमें यह पांचवीं राशि है। जिस प्रकारसे वनमें सिंह पशुओंका राजा है उसी प्रकार मनुष्योंमें सिंह राशि राजा है। कर्क राशिने सिंहको राजा बनाया और आप स्वयं रानी बन बैठी। इस प्रकार दोनोंने मिलकर राज्य का कारोबार देखना शुरू कर दिया। बादमें मंत्रिमंडल नियुक्त किया गया। पहले फौजी विभाग (Military Department) खोल गया और बादमें पुलीस विभाग। लोग सुख शान्तिपूर्वक अपने अपने व्यवहार करते थे और रात्रिको सुखसे नींद लेते थे। इस समय मानव समाज पर सिंहराशिका अमल था। इस राशिका अमल कुक्षि और उदरपर है।

प्राचीन आचार्योंने इस राशिका वर्णन इस प्रकार किया है—स्थिर, निर्जल, भूमितलस्थ, अल्पप्रसव, चतुष्पाद, उष्ण, रुक्ष, अतितेज दिनकी अधिकारी, वन्ध्या, रंग हरा या लाल, Positive राशि, विषम राशि, दीर्घदेही, पुरुषराशि, पुरुषतत्व, पूर्व दिशा रजोगुणी, पशुराशि। रहनेकी जगह–घने जंगल और बड़ी कंदराएं और ऊँचे महल, अग्नितत्व। पिंड प्रकृतिका तत्व—तेज। हृदयका तत्व–विश्वास, रत्न—मणि और हीरा, रंग—संत्रेके समान, धातु—सुवर्ण, राशिका प्रधान गुण—राजा या प्रेसिडेन्ट। शारिरिक दृश्य—अपना तेज प्रकट करना। मानसिक दृश्य—धारणा शक्ति (Retentive Power) मूलस्वभाव—मिलनसार वृत्ति इस लग्नके लोग शारीरिक कष्टसे दूर रहना चाहते हैं। मजेसे खाना पीना और सोना इसीमें अपने जीवनकी इति-कर्तव्यता है ऐसी इनकी धारणा होती है। ये लोग पूर्व जन्ममें किये हुए पुण्य कर्मोंका फल चखते हैं। प्राथमिक जीवनमें जब आपदाओं और विपदाओंका सामना करना पड़ता है तो ये परिस्थितिसे दो हाथ करही लेते हैं। संसार त्याग कर भाग चलनेके लिये तैयार नहीं होते। यही कारण है कि ये लोग योगी नहीं हो पाते बल्कि राष्ट्राधिपतिके योग्य होते हैं। पंडित जवाहरलाल नेहरू सिंह लग्नके होनेके कारण दो बार राष्ट्राधिपती हो चुके हैं।

कन्या—राशिचक्रमें कन्या राशि छठवीं है। सिंह राशि पति है, कर्क पत्नी और कन्या इनको लड़की है। इस प्रकार हम देखते हैं कि राशिचक्रमें यह दूसरा परिवार (Family) है और इसे राजकीय कुटुम्ब कहते हैं। हम यह देख चुके हैं कि सिंह राशिमें राज्यकी प्रस्थापना हुई और उस समय कुछ विभाग (Department) भी खोले गये थे। इसके पश्चात पब्लिकवर्कस् डिपार्टमेंट, सेक्रेटरिएट, जंगल विभाग, ज्योतिष तथा दर्शन शास्त्र, लॅन्ड रेवेन्यू कोड, विज्ञान,

केमिस्ट्री, फिजिक्स और सर्वे विभागका प्रादुर्भाव हुआ। इस राशिमें सिव्हिल लॉ अस्तित्वमें आया। व्यापारकी उन्नती हुई, लेनदेनके लिये मुद्राका प्रचार हुआ, जमीनोंकी खरेदी और बिक्रीके व्यवहार भी शुरु हुए और वह व्यवहार रजिस्टर कराने के लिये रजिस्ट्रेशन कोर्ट भी खोले गये। इसी समयसे व्यापार और जमीनकी लेनदेनमें लोगोंमें झगड़े होने लगे। इसी समय समाजकी व्यवस्था सुचारू रूपसे चलनेके लिए कुछ सामाजिक बंधन समाजपर डाले गये। इस राशिका अमल कमरपर है।

इस राशिमें एक बड़ा ही विचित्र गुण धर्म होता है। इस लग्नके लोग या तो कई विवाह करते हैं, या आजन्म अविवाहित रहना पसन्द करते हैं या तो व्यभिचारी होते हैं या नैष्ठिक ब्रह्मचर्य जीवन बिताते हैं। ये वेदान्तके विषयमें केवल बकवास ही करना जानते हैं दूसरों पर विश्वास रखनेकी इच्छा नहीं होती, चिकित्सा बुद्धि अधिक होती है। नास्तिक होते हुए भी बहुत ढकोसले करते हैं। यही इस राशिका प्रकृति स्वभाव है। इस समय मानव समाज पर कन्या राशिका अमल था। इस राशिका प्राचीन आचार्योंने जो वर्णन दिया है वह इस प्रकारका है।

द्विस्वभाव, ठंड उदासीन, वन्ध्या, रात्रिकी अधिकारी, रंग नीला काला अभावात्मक (Negetive) राशि पृथ्वीतत्व, जलाश्रयी द्विपाद अल्पप्रसवा, समराशि, दीर्घदेही; स्त्रीराशि, स्त्रीत्व, दक्षिण दिशा, मध्यान्हके समय अन्धस्थिति, तामसी स्वभाव मनुष्यराशि। रहनेकी जगह—जंगल, स्त्रियोंके साथ क्रीड़ा करनेका स्थान, प्रकृतिका मूल तत्व—शुद्धता, हृदयका मूल स्वभाव—कर्तव्य, रंग—पीला, ज्यास्पर हायसिंथ धातु—पारा, इस राशिका प्रधान गुण—कारीगर या समालोचक,

शारिरिक दृश्य—शरीरकी देखभाल करना, मानसिक दृश्य–विवेक राशिका मूल स्वभाव—बहुत विचार करना।

इस लग्नके लोग शारीरिक सुखको अधिक महत्व देते हैं व शारिरिक कष्ट नहीं उठाना चाहते। आपदाओं विपदाओंसे संत्रस्त होकर भागना चाहते हैं। कहीं भी घूमना, खाना, पीना और सोना यही इनका जीवनक्रम रहता है। न तो प्रपंचमें ही इनका दिल लगता है न परमार्थ में ही, इसी लिए इन्हें वैराग्य प्राप्त नहीं होता। वेदान्त पर चर्चा बहुत अच्छी तरहसे करते हैं, ईश्वरकी उपासनामें भी ये दिलचस्पी लेते हैं, फिर भी ये योगी नहीं हो पाते। इनका मन ज्योतिष, उपासना तथा वेदान्तमें अधिक रमता है।

इनका स्वभाव बड़ाही अविस्वासी होता है। कारण ये बड़ेही चिकित्सक होते हैं।

तुला (स्वामी-शुक्र)—राशि चक्रमें यह सातवाँ राशि है। इस राशिका बस्तीपर अमल होता है। हम यह देख चुके हैं कि कन्या राशिमें व्यापारकी उन्नति हुई और लेनदेनके व्यवहार भी बढ़ने लगे थे। इन व्यवहारोंमें झगड़े उपस्थित होने लगे थे। जिसका फैसला करनेके लिये अदालतें अस्तित्वमें आईं। धीरे धीरे लोगोंने कायदे व कानून सीखना शुरू किया, विश्वविद्यालयोंका निर्माण हुआ, व्यापारमें उन्नति होने लगी।

कायदा व कानून बनाकर स्त्री–पुरुषके सम्बंध दृढ किये गये। उसी तरह वैवाहिक बन्धन भी पक्का किया गया। इस राशिमें स्त्री–शिक्षा (Women Education) का प्रारंभ हुवा। इस समय शिक्षाके दो प्रकार अस्तित्वमें थे। पहला राजकीय और दुसरा वेदान्त, काव्य आदिसे सम्बन्धित। पहले प्रकारके उदाहरण नीचे दिये हुए हैं – छत्रपति

श्री शिवाजी महाराजकी राजमाता देवी जिजाबाई, पत्नी सईबाई, संभाजी महाराजकी पत्नी येसुबाई, तंजावरकी महारानी दीपाबाई, महारानी ताराबाई (Founder of The Kolhapur State) झांसीकी रानी लक्ष्मीबाई, देवी अहिल्याबाई होलकर, उमाबाई दाभाडे, कर्नाटककी वीर-वनिता कित्तूर चन्नमा, सावित्रिबाई थानेदारिन, बंगालकी रानी भवानी, मेवाडकी महारानी कर्णावती, महारानी दुर्गावती, रानी कुरमदेवी, देवलदेवी, जवाहरदेवी, ऋग्वेदमें विश्पलाखेल नामकी स्त्री, विदुला आदि इन सब स्त्रियोंने राज्य शासन किया है। ये नारियाँ युद्ध कला निपुण थीं। सुलभा, मैत्रेयी, गार्गी आदि स्त्रियां वेदान्तमें प्रवीण थीं। महानुभाव-पंथीय महदांबिका, कमलांबा हिराम्बा, कल्याणदेवी, सीतादेवी आदि स्त्रियोंकी गणना कवियित्रियोंमें थी। उसी तरह दरभंगाकी महारानी लक्ष्मीदेवी बड़ी भारी पंडिता थी। इन्होंने एक स्मृति ग्रंथ लिखा है। ये सब दूसरे प्रकारकी शिक्षाके उदाहरण हैं। इस समय मानव समाजपर तुला राशिका अमल था। प्राचीन आचार्योंने इस राशिका वर्णन इस प्रकार दिया है:—

चर, उष्ण आर्द्र, आरक्त, साम्पातिक, मनुष्यराशि, दिनकी, रंग काला, (Fast blue) भावात्मक (Positive) राशि, वायुतत्व, द्विपाद, निर्जल भूमितलस्थ साधारण प्रसव, वक्तृत्वकारक, विषमराशि, मध्यान्हके पूर्वमें बधिरास्थिति, दीर्घदेही पुरुष राशि, पुरुषतत्व, पश्चिम दिशा, रजोगुणी पक्षिराशि। रहनेका स्थान—बड़ेबड़े बाजारोंमें, वर्ण—नीला। रत्न—हिरा और ओपल। धातु—तांबा, राशिका प्रधान तत्व—सौंदर्य। आत्माका प्रधान तत्व—मिलनसार वृत्ति, शारिरीक दृश्य—समता, मानसीक दृश्य—समतोल वृत्ति (Balanced) राशिका प्रधान गुणधर्म—राजनितीज्ञ, मेरी रायमें—न्याय देना, इस राशिका अमल त्रिकास्थिपर है।

इस राशिमें शारिरिक तपश्चर्या करनेके योग्य गुणधर्म वर्तमान नहीं हैं। वेदान्त और योगाभ्यासमें गुरुके उपदेशोंपर विश्वास रखने की आवश्यकता होती है। परन्तु इस राशिमें स्वयं विचार करनेका तथा वाद-विवाद करनेका स्वभाव होनेके कारण इस लग्नके लोग गुरूकी बातों पर विश्वास रखनेके लिये तैयार नहीं होते। "तपस्य फलभिच्छन्ति, तपनेच्छन्ति मानव" अर्थात् बिना तपश्चर्याके लोग मोक्ष प्राप्त करना चाहते हैं, इसलिये ये योगी नहीं हो पाते, हां वेदान्तपर प्रवचन देनेमें जरूर निष्णांत होते हैं। यदि सौभाग्यसे इन्हें कोई गुरु मिल जाय तो ये राजयोगी हो जाते हैं। यह राशि कुटुंबपति है एवं राशि चक्रमें यह तीसरा कुटुम्ब है।

इस लग्न में स्वर्गीय पू० महात्माजी और बङ्गालके सुप्रसिद्ध भगवान निमाई उर्फ गौरांग प्रभु पैदा हुए थे। फिर महात्माजी शान्ति त्याग और अहिंसाके लिये आमरणांत भरसक प्रयत्न करते रहे तथा उपोषण द्वारा अपने शरीरको बहुत कष्ट देते थे। किन्तु वे योगी नहीं थे।

वृश्चिक—(स्वामी मंगल) राशिचक्रमें वृश्चिक आठवीं राशि है। इस राशिमें युद्ध करना तथा दूसरों पर अमल करना आदि गुणधर्म पाये जाते हैं। इस समय रसायनशास्त्रमें प्रगति हुई, शारिरीक शास्त्र (Anatomy) व कुछ अन्य शास्त्रोंका प्रादुर्भाव हुआ। औषधि-विज्ञान (medical science) में अनुसन्धान होने लगे थे और इन्जेक्शनका आविष्कार किया गया था। अब मानव समाज प्रगतिके पथ पर एक एक कदम आगे बढ़ने लगा था। पति (तुला राशि) का संसार करते करते वृश्चिक राशि ऊब गई, कई आपदाओं और विपदाओंका सामना किया, विविध कष्ट सहन किये, किन्तु उसे शान्ति-लाभ न हुआ। इससे हृदयमें वैराग्य भाव जागृत हुए और वह जंगलमें जा

बसी। इस समय मानव समाज पर वृश्चिक राशिका अमल था। इस राशिका अमल गुद् और लिंगपर है।

इस राशिका वर्णन प्राचीन आचार्योंने इस प्रकार किया है— स्थिर-ठंड, रात्रिकी राशि, कफात्मक, रंग—पीला, विषकी राशि, Negetive जलतत्व, जलचर, (मेरी रायमें निर्जल भूमितलस्थ), बहुप्रसव मूकराशि, समराशि, दोपहरके पहले बधिर, दीर्घदेही स्त्रीराशी, स्त्रीत्व, उत्तरदिशा तामसी, कटिराशि, **निवास स्थान**-पत्थरके नीचे, घरके कोनेमें, **वर्ण**-काला और हरा मिश्रित, **राशिका प्रधान गुणधर्म**-न्याय, **हृदयका तत्व**-सत्ता, **रत्न**-टोपाझ मेलाचिट, **धातु**-फौलाद, **शारीरिक दृश्य**— क्रोधमें जलना (To burn with fury) **मानसिक दृश्य**-निश्चय, निग्रह, **राशिका प्रधान लक्षण**-इन्स्पेक्टर और गव्हर्नर, **राशिका मूल स्वभाव**—कष्ट सहन करना हठ और निग्रह।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस राशिका मूल स्वभाव कष्ट उठाना है। शान्ति प्राप्त करनेके लिये यह राशि जंगलमें जाकर हठयोगका अभ्यास करती है। हठयोगके अभ्याससे आत्मज्ञान प्राप्त नहीं होता। इस राशिके लोग आसन, प्राणायाम, मुद्रा, धौती आदि शारीरिक व्यायाम कर कुंडलिनीको जगाते हैं। किन्तु इससे इन्हें आत्मज्ञान नहीं मिलता। भगवद्गीतामें ठीक ही कहा गया है—"मनुष्याणांसहस्रेषु: कश्चिद्यतति सिद्धये। यतत्तां मपि सिद्धानां कश्चिन्मांवेत्ति तत्वत:॥ अर्थात हजारों लोग परमार्थ मार्गका अवलंब करते हैं किन्तु उनमेंसे विरला ही सिद्ध पुरुष होता है, ऐसे हजारों सिद्ध पुरुषोंमें कोई ही पुरुष मुझे जान पाता है।

उपरोक्त विवेचनसे एक बात सुस्पष्ट होती है कि कुण्डलिनीको जगाने (उर्ध्वगति देकर) एवं ब्रम्हरन्ध्रमें उसे स्थिर करनेके बाद ही

योगी आत्मज्ञान प्राप्त करनेके योग्य होता ह। इस राशिके योगी दाढी, जटा बढ़ाते हैं, शरीरपर भस्म लगाते हैं और ध्यान लगाकर बैठते हैं किन्तु ये आत्मज्ञान पानेके पात्र नहीं होते।

धनु—राशि (स्वामी गुरु) राशिचक्रमें यह नववीं राशि है। मानवसमाज शनैः शनैः सब शास्त्रोंमें प्रगति प्राप्त करते चला और Ph.D D. Litt, D. Sc, L.L.D, M. D, D. S ऐसी विशेष योग्यताएं भी उसने प्राप्त कीं। इस राशिमें ज्ञानकी परिणत अवस्थाको मनुष्य प्राप्त होता है। वृश्चिकमें हठयोग कर मानवप्राणी थक जाते हैं किन्तु कई जन्मके उपरांत ही उन्हें सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है। "बहुनां जन्मना मन्ते ज्ञान वान्मां पपद्यते" वेदान्तके ज्ञानार्जनसे ही सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है; हठयोगसे नहीं। जब मानवप्राणीको हठयोग करके ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ तब उसे गुरु मिले और उन्होंने "ॐ तत्सत्" यह मंत्र दिया। प्राचीन कालमें जब शास्त्रोंका अध्ययन कर लोग शास्त्रपारंगत होते थे तब उन्हें आचार्य, न्यायतीर्थ, तर्करत्न, पंचानन आदि उपाधियाँ दी जाती थीं। यह राशि जंघापर अमल करती है।

इस राशिका वर्णन प्राचीन आचार्योंने इस प्रकारसे किया है—द्विस्वभाव, द्विपाद्, निर्जलभूमितलस्य, अग्नितत्व, उष्ण, रूक्ष, दिनकी राशि, रंग—हरा और लाल मिश्रित Positive, वन्ध्य (Barren) द्विशरीरी, विषमराशि, पुरुषराशि, पुरुषतत्व, दोपहरके बाद बधिरावस्था, राशिकी संधी (Joint) में पंगु, मध्यमदेही पूर्वदिशा, सत्वगुणि, **निवासस्थान**—अश्व, गज, रथशाला, **प्रधानतत्व**—ज्ञान, **हृदयका गुणधर्म**—कानून और आझादी। **रत्न**—कारबंकल टर्काइज, **रंग**-सफेद या नीला। **धातू**-टीन। **शारिरिक दृश्य**-भटकना। **मानसिक दृश्य**-नवनवोन्मेषशाली। **प्रधान लक्षण**-साधु या गव्हर्नर जनरल, **राशिका मूल स्वभाव**-ज्ञान और पशुवृत्ति।

हम देखते हैं कि वृश्चिक राशिमें हजारों मनुष्योंमें कोई ही मनुष्य परमेश्वर प्राप्तिके लिए यत्न करता है और उन यत्न करनेवाले योगियोंमें भी कोई ही पुरुष परमेश्वरके यथार्थ मर्मको जान पाता है। ऐसे लोग जो परमेश्वर प्राप्तिके लिये यत्न करते हैं, सिद्धि प्राप्त करनेके बाद भी कनक कामिनीकी वासना न मिटनेके कारण पुनः प्रापंचिक उलझनोंमें उलझ जाते हैं जिसका नतीजा यह होता है कि वे योग भ्रष्ट होते हैं। इस तरह योगभ्रष्ट हुए पुरुष शुद्ध आचरण वाले श्रीमान पुरुषोंके घरमें जन्म लेते हैं "शुचिनां श्रीमंता गेहे योग भ्रष्टोऽभिजायते"। इसका अर्थ यह होता है कि योगभ्रष्ट होनेके बाद उनके मनमें स्त्रीभोगकी लालसा अतृप्त रह जाती है और उसे पूर्ण करनेके लिये वे ऐसे घरमें जन्म लेते हैं। फिर बाल्यकालसे ही स्त्रियोंके साथ पशुके समान (He goat, Male, dog, a bull not Castrated) बर्ताव करते हैं। पशुओंकासा कामी होकर अनेक स्त्रियोंके पीछे लगते हैं। इस जन्ममें इतना ही कार्य करते हैं और अन्तमें देहावसान होनेके बाद फिरसे नया जन्म प्राप्त करते हैं। अनेक जन्मजन्मांतरसे ज्ञान प्राप्तिके प्रयत्न करते करते थकते हैं; फिर भी उनके हृदयमें ज्ञान प्राप्तिकी अभिलाषा प्रज्वलित ही रहती है। इसी कारण वे अन्तमें जन्मजात (Born) ज्ञानी होते हैं। इस प्रकारसे हम देखते हैं कि इस राशिमें दोनों भी गुणधर्म (ज्ञान और पशुवृत्ती) विद्यमान हैं। इस राशिका पिंड स्वभाव जन्मजात होता है; कष्ट साध्य नहीं। (Born not made)

तुला राशि पती, वृश्चिक पत्नी और धनु पुत्र है। इसीलिये तुलाराशि और वृश्चिक राशिके गुणधर्म धनु राशिमें उतर गये हैं। विश्व कुटुम्बमें यह तीसरा कुटुम्ब है और यह कुटुम्ब पारमार्थिक होता है।

मकरराशि (स्वामी शनि)—राशिचक्रमें यह दसवीं राशि है। कर्क और सिंह इन दो राशियोंने राज्यकी प्रस्थापना की; तो मकर राशिमें साम्राज्य विस्तारकी लालसा उत्पन्न हुई और उसने साम्राज्य बढ़ाना आरंभ किया। पाश्चात्य लेखक W. C. Taylor ने अपने Ancient History of Greece नामक ग्रंथमें इस विषय पर बहुत कुछ लिखा है। प्राचीन कालमें हिन्दू लोग सारे संसारमें बसे हुए थे एक भी ऐसा प्रदेश बाकी न था जहां ये लोग न बसे हुए हों। फिर यह बड़े अचरजकी बात है कि यदि इन्हें जलयान (Ship) मालूम न था, तो ये लोग समुद्रमार्गसे दूसरे देशोंको किस प्रकारसे गये ?

मानव–समाजके कल्याणके लिये बड़ी बड़ी संस्थाएँ अस्तित्वमें आई, धर्ममें पंथ निर्माण हुए लेकीन ये कलहके कारण हुए। कर्मकांड प्रचारमें आया। ज्ञानका मार्ग अवरुद्ध हुआ। इसी समय एक ऐसे महा-पुरुषने जन्म लिया कि जिसने पुनः कर्मयोगका प्रचार किया। Elinor Kirk अपने ग्रंथमें लिखते हैं–" Best benefactor of the world come From this sign " विदेशसे व्यापारिक सम्बंध बढ़ने लगे यहाँ तक कि परराष्ट्र मंत्रि (Foreign Minister) का ऑफीस खोला गया। राज्यमें बहुतसे सुधार किये गये। इस समय मानव समाज पर मकर राशिका प्रभाव था।

प्राचीन आचार्योंने इस राशिका स्वरूप वर्णन इस प्रकारका किया है:-चर, ठंड, रूक्ष, रात्रिकी राशि, उदासीन, रंग–काला या पिला, अभावात्मक (Negative) जलराशि, चतुष्पाद, जल चर, साधारण प्रसवराशि, समराशि, स्त्रीराशि, स्त्रीतत्व मध्यान्हके बाद बधिर राशि की सन्धिमें पंगु, मध्यम देही, दक्षिण दिशा–जानु पर अमल करती है, तामसी, पशुराशि, (मेरी रायमें यह कीटराशि है। पाश्चात्य

ज्योतिषी इसे भूमिराशि मानते हैं। आर्य ज्योतिषशास्त्रमें इसे जलराशि माना गया है। मुझे यही ठीक जँचता है; पाश्चात्य मतसे मैं सहमत नहीं हूँ। उसी तरहसे पाश्चात्य ज्योतिषशास्त्रकारोंने वृश्चिक राशिको जलराशि कहा है जोकि मेरी रायमें भूमिराशि है) **निवासस्थान**–नदी और समुद्र, **इस राशिका प्रधान तत्व** – श्रद्धा, **हृदयका गुणधर्म** He wants Fineness in every thing (अर्थात वह हर एक चीजमें सुधारना चाहता है) **रत्न**–आइंक्स मूनस्टोन, **रंग**–हरा, **धातु**–शीसा, **शारीरिक दृश्य**-स्फूर्तिप्रद, **मानसिक दृश्य**–एकाग्रचित्तवृति, **राशिका प्रधान लक्षण**–परराष्ट्रीय वकील, **राशिका मूल स्वभाव**–हरएक कार्यमें अग्रस्थान प्राप्त करना।

इस प्रकारसे हम देखते हैं कि इस राशिमें लोग किसी भी बात पर विश्वास नहीं रखना चाहते। इनके खानेके दांत अलग होते हैं और दिखलानेके अलग। सुखासीन वृत्ति होनेके कारण विपात्तियाँ आने पर घरमें बैठे बैठे आंसू ढालते हैं। घर छोड़कर भागनेकी इच्छा नहीं होती बल्कि आत्महत्याके विचार मनमें आते हैं। यही कारण है कि इस राशिमें वैराग्य प्राप्त नहीं होता। ये लोग अति अहंकारी होते हैं; खुदको महापंडित समझते हैं। इसी कारण ये योगी नहीं हो पाते और परमेश्वर प्राप्तिका मार्ग पानेमें असफल रहते हैं। ये बहुत ही लोभी और स्वार्थी होते हैं। यह चार्चिल तथा दुर्योधनके से स्वभाव वाले होते हैं। हाँ, यदि इनमें दैवी गुणधर्म आ जाय तो आधिभौतिक दृष्टिसे संसारका कल्याण करते हैं अन्यथा दुनियाका नाश करते हैं। ये लोग बहुतसी सिद्धियाँ प्राप्त कर लेते और चमत्कार बतलाते, फिर पैसा धन इकट्ठा करते हैं। आत्मज्ञानसे वंचित रहते हैं।

कुंभ (स्वामी शनि)—राशिचक्रमें यह ग्यारहवीं राशि है। मकरराशिके अन्ततक संसारमें सारे क्षेत्रमें उन्नति हो चुकी थी। इस

सभी प्रकारके ज्ञान लोग प्राप्त कर चुके थे। वृश्चिक राशिमें हठयोग और योगबलसे सिद्धि, धनुराशिमें ज्ञान, मकरमें कर्मयोग, इन सबका संयोग राजयोगमें होता है। इस राशिमें यही राजयोग भोगना पड़ता है। अन्तमें लोभ व मोहके वशीभूत होकर फिरसे जन्म लेते हैं और सारा ज्ञान खो बैठते हैं एवं स्वार्थमय होकर अज्ञानियोंकी तरह बर्ताव करते हैं। मेरी रायमें यह निष्क्रिय जड़ व उदासीन राशि है। इस समय मानव समाज पर कुंभ राशिका प्रभाव था।

प्राचीन आचार्योंने इस राशिका वर्णन इस प्रकार किया है—स्थिर, उष्ण, आर्द्र, दिनकी राशि, रंग—अस्मानी (sky-blue) भावात्मक (positive) द्विपाद, वायुतत्व, जलाश्रयी साधारण प्रसव राशि, विषमराशि, ह्रस्वदेही, पुरुषराशि, पुरुषतत्त्व, पिंडालियाँ तामसी, वक्तृत्त्वशाली, मनुष्यराशि, **रहने की जगह**—जलके समीप, **राशिका प्रधानतत्व**—सत्य, **हृदयका गुणधर्म**—अनुसन्धान करना। **रत्न**—नील और ओपल। **रंग**—काला, लाल। **धातु**—अल्युमिनियम, **शारीरिक दृश्य**—तल्लीन होना, **मानसिक दृश्य**—नवीन चीजोंका अन्वेषण करना, **इस राशिका प्रधान लक्षण**—शास्त्रज्ञ, **राशिका मूल स्वभाव**—मानव्यता (Humanity.)।

हम देखते हैं कि यह राशि अपनेको स्वयंपूर्ण और ज्ञानी समझती है व दूसरों पर विश्वास रखना नहीं चाहती। शारीरिक परिश्रमोंसे दूर भागती है। ये लोग वादविवाद करने वाले (Argumentative) होनेके कारण योगी नहीं हो पाते। विज्ञान केमिस्ट्री और फिजिक्स इन शास्त्रोंमें ये लोग बहुत ही कम पाये जाते हैं—

मीन (स्वामी गुरू)—सृष्टिका नियम ही ऐसा है कि शान्तिके बाद क्रान्ति और निष्क्रियताके बाद सक्रियताका परिवर्तन हुआ करता है।

इसी तरह इस राशिमें पुनः जोरोंसे अन्वेषण होने लगे। मानव प्राणी पंचमहाभूतोंपर विजय प्राप्त करनेके लिये भरसक प्रयत्न करने लगे। धीरे धीरे रेडियो, हवाई जहाज, मोटर, रेल्वे, तारायंत्र, चित्रपट आदि आविष्कारोंका प्रादुर्भाव हुआ। इसी तरह मानव-जातिने बम, ॲटमबम, तोफ, टामीगन, ब्रेनगन, स्टेनगन, मॉरटर्स, लढाऊ जहाज, लढाऊ नौयान आदि बड़े बड़े संहार शस्त्र अस्त्रोंका आविष्कार किया। इस राशिमें प्रलयके गुणधर्म वर्तमान होनेके कारण स्वाभाविक ही पुरानी सृष्टिका विसर्जन कर नई सृष्टि निर्माण करने की मानवी प्रवृत्ति अन्तर्हित है। इस राशिका एक और विशेष गुणधर्म ऐसा है कि जिस दशामें पहले मानव समाज था, उसी दिशामें मानव समाजको ले जाने (Back to Nature) का प्रयत्न करती है। हम देखते हैं कि आधुनिक युगमें नग्नवाद (Nadism) का काफी बोलबाला हो रहा है। इस प्रकारसे यह राशि संसारको प्रलयावस्थाकी ओर ले जा रही है। एक अंग्रेजी ग्रन्थकार—सर जान वूड्राफ्फ (Sir John Woodrroff) कलकत्ता हायकोर्टके भूतपूर्व न्यायाधीश, अपने 'Is India Civilized?" नामक ग्रन्थमें लिखते हैं—'Civilization and barbarism are going hand by hand' इस प्रलयावस्थापर मीन राशिका प्रभाव है। हालमें मानव समाज पर इस राशीका अमल चल रहा है। और सन २१०० साल तक अमल रहेगा।

प्राचीन ग्रन्थोंमें इस राशिका वर्णन इस प्रकारसे किया है—द्विस्वभाव, ठंड, फलप्रद, कफात्मक, रात्रिकी राशि, अभावात्मक (Negative) जलतत्व बहुप्रसव, मध्यमदेही, उत्तरदिशा, पेर पर अमल करती है। समराशि, स्त्रीराशि; स्त्रीत्व कीटराशि, सत्वगुणी, निवास स्थान—जलाशय समुद्र या नदी, मूकराशि, द्विशरीरी। इस राशिका प्रधान तत्त्व-प्रेम। हृदयका तत्त्व-एकता (Unity), रत्न-क्रिसोलाईट और मूनस्टोन, रंग—

फीका सफेद, धातु–अल्युमिनम् शारीरिक दृश्य–आर्द्रता, मानसिक दृश्य–अन्तर्ज्ञान, मूल स्वभाव–पारमार्थिक, राशिका मुख्य तत्त्व–पारमार्थिक विचारोंमें निरत।

हम देखते हैं कि इस राशिके लग्नके लोगोंका स्वभाव सागरके समान होता है—बाहरसे सागरकी लहरोंसा चञ्चल किन्तु भीतरसे सागरके समान शान्त गंभीर व स्थिर होता है। ये विश्वासके योग्य, भक्तिमान् और गुरुपर श्रद्धा रखनेवाले होते हैं। इस राशिमें दो प्रकारके लोग पाये जाते हैं—एक आजन्म अविवाहित अर्थात् विषयसुखोंका पूर्णतः त्याग करनेवाले और दूसरे व्यसनाधीन। यह राशि हरएक चीजका लय करनेवाली राशि है। दूसरा गुणधर्म ऐसा है कि इस राशिके लोग जिस किसी भी विषयमें अपना ध्यान देते हैं उसमें शारीरिक आसक्ति छोड़कर तन्मय हो जाते हैं। यही कारण है कि ये योगी, संन्यासी, भक्तियोगी होते हैं और विदेही स्थिति प्राप्त कर लेते हैं। इस राशिमें अनासक्ति–योग होनेके कारण काव्य, गायन, योग आदि बातोंमें जिसमें अन्तःस्फूर्तिसे काम लिया जाता है, ये लोग पारंगत होते हैं।

कुंभ पति है, मकर पत्नी है और मीन लड़की है। इस प्रकारसे राशि चक्रमें यह चौथा कुटुंब है। इस राशिचक्रके चारों कुटुम्बोंसे

जिसको बारह राशियोंपर वेदान्त दृष्टिसे अधिक देखने की अभिलाषा है उन्हें नीचे दिये हुए ग्रंथोंपर विशेष ध्यान देना चाहिए यह विज्ञप्ति है।

1 The Esoteric Astrology by Alon Leo 2 The Elementary of Esoteric Astrology by A. F. Thierens Ph.D. 3 The Esoteric Astrology by Alvidas. 4 Secret Doctrins by Madam Blavatasky. 5 The Pathway of the Sole by Hanery J. Van Stone.

विश्वका नाटक खेला जा रहा है। इस परिच्छेदमें की गई चर्चाके अवलोकनसे पाठकोंको यह दिखलाई देगा कि केवल चार राशियाँ— कर्क, वृश्चिक, धनु एवं मीन, वेदान्त, योगमार्ग, भक्तिमार्ग तथा मोक्ष-मार्गके योग्य हैं शेष नहीं।

राशि अथवा भावके दृश्य

मेष—एक बहुत बड़ा शुभ्र उजले वर्णका, छोटे शिंग वाला, मोटे कंधेका; जिसकी आँखे लाल लाल हैं। जिसकी ऐंट मनको लुभानेवाली है। किसी पर्वतके ऊंचे शिखर पर सूर्याभिमुख होकर अभिमानके साथ दुनियाकी ओर देख रहा है परंतु उसकी ओर कोई नहीं देखता।

वृषभ—एक बहुत पुराना; कमसे कम पांच हजार वर्षका, अति प्राचीन वटवृक्ष नदीके तट पर खड़ा है। उसकी छायामें एक बाघ तथा गाय, एक दुसरेके सामने बैठकर आनंदसे विश्राम कर रहे हैं।

मिथुन—हर घंटेमें रंग बदलनेवाला गिरगिट।

कर्क—दो मुख तथा सात हाथ वाला एक मनुष्य खड़ा है। हँसते हुए एक मुँहसे कुछ खा रहा है और दूसरा मुँह क्रोधमें तमतमा रहा है।

सिंह—कोई सुंदर अर्ध अधिक उम्रकी स्त्री अपने छः सात महिनेके बच्चेके साथ प्रेमसे खेल रही है, वह बच्चेको बड़ी आनंदके साथ देख रही है और बारबार उसका चुंबन लिया करती है। उस स्त्रीका पति यह सब देखता हुवा आनंदसे आराम कुर्सी पर लेटा हुआ है।

कन्या—इसमें मुझे केवल अत्यंत तेजस्वी सूर्य दृष्टिगोचर होता है। किन्तु उसको प्रकाश नहीं।

तूल—किसी धर्मशाला (मुशाफिर खानेमें) के बीच बहुतसे आदमी इकट्ठे होकर बिना किसी कारणके धूमधाम मचा रहे हैं। ये सब लोग रेल गाड़ीमें बैठकर बहुत लंबी सफरके लिये निकले थे। गाड़ी बहुतसे चक्कर काटती हुई आगे बढी परंतु फिरसे कुछ देर बाद वह स्थल, वही लोग और वही रेलगाड़ी जैसे थे वैसे ही देख रहा हूँ।

वृश्चिक—इसमें मुझे स्पष्ट रूपसे कुछ भी नहीं दीख पड़ता केवल नौका केंद्र ९९९ दृष्टिगोचर होता है।

धनु—एक अति तेजस्वी प्रकाश, यह प्रकाश सूर्यका नहीं हैं और न चंद्रका। ऐसे प्रकाशमें एक बकरा अपनी कामेच्छा तृप्त करनेके हेतु दूसरे बकरे पर चढ़ा है। लेकिन इतने ही में किसी एक शिकारीने यह देख कर झट गोली चलाई और वह बकरा वहीं ढेर हो गया।

मकर—एक पागल कुछ सामान इकट्ठा कर रहा है।

कुंभ—किसी नवजवान बालकका नामकरण विधि हुवा। उस समारोहमें हजारों स्त्रियाँ इकट्ठी हुई थीं। उस बालकका नाम "विकास" रक्खा गया।

मीन—एक बड़ी भारी जल भरी हुई नदी बह रही थी पुराणों में राक्षसोंका वर्णन किया है वैसा कोई एक भयानक राक्षसका मुँड उस नदीमें बहता हुआ आया "मुझे पानी पिलाव, कुछ खाने को दो" इस प्रकार उस मुँडने चिल्लाहट शुरू की, मैं उस मुँडको पानी पिलाने और कुछ खिलानेके लिए उसके पास गया इतने ही में वह भयंकर विकट हास्य से हँसने लगा और हँसते हँसते अदृश्य हो गया। नदीका पानी सूख गया वहाँ कुछ खाने पीने तकके लिए नहीं रहा।

ऊपर हमने बारा राशीका जो दृश्य दिया है, इसका वेदान्तक दृष्टीसे क्या अर्थ होता है इसकी जाँच पाठकगण अपने मनमें करें यह नम्र निवेदन है।

SPIRAL OF EVOLUTION

I

Its etheric inpetus which, in the first house represents the solar impulse as well as Lunar note, will stamp, colour and attune the personality and, by element, and degree of Zodiacal sign, define the temperament; with it a good of physical and psychic health, as well as the way in which personality faces things and starts into action Initiative.

II

The magnetic conditions accompanying the personality are to be found in the second house and represent such quantities and species of the magnetic field of matter as are mastered by the personal self the mastership appearing from the fact that these magnetic conditions are actually brought down by the personal self or coupled with it. The quality imparted by these conditions is artistically, the degree and perticular line of which is shown by the element and degree of the Zodiacal sign on the cusp, the planatary ruler of it and planets in the house itself. Where and so far as artisticity is wanting, man is the slave of matter.

III

The dualism of the personal self, opening to the sound of not-self engenders intelligence and co-respondence; This is the significance of the Third house.

IV

As soon as co-respondence is awakened, the Imagination, i. e. the "how" on the substantial reflexion, comes to life together with it and, on account of the value of the preceding lunar horoscope; this fourth house, beca-

use house of the lunar sign cancer holds the faculty of memory and sole motives which will govern the actions; memories from former life conscious or subconscious and greatest memory of all Dharm or inner duty.

V

Inner duty compels the will, like, further on, the imagination will prove to be the matter of the wish and to govern the direction of the will. which, in the world of matter, being bound to an object, is no more "will" pure; but still holds creative power, This, and the specifications of the same, are indicated by the fifth house.

VI

The materials with which the will chooses to work, or which it has to accept in this world and in the present incarnation, decide the lines of work and the ways in which the personal self can make its efforts useful and remunerative. This is to be found in the sixth house.

VII

The work chosen decides the relations laid or contracted between the Self and the Not-Self, with the world around, and the rules set up, by the personal self for its conduct towards other people; these rules will preside over the partnerships (marriage) and antagonisms in life; Seventh house. It may finally mean that which is to drop away and the manner in which the life is ended

VIII

The relations again decide the experience earned and antagonism drives the personal self back from its expression throws it back upon itself; in both cases experience is gained.If the relations favourise the efforts of the self, the results of the eighth house is enjoying on the other hand being thrown back generally means

sufferings.So in a general way and in the first place this house indicates the lessons which life has in store for us. The final drive back means death.

IX

Experience and the sentiment of it decide the expressions and manifestations of the personal self, first in the world of though. Thus the ninth house holds the personal pushing power and the expression of desires and wishes. The way in which this is done is seen by the conditions of the house, zodiacal and planetary.

X

Expression and menifestation in the world of facts follows, and the personal attitude, its actual deeds and menifestations in the world are given by the tenth house. This again decides the social positions beeause,it is made up or merited by what we do.

XI

That which surpasses the personal doing, is in the first place the environment and our influence upon it, going out from the personality decides the people, whom we meet and, as Aquarius 'reacts in the right way' so the eleventh house indicates the people who will understand us.

XII

In the same way the twelfth house holds indication about the people who do not understand us or who react in the wrong way and will undo our efforts as far as they can. It indicates further way in which we will retire from the world and the susceptibility to corruption, a well as the solution of the life's problem.

SIGNIFICATIONS OF HOUSES.

I HOUSE.

Aries:- the Self or the thing itself, beginning, initiative the etheric impetus, consequently, in human and other iving being the expression of the etheric body this gives the tone inwhich the being is stringed and which is the best possible expression of the higher Self or Ego, have an Earth for the time.

II HOUSE.

Taurus:-the material ground or field of action in which the Self or thing itself is implanted, embeded, rooted, upon which it lives and fromwhich it draws, but which it rules at the same moment this means possession (capital)

III HOUSE.

Gemini:-- dualism to be or not to be the intellegence or intellectual motive in the Self or the thing itself.

IV HOUSE.

Cancer:- doubling the germ into a masculine and a feminine half thereby by opening two possibilities leading out from the Self

V HOUSE.

Leo:- the choice is made and will power incarnate, consequently the power behind coming action-

VI HOUSE.

Virgo:-the material means with which the creative power is associated and connected to work, the ways it will go and the detailed conditions with which it is bound up.

VII HOUSE.

Libra:- the other of the Self the thing we have to compete with, tne aim which the self or the thing itself has to reach, and eternal problem of equilibrium with regard to the perticular instance, consequently partnership, the law, the relation between the Self or the things its opposite, possibilities of execution, and realisation decline or menifastation.

VIII HOUSE.

Scorpio:-the thirst, the desire,or demand in the Self or the thing, and in consequence of this the way in which experience is sought and to be found, the school that is which is wanting and which is wished for the hidden motive.

IX HOUSE.

Sagittarius:- the thinking of the Self and the Self-expression of the thing the influence going out, Ideal or Idea, open expression of the aim, the force of Self renewal.

X HOUSE.

Capricorn:- the deed or action of the Self, circumscribed and concrete appearance by which the Self or the thing itself may be known to the outer world; consequently personality, name, title, position, or place in the world also the definitiens or circumscriptions this world impose and authorities which represent them, the coming event.

XI HOUSE.

Aquarius:- the co-operating surroundings of the appearing fact or personality, that which will help and that

which will carry on the same; reaction in a friendly way or direct line, including understanding.

XII HOUSE.

Pisces:– the final solutions of problems, but also solutions of existance from a certain form or definition. Consequently that which is inimical to the outer existance or the separate self and fact ete; reaction in the converse or wrong way by lack of understanding.

ARIES.

Avidya:–a blind she-camel, conducted by a driver who represeuts Karma; the camel vividly suggests the long and trying journey of the unconscious. Will across the desert vally or the shadow of Death.

Comment (by writer):-And the Ascendent at every new birth being the outcome of Karma.

TAURUS.

Samskaras:–" A Potter moulding the clay on his wheel " Can note The Clay of the universal soil (e. g. of a solar system) being moulded into forms by rotatary motion and cyclic evolution.

GEMINI.

Vijnana:–" Monkey " compare, Hanuman, and Osiris' servants.

CANCER.

Namarupa:–a doctor feeling a sick man's pulse: the pulse denotes the individuality, or the distinction between the Self and the Non-Self; variant a man shipped across an ocean" Comment; The human should carried into Earth life by the "Ship", or Matrix.

LEO.

Sadayatana:–A human face mask with a pair of large holes through which the eyes are radiating at this stage seems to be effected the full union of the hither to to passive will with the active co-efficients of a human Nature.

VIRGO.

Sparsha:- Kissing: variant a man holding a plough; Comment: The sign of sensing and of work; compares the Lover's card of the Tart.

LIBRA.

Vedana:– An arrow hitting the eye of a eye. Commentary; It means the arrow of light perceived by the orgen created from and for the light; compare Pletinus. Libra is the organic body.

SCORPIO.

Trishna:– "A man drinking wine". Comment: The Spiritual liquor from the seed and fruit of natural vegetation, consequently elixir, extract of Natural experience.

SAGITTARIUS.

Upadana:–"A man cutting fruits and gathering them into a large basket. Comment: The hunter for results cutting the fruits of the causes set to work by previously. The symhol implies a previous sowing of the seed or scaring of the tree.

CAPRICORN.

Bhava:– "a married woman" the wife of individual, whose life-history is being traced. Comment: It means above all the "personality" or personal mould "marr-

ied" to the Ego"; Compare the legend of Arjuna and his Four brothers all married to one women.

AQUARIUS.

Jati:– "A father with a child; it is the maturing of the man's life by the birth or a heir, and a result of the married existence in the tenth stage. Comment: Also the symbol of the carrying on humanity and human thought.

PISCES

Jaramaranam.–" A body that is being carried away to be burnt. Comment: The end of physical existence and its solution into the other again.

ARIES (SPIRIT)

Fire Potential: Universal Spirit, Origin and Subjective being absolute positivity, Will Supreme; Initiative. The Eternal Father (Parabrahman).

TAURUS (MATTER)

Earth Potential. Universal Matter, foundation and Objective being; Negative absonluteness, Possession. Supreme: Eternal Mother (Moolaprakriti)

GEMINI (LIFE)

Air Potential, Universal Life. Absolute relativity, Positive duality. (Fohat)

CANCER (SUBSTANGE)

Water potential, Universal substance, relative absoluteness negative duality (Svabhavat)

LEO (PRESENCE)

Fire Ideal, Universal presence, which means origina of individual being subjective. Individual centre and, as

far as dimension enters into being, infinitely small; Source of oneness in creation and of love with man. The Divine Spark (Atma)

VIRGO (CONSCIOUSNESS)

Earth Ideal, Universal consciousness, which means foundation of individual being objective, individual atom circumference of the infinitely small spark; source of multifarousness, and atomicitŷ, Source of sensation in Man. Virgin Matter.

LIBRA (RELATION)

Air Ideal, Universal Relation, Consequently Law, as the relationship between the One and the manifold, which is the source of Geometry and of Wisdom with Man, Life of the Soul (Buddhi).

SCORPIO (CONDITION)

Water Ideal; Universal Condition, by the attraction and binding of one and the Many together; Cosmic substance impregnated with will, Source of Desire in Man Spiritual Heaven.

SAGITTARIUS (MOTION)

Fire real, Universal Motion, consequently in every instance coupled with direction, Origin of causality and inspiration, thinking and intelligence in Man; execution of the will by moving to the Aim. This means Thought (Mahat. Higher Man–as)

CAPRICORN (FORM)

Earth real; Universal Formation, principles of resultant effect circumference of that which was made by motion; physics have proved in the electron theory that motion builds the form of the atom practically,

foundation of separateness and of personality (Ahamkar. Lower Manas).

AQUARIUS (APPEARANCE.)

Air real; Universal Manifestation, Origin of all cosmic induction and inter-relation; Pouring out of the life into the form and life within the form. Origin of intellegent life in Man, which is " Human nature. " The Astral Light.

PISCES (EXPERIENCE)

Water real, Universal experience; Cosmic substance out of which thought, by impregnating it, creates form. Consequently substantial relation between the universal and the perticular and therefore source or Feeling in Man. The Cosmic Ocean-

Elements of Esoteric Astrology.
Dr. A. F. Thierens. Ph. D.
pages 36-37 & 38.

The Motto and Chief Characteristics of Every Sign.

Aries:—Truth, Initiative, Simplicity and Assertiveness.

Taurus;-Faith, Richness, Vastness, Solidity.

Gemini:-Knowledge, Communication, Speed, Dualism, Reproduction.

Cancer:-Protection, Gathering, Reflextion.

Leo:-Power, All-roundness, Radiance, and Commanding Spirit.

Virgo:-Service, Differentiation, Utility, Ability, Discrimination.

Libra:-Equilibrium, Harmony, Law, and Mutual Relationship.

Scorpio:-Generation, Experience, Exploration, Exhortation.

Sagittarius:-Manifestation, Idealism, Execution and Sympathy.

Capricorn:-Excellence, Orderliness, Obedience. Comprihensibleness.

Aquarius:-Interdependancy, Friendliness, Reasonableness, Many sidedness.

Pisces:-Solution or Sacrifice, Animation, Fulfilment Communism.

यह मेषादि राशि संस्था हमारे हिंदु तत्वज्ञानमें नहीं बैठ सकती। इसका कारण यह है कि वेदान्तमें मानवी शरीर की उत्पत्ती पंच-महाभूतोंसे हुई है। आकाश, वायू, तेज, जल और पृथ्वी यह पंच महाभूत हैं। हमारा प्राचीन आयुर्वेद भी इस मतको सहमत है फिर यह राशिचक्र चार तत्त्वोंसे बना हुआ है। आकाश तत्व राशिमें नहीं है। कई विद्वानोंने लिखा है कि इस राशिचक्रकी उत्पत्ती अरबस्तान और युनानमें हुई है। अरबस्तानमें दुसरा एक शास्त्र बहुत पुराना है उसका नाम है रमल। इस रमलमें सोलह शकल होते हैं। इस रमल की उत्पत्ती भी चार तत्वोंपर हुई है। तेज, वायू, जल, पृथ्वी, इसमें भी आकाश तत्व नहीं है। नीचे देखिये रमल कैसे पैदा हुआ। रमल पैदा हुवा पौर्णिमासे। हरएक तत्वको एक२ बिंदू रख दिये इस तरकिसे पहले एक शकल तयार किये।

○ तेज
○ वायु
○ जल
○ पृथ्वी

इसका नाम रखे " तरीख " यह शकल पौर्णिमा बताता है। आगे एक२ बिंदूके सामने दूसरा बिंदू रख दिये उससे जमात शकल बन गया। देखिये इस जगह पर Geometry का सिद्धांत लगता है।

○ ○
○ ○
○ ○
○ ○

Point+Point make a line इसी सिद्धान्तसे यह जमात शकल बन गया। यह शकल अमावस्या दर्शाती है। इस दो शकलसे दुनियाँ पैदा हो गयी।

○ ○=—
○ ○=—
○ ○=—
○ ○=—
} ≡ यह बना जमात शकल

इसीसे यह ज्ञात होता है की अरब और युनानके लोग वेदान्तमें चार तत्वको मानते हैं। आकाश तत्वको मानते नहीं। इस कारण यह राशिचक्र हमारे वेदान्तमें बैठता नहीं। पाश्चिमात्य ज्योतिषी Alan Leo. Dr. Thierens and Hanery. J. Van Stone उन्होंने जो Esoteric Astrology लिखी है उसमें सब बुद्ध धर्मके वेदान्त का सहारा लिया है। यह ज्योतिषी बुद्ध फिलॉसॉफीके कट्टर अनुयायी होते हुए आप Theosophist कहलाते हैं। इन लोगोंने बारह राशिका जो वर्णन दिया है वह सब अंग्रेजी भाषामें जैसा है वैसा ही हमने इस परिच्छेदके आखीरमें दिया है।

परिच्छेद तेरहवाँ

राशियोंके स्वभाव

मेषादि बारा लग्नोंमें हरएक राशिमें तीन प्रकारके स्वभाव–गुण-धर्म पाये जाते हैं:—सात्विक, राजसी और तामसी। इसके और भी भेद होते हैं। सत्वमें दो भेद हैं—एक ईश्वरी और दूसरा दैवी। रजमें दो भेद हैं—एक मानवी और दूसरा पैशाचिक। तम एक प्रकारका होता है।

(१) **ईश्वरी गुणधर्म**—असामान्य गुणधर्म जिसमें ईश्वरका विभूतित्व अधिक होता है। केवल इतना ही नहीं, लोग तो ऐसे मनुष्यको साक्षात् ईश्वरका अवतार मानते हैं। ये स्वभाव और गुणधर्म साधु सत्पुरुषोंमें पाये जाते हैं (सत्व)

(२) **दैवी गुणधर्म**—ईश्वरी गुणधर्म की अपेक्षा इसका मूल्य कम होता है। ऐसे मनुष्योंमें ईश्वरका अंश अधिक मात्रामें होता है किन्तु इनके व्यवहार साधारण मनुष्यकेसे होते हैं (सत्व)

(३) **मानवी गुणधर्म**—इस संसारमें मानवी गुणधर्मयुक्त लोग बड़ी संख्यामें पाये जाते हैं। ये संसारमें निरत होकर उद्योग धन्धोंमें अपना जीवन मापन करते हैं और जीवनके अन्ततक ईश्वरी मार्ग खोजने की अभिलाषा नहीं रखते (रज)

(४) **पैशाचिक गुणधर्म**—इनका जीवन-क्रम देखनेसे इस बातका पता नहीं चलता कि ये लोग किस लिये पैदा हुये हैं क्योंकि संसारमें जिन्दगीके अन्ततक इन्हें नानाविध कष्ट उठाने पड़ते हैं (रज)

आसुरी गुणधर्म—ये लोग तामसी वृत्तिके होते हैं और इनके स्वभावसे अन्य साधु सज्जनोंको कष्ट पहुँचता है। इस प्रकारके लोग संसारमें प्रचुर मात्रामें दिखाई देते हैं। आसुरी गुणधर्मोंका अच्छा उदाहरण अंग्रेजों की प्रवृत्ति है। इस प्रकार हम देखते हैं कि ईश्वरी गुणधर्म छोड़कर आसुरी, दैवी, मानवी और, पैशाचिक स्वभाव गुणधर्म वाले लोग विपुल मात्रामें पाये जाते हैं।

ईश्वरी गुणधर्म—भगवद्गीतामें भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुनसे कहते हैं—" अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुणएवच। निर्ममो निरंहकारः समदुःख सुखक्षमी॥ संतुष्टः सततं योगीयतात्मा दृढनिश्चयः। मय्यर्पितमनोबुद्धिः। जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः॥ ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः। युक्तइत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकांचनः॥ सुहृन्मित्रार्यु-दासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु। साधुष्वपिच पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते॥

अर्थात् इस प्रकार शान्तिको प्राप्त हुआ जो पुरुष—सब भूतोंमें द्वेषभावसे रहित एवं स्वार्थरहित सबका प्रेमी और हेतुरहित दयालु है तथा ममतासे रहित एवं अहंकारसे रहित, सुखदुःखोंकी प्राप्तिमें सम और क्षमावान् है तथा जो ध्यानयोगमें युक्त हुआ, निरन्तर लाभहानिमें संतुष्ट है तथा मन और इन्द्रियोंको वशमें किये हुए मेरेमें दृढ़ निश्चयवाला है और मुझमें अर्पण किये हुए मनोबुद्धिवाला है जिसके अन्तःकरण की वृत्तियाँ अच्छी प्रकारसे शान्त है अर्थात् विकार—हीन है, ऐसे स्वाधीन आत्मावाले पुरुषके ज्ञानमें सच्चिदानन्दघन परमात्मा सम्यक प्रकारसे स्थित है और जिसका अन्तःकरण ज्ञानविज्ञानसे तृप्त है, जिसकी स्थिति विकार-रहित है, जिसकी इन्द्रियाँ अच्छी प्रकारसे जीती हुई हैं तथा समान हैं मिट्टी पत्थर और सुवर्ण जिसको वह योगी मुक्त अर्थात् भगवानकी प्राप्तिवाला होता है, ऐसा और कहा जाता है जो पुरुष सुहृद, मित्र,

वैरी, उदासीन मध्यस्थ, द्वेषि, बन्धुगणोंमें तथा धर्मात्माओंमें और पापियों-सेभी समान भाववाला है वह अति श्रेष्ठ है।

“यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः। हर्षामर्ष भयोद्वेगैर्मुक्तो ॥” अर्थात् जिससे कोई भी किसी जिवसे उद्वेगको प्राप्त नहीं होता तथा जो हर्ष, अमर्ष (क्रोध) भय और उद्वेगादिकोंसे रहित है।

“अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भ परित्यागी स त्यागीत्यभिदीयते ॥”

अर्थात् जो पुरुष आकांक्षाओंसे रहित तथा बाहर भीतरसे शुद्ध और चतुर है एवं पक्षपातसे रहित और दुःखोंसे छूटा हुआ है, वह सर्व आरम्भोंका त्यागी अर्थात् मन, वाणी और शरीर द्वारा प्रारब्धसे होनेवाले संपूर्ण स्वाभाविक कर्मोंमें कर्तापनके अभिमानका त्यागी कहलाता है।

“यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति” अर्थात् जो न कभी हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोच करता है, न कामना करता है।

“समः शत्रौच मित्रेच तथा मानापमानयोः। शीतोष्ण सुखदु.खेषु समः संग विवर्जितः। अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियोनरः ॥” अथार्त जो शत्रु मित्रमें और मानापमानमें सम है तथा शीत, उष्ण और सुख-दुःखादिक द्वन्द्वोंमें भी सम है और सब संसारमें आसक्तिसे रहित है, निन्दा और स्तुति दोनोंको समान समझनेवाला और मननशील है तथा प्राप्त परिस्थितिमें सदा सन्तोष माननेवाला और रहनेके स्थानमें ममता से रहित है यह स्थितप्रज्ञ एवं भक्तिमान् है। “अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्य परिग्रहः” जो काया वाचा मनसासे किसीको भी कष्ट न देता हो, सदा सच बोलता हो, दूसरोंकी चीजोंकी चोरी नहीं करता हो, किसीके द्रव्य या स्त्री की अभिलाषा मन में नहीं रखता हो, अष्टांग मैथुनसे दूर

रहता हो, जिन्दगीमें किसी भी चीज की आवश्यकता नहीं रखता हो और चाहे कितने भी कष्ट उठाना पड़े या नरकवास तक भोगना पड़े किन्तु दूसरोंका अकल्याणही करते हों वेही पुरुष ईश्वरी गुणधर्मोंसे युक्त कहलाते हैं ।

दैवि–स्वभाव—(सत्व Evolved type)

" अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् । आचार्योपासनंशौचं स्थैर्यमात्म विनिग्रहः । " अर्थात् श्रेष्ठताके अभिमानका, दम्भाचरणका अभाव, प्राणी मात्रको किसी प्रकार भी न सताना और क्षमाभाव तथा मन वाणी की सरलता, श्रद्धा, भक्तिसहित गुरुकी सेवा, बाहर भीतरकी शुद्धि, अन्तःकरणकी स्थिरता, मन और इन्द्रियोंसहित शरीरका निग्रह करना । " इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एवच । जन्ममृत्यु जराव्याधि दुःख दोषानुदर्शनम् " अर्थात् इस लोक और परलोकके सम्पूर्ण भोगोंमें आसक्तिका अभाव और अहंकारका भी स्वभाव एवं जन्म, मृत्यु, जरा और रोग आदिमें दुःख दोषोंका बारम्बार विचार करना । " असक्तिरनाभिष्वंगः पुत्रदारगृहादिषु । नित्यंच समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥" अर्थात् पुत्र स्त्री, घर और धनादिमें आसक्तिका अभाव और ममताका न होना तथा प्रिय अप्रिय की प्राप्तिमें सदा ही चित्तका सम रहना अर्थात् मनके अनुकूल तथा प्रतिकूलके प्राप्त होनेपर हर्ष शोकादि विकारोंका न होना । " निर्मानमोहाजितसंगदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्त कामाः द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःख संज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाःपदमव्यय तत् । " अर्थात् जिनका मान और मोह नष्ट हो गया है, जिन्होंने आसक्तिरूप दोष जीत लिया है और जिनकी परमात्माके स्वरूपमें निरन्तर स्थिति है तथा जिनकी कामना अच्छी प्रकारसे नष्ट हो गई है ऐसे वे सुखदुःख नामक द्वन्द्वोंसे विमुक्त हुए ज्ञानीजन, उस अविनाशी परमपदको प्राप्त होते हैं । " अभयं सत्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः । दानं दमश्च यज्ञश्च

स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ " अर्थात् सर्वथा भयका अभाव, अन्तःकरण की अच्छी प्रकारसे स्वच्छता, तत्त्वज्ञानके लिये ध्यानयोगमें निरंतर दृढ़ स्थिति और सात्विक दान तथा इन्द्रियोंका दमन, भगवत् पूजा और आविहित कर्मोंका उत्तम आचरण एवं वेदान्त शास्त्रोंके पठन पाठनपूर्वक, भगवत्के नाम और गुणोंका कीर्तन तथा स्वधर्म पालनके लिये कष्ट सहन करना एवं शरीर और इन्द्रियोंकेसहित अन्तःकरणकी सरलता।

" अहिंसा सत्यम क्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥ " अर्थात् मन, वाणी और शरीरसे किसी प्रकार भी किसीको कष्ट न देना, यथार्थ और प्रिय भाषण, अपना अपकार करनेवाले पर भी क्रोधित न होना, कर्मोंमें कर्तापनके अभिमानका त्याग एवं अन्तःकरण की उपरामता अर्थात् चित्तकी चञ्चलताका अभाव और किसी की भी निन्दादि न करना तथा सब भूतप्राणियोंमें हेतु-रहित दया, इन्द्रियोंका विषयोंके साथ संयोग होने पर भी आसक्तिका न होना और कोमलतां तथा लोक और शास्त्रसे विरूद्ध आचरणमें लज्जा और व्यर्थ चेष्टाओंका अभाव। " तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता। भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥ " तथा तेज क्षमा, धैर्य और बाहर भीतरकी शुद्धि एवं किसीमें भी शत्रुभावका न होना और अपनेमें पूज्यताके अभिमानका अभाव, यह सब दैवी सम्पदाको प्राप्त हुए पुरुषके लक्षण हैं।

मानवी स्वभाव (रजोधर्म) Evolved Type

मानवी स्वभावमें सत्व और रजा दोनोंके गुणधर्म वर्तमान होते हैं। संसारमें इस श्रेणीके लोग ही अधिकतर पाये जाते हैं और इनका स्वभाव भी मानवताकी सीमाके भीतर (Within the limits of huma-

nity) होता है। इनमें निम्नलिखित सर्व साधारण गुणधर्म पाये जाते हैं:— सबके साथ प्रेमका बर्ताव रखना, प्रापंचिक बातोंके प्रति आसक्तिका होना, अपनी स्त्री व अपने बालबच्चोंका प्यार करना, अपना स्वार्थ पहले देखकर फिर दूसरों पर उपकार करना, मनमें अहंकार व मानपमानकी सूक्ष्म कल्पनाओंको रखना, लोक कीर्तिके लिये हर प्रकारके प्रयत्न करना, स्वतंत्र वृत्तिका जीवन बिताना, अपने कार्यमें दूसरोंका हस्तक्षेप न चाहना, स्वतंत्र बुद्धिका होना, स्वकार्यशक्तिपर आत्मविश्वास रखना, सच्चे मार्गसे चलना, न्याय अन्यायका पूरा पूरा ख्याल रखना, दूसरों पर अपना रोब जमाना, अच्छे शीलका होना, मित्रों व गुरुजनोंसे प्रेमका बर्ताव करना, आपदाओं व विपदाओंमें हिम्मत न हारना, दिनरात अपने कामकाजोंमें निमग्न रहना और दूसरोंकी झंझटोंसे दूर रहना इत्यादि।

पैशाचिक स्वभाव (रजोगुणी)

पैशाचिक स्वभावके लोग बहुत ही हीन होते हैं और प्रपंचमें जन्मसे लेकर मृत्युतक असफल रहते हैं। इन्हें प्रपंचके लिए पैसा हमेशा अपूरा ही पड़ता है, फिर वे चाहे कितना भी कमावें। स्वतः की उन्नतिके लिये प्रयत्न करते हैं किन्तु अधःपतन ही होता है। प्रापंचिक जीवनमें दुःख और कष्टोंको सहन करना पड़ता है, कर्ज निकालकर जीवन निर्वाह करने की नौबत आती है। उद्योगधन्धोंमें हमेशा दीवाला निकलता है। इनमें स्वतंत्र धन्धा कर उपजीविका चलाने की प्रवृत्ति अधिकतर पायी जाती है। कर्जके कारण सिव्हिल जेलमें जाना पड़ता है। इनके कई बालबच्चे रहते हैं। ये सच्छील होते हैं, इसीलिये परनारी की ओर देखते नहीं। इनकी बुद्धिके कारण दूसरोंका कल्याण होता है किन्तु खुदका कल्याण नहीं होता क्योंकि इनकी बुद्धि इनके लिये मारक होती है। ये सदैव लोगोंका कार्य करते हैं। इस प्रकार त्रिविधताप

भोगते हैं और अन्तमें निराश होते हैं। इनके मुँहसे 'देहत्याग या देशत्याग' ये उद्गार निकलते रहते हैं।

आसुरी स्वभाव (तमोगुणी)

अंग्रेज लोगोंका स्वभाव आसुरी स्वभावका एक अच्छा उदाहरण है। इसी आसुरी स्वभावके कारण अंग्रेजोंने अपना साम्राज्य सारे संसारमें फैलाया है और अब साम्राज्य विस्तारकर काले लोगों (Black race) को गुलाम बनाये रखना चाहते हैं। आसुरी सम्पदाको प्राप्त हुए पुरुषके लक्षण नीचे दिये अनुसार होते हैं:—

"मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः। राक्षसी मासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥" अर्थात् जोकि वृथा आशा, वृथा कर्म और वृथा ज्ञानवाले, अज्ञानीजन, असुरोंके जैसे मोहित करनेवाले तामसी स्वभावको ही धारण किये हुए हैं।

"प्रवृत्तिञ्च निवृत्तिञ्च जना न विदुरासुराः। न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते। अर्थात आसुरी स्वभाववाले मनुष्य कर्तव्य कार्यमें प्रवृत्त होनेको और अकर्तव्य कार्यसे निवृत्त होनेको भी नहीं जानते हैं, इसलिये उनमें न तो बाहर, भीतर की शुद्धि है, न श्रेष्ठ आचरण है और न सत्य भाषण ही है। "असत्यं प्रतिष्ठते जगदाहुरनीश्वरम्। अपरस्परसंभूतं किमन्यत्कामहैतुकम्। अर्थात् तथा वे आसुरी प्रवृत्तिवाले मनुष्य कहते हैं कि जगत् आश्रयरहित और सर्वथा झूट एवं बिना ईश्वरके अपने आप स्त्री पुरुषके संयोगसे उत्पन्न हुआ है, इसलिये केवल भोगोंको भोगनेके लिये ही है, इसके सिवाय और क्या है ?

"एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः। प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः॥" अर्थात्—इस प्रकार इस मिथ्याज्ञानको अव-

लम्बन करके जिनका स्वभाव नष्ट हो गया है तथा जिनकी बुद्धि मन्द है ऐसे वे सबका अपकार करनेवाले, क्रूर कर्मी मनुष्य केवल जगतका नाश करनेके लिये ही उत्पन्न होते हैं। "काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः। मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः॥" अर्थात्, और वे मनुष्य—दम्भ, मान और मदसे युक्त हुए किसी प्रकार भी न पूर्ण होनेवाली कामनाओंका आसरा लेकर तथा अज्ञानसे मिथ्या सिद्धान्तोंको ग्रहण करके भ्रष्ट आचरणोंसे युक्त हुए संसारमें बर्तते हैं। "चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः। कामोपभोगपरमा एतावदितिनिश्चिताः॥" अर्थात् तथा वे :-मरणपर्यन्त रहनेवाली अनन्त चिन्ताओंको आश्रय किये हुए और विषय भोगोंके तत्पर हुए एवं इतना मात्र हा आनन्द है, ऐसे माननेवाले हैं।

"आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोध परायणाः। ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थ संचयान।" अर्थात–इसलिए–आशारूप सैकडों बन्धनोंमें बन्धे हुए और काम क्रोधमें परायण हुए विषय भोगोंकी पूर्तिके लिये अन्यायपूर्वक धनादिक बहुतसे पदार्थोंको संग्रह करने की चेष्टा करते हैं।

"इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम्।
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम॥"

अर्थात्—और उन पुरुषोंके विचार इस प्रकारके होते हैं कि—मैंने आज यह तो पाया है और इस मनोरथको प्रात होऊंगा तथा मेरे पास यह इतना धन है आर फिर भी कमाऊंगा।

"असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि। ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवानसुखी॥"—अर्थात्–तथा वह शत्रु मेरे द्वारा मारा गया और दूसरे शत्रुओंको भी मैं मारूँगा तथा मैं ईश्वर और ऐश्वर्यको भोगनेवाला हूँ और मैं सब सिद्धियोंसे युक्त एवं बलवान और सुखी हूँ

"आढयोऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया। यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञान विमोहिताः ॥" अर्थात्–तथा मैं—बड़ा घनवान् और बड़े कुटुम्बवाला हूँ मेरे समान दूसरा कौन है, मैं यज्ञ करूँगा, दान देऊँगा, हर्षको प्राप्त होऊँगा, इस प्रकारके अज्ञानसे मोहित होते हैं।

"अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः। प्रसक्ताः कामभोगेषुपतन्ति नरकेऽशुचौ ॥" अर्थात्, इसलिये वे—अनेक प्रकारसे भ्रमित हुए चित्त–वाले अज्ञानीजन मोहरूप जालमें फंसे हुए एवं विषय भोगोंमें अत्यन्त आसक्त हुए महान् अपवित्र नरकमें गिरते हैं।

"आत्मसंभाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः। यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम् ॥" अर्थात् तथा वे अपने आपको ही श्रेष्ठ माननेवाले घमण्डी पुरुष, धन और मानके मदसे युक्त हुए, शास्त्रविधिसे रहित केवल नाम मात्रके यज्ञों द्वारा पाखण्डसे यजन करते हैं।

"अहंकार बलं दर्पं कामं क्रोधंच संश्रिताः। मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः ॥" अर्थात्—तथा वे अहंकार, बल, घमण्ड, कामना और क्रोधादिके परायण हुए एवं दूसरोंकी निन्दा करनेवाले पुरुष अपने और दूसरोंके शरीरमें स्थित मुझे अन्तर्यामीसे (ईश्वरसे) द्वेष करनेवाले होते हैं।

सारांशमें, आसुरी सम्पदाको प्राप्त हुए पुरुषोंमें नीच लिखे आसुरी गुणधर्म पाये जाते हैं—मन की दुर्बलताका होना, अकर्मण्यताका होना, निरुद्योगी होना, नीचकर्मोंमें निरत रहना, दूसरोंके नाशमें आनन्द मानना, भाई भाईमें कलह मचाना, विरोधी आन्दोलनका नेतृत्व करना, दूसरोंके भाग्यचक्रके उदयसे ईर्ष्याका उत्पन्न होना, कटुवचन बोलना, विचित्र स्वभावका होना, हृदयमें शान्तिका अभाव, समाजका अहित करना, अपने सुखके लिये दूसरों की हानि करना, असत्य बोलना,

लोगोंको फँसाना, दूसरोंके बुरे व गुप्त कर्मोंमें ध्यान देना, अश्लील बातें करना, अविचार, घमण्ड व पाखण्डका होना, 'अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ संपदमासुरीम्" अर्थात् ईश्वर विषयक ज्ञानका अभाव होना आदि।

"दैवी संपद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता"—अर्थात् इन दोनों प्रकारकी सम्पदाओंमें—(दैवी और आसुरी)—दैवी सम्पदा तो मुक्तिके लिये और आसुरी सम्पदा जन्मपरम्परामें बांधनेके लिये मानी गई है।

इस संसारमें ईश्वरी और दैवी सम्पदाको प्राप्त हुए पुरुष अति अल्प मात्रामें पाये जाते हैं। कर्क और वृश्चिक लग्नके लोग दैवी स्वभाव वाले होते हैं और धनु व मीन लग्न के लोग ईश्वरी स्वभाववाले होते हैं ये लोग जब संसारका त्याग कर योगमार्ग या संन्यासमार्ग ग्रहण करते हैं और भगवद्भक्ति करते हैं तब ईश्वरी और दैवी सम्पदा इनमें पूर्णरूपेण निखर उठती है।

अब मैं मेष आदि राशियोंका स्वभाव वर्णन करता हूँः—संसारमें मेष राशिमें तीन प्रकारके लोग पाये जाते हैं:—सात्विक [:साधारण (Ordinary) सात्विक] रजोगुणी और तमोगुणी। पाश्चात्य ज्योतिष—ग्रन्थकार Alan Leo इन्होंने Individual और Personal ऐसे दो भेद किये हैं और Miss Isabelle M.Pagon इन्होंने Evolved type और Primitive type ऐसे दो भेद किये हैं। राजा भर्तृहरिने अपने 'नीतिशतक' में पांच भेद किये हैं—साधु, उत्तम मध्यम और कनिष्ठ। और 'तेकेन जानीमहे" ऐसा कहकर उन्होंने पाँचवा भेद अस्पष्ट ही रखा है। मैंने तीन प्रकारके भेद किये हैं।

मेषलग्न

सत्वगुणी स्वभाव—सरल चालचलन, शीलवान, वैराग्ययुक्त, भजन पूजनकी ओर आसक्ति, सत्कर्मोंमें साहसी, नेता होनेके लिये

बहुत कोशिश करते हैं किन्तु अनुयायी होते हैं और अपने नेता पर विश्वास करते हैं। प्रपंचमें अनासक्ति रखकर प्रापंचिक जीवन बिताते हैं। स्त्री और बालबच्चोंपर प्रेम करते हैं, संकटावस्थामें दूसरों की सहायता करते हैं, मित्र-परिवार बड़ा होता है, अपने उद्योगधन्धोंमें दक्षता रखते हैं, असत्य बोलना टालते हैं। इन्हें क्रोध आता ही नहीं और जब आता है तब शान्त होना भी कठिन होता है। अप्रिय किन्तु हितकर बात करते हैं, किये हुए उपकारका बदला नहीं चाहते ; वाणीमें मिठास होती है।

रजोगुणी स्वभाव—दूसरोंसे सम्मान की अपेक्षा करते हैं। ये शूर, विद्वान, गुरुपर प्रेम करनेवाले, किसी भी कार्यमें चतुर और दूसरों पर अपनी छाप जमानेवाले होते हैं। धर्म की राह पर चलते हैं, उपभोगमें कुशल और सुशील स्वभाव वाले होते हैं। ये दूसरोंपर उपकार करते हैं किन्तु साथ ही साथ उस उपकारका बदला भी चाहते हैं। बड़े बड़े लोगोंके साथ मित्रता रखना चाहते हैं। इनका मित्र-परिवार काफी बड़ा होता है। ये आस्तिक होते हैं और उपासना-मार्गका अवलम्ब करते हैं।

तमोगुणी स्वभाव—ये अपने बांधवोंसे द्वेष करते हैं, बहुत ही क्रोधी होते हैं और क्रोधमें अनर्थ मचाते हैं। दूसरोंसे कलह करते हैं और स्वजनोंसे तिरस्कार ही पाते हैं। दुष्ट लोगों की संगतिमें रहते हैं। ये परस्त्रीगामी, चंचल, दाम्भिक, दूसरोंको कष्ट देनेवाले और स्वयं सदैव असंतुष्ट रहनेवाले होते हैं। इन्हें खानेके लिये बहुत चाहिये। ये दूसरोंके मार्गमें रोड़े अटकाते हैं।

वृषभलग्न

सत्वगुणी स्वभाव—ये देवदेवता, गुरु और गुरुजनों पर भक्ति करते हैं और कोई भी कार्य स्थिरबुद्धिसे करते हैं। विषयोपभोगकी

और इनकी प्रवृत्ति कम होती है। ये साहसी, निर्लोभी, मृदुभाषी, त्यागी, क्षमाशील विश्वसूनीय और आस्तिक होते हैं। संसारमें क्लेश सहन करते हैं आप्तेष्ट जनोंपर प्रेम करते हैं और लोग भी इन्हें खूब चाहते हैं।

रजोगुणी स्वभाव—ये गुणवानोंके प्रेमपात्र, धनवान, शूर व संग्रामप्रिय होते हैं। राजकीय कार्योंमें भाग लेते हैं किन्तु उसमें आगे आनेकी हिम्मत नहीं करते। अपना स्वार्थ पहले देखकर फिर दूसरोंको लाभ पहुँचाते हैं। आप मित्रताके लिये सुपात्र, अतिमानी, बलवान्,आस्तिक धीमे स्वभाववाले और स्त्रियोंके प्रति आसक्ति रखनेवाले तथा अपने व्यवसायमें पर्ण निमग्न रहनेवाले होते हैं।

तमोगुणी स्वभाव—ये अति लोभी, क्रोधी, कृतघ्न, मन्दबुद्धि अधर्मी, अतिस्वार्थी, अतिकर्मठ किन्तु दाम्भिक नास्तिक और स्त्रीके वशमें रहनेवाले होते हैं। आप लोगोंमें नाम कमानेकी इच्छासे दानधर्म करते हैं, दूसरोंको कष्ट पहुँचाते हैं और अनेक कार्योंमें बाधा पहुँचाते हैं। अच्छी अच्छी चीजें दुसरेके यहांसे उठा ले जानेकी आदत रहती है।

मिथुनलग्न

सत्वगुणी स्वभावः-ये लोग त्यागी, दयालु, तत्त्वज्ञ, ज्ञानी, नम्र चतुर, दानी, न्यायी, उदार, सुशील और आप्तेष्ट जनोंपर प्रेम करनेवाले होते हैं। गुणीजनोंका आदर सम्मान करते हैं; गौरवपूर्ण और आदरयुक्त बचन बोलते हैं, शास्त्रार्थ करते हैं और न्यायदान योग्य रीतीसे करते हैं।

रजोगुणी स्वभाव—ये मानी, भोगी, कामी, दीर्घसूत्री (Dilatory) विविध प्रकार की बुद्धियोंसे युक्त, प्रसन्न, सन्तान व सम्पत्ति की दृष्टिसे सुखी, स्त्री-विलास कुशल, मार्मिक, साहित्यशास्त्रज्ञ तथा दुश्मनोंको जीतनेवाले होते हैं। इनका मित्र-परिवार काफी बड़ा होता है कोई

भी कार्य बड़ी सावधानीसे करते हैं और वादविवादमें किसीको हार नहीं खाते।

तमोगुणी स्वभाव—ये असत्यवादी, बीभत्साप्रिय, कठोर और कटुवचनी व व्यभिचारी होते हैं। खाते पीते और मौज उड़ाते हैं; किसी की परवाह नहीं करते; यहाँतक की पत्नि की भी चिन्ता नहीं करते। न किसीके झंझटोंमें या झमेलोंमें ही फंसना चाहते हैं, न लोगों पर उपकार करना चाहते हैं। फिर भी ऐसा दर्शाते हैं कि मानों आप बड़े परोपकारी हैं। आपका वेदान्तपर विश्वास नहीं होता।

कर्कलग्न

सत्वगुणी स्वभाव—ये शान्त स्वभाववाले, मीठे बचन बालने वाले और कानूनके अनुसार कार्य करने वाले होते हैं। आप अतिगूढ विचार करनेके आदी होते हैं तथा भविष्यका विचार करनेवाले होते हैं। आपका मित्रपरिवार काफी बड़ा होता है। जिन्दगीके आखिर तक शास्त्राभ्यास करते रहते हैं, बुद्धि कुशाग्र होती है, और आप दूसरोंसे प्रेमका बर्ताव रखते हैं। ये संकटोंसे विचलित नहीं होते, सत्यके लिये कष्ट सहन करते हैं, लोगोंका कल्याण करते हैं एवं धर्मके पथ पर चलते हैं। इनके विचार व आचार विशुद्ध होते हैं। शत्रुको भी क्षमा कर देते हैं। ये प्रापंचिक बातोंसे अनासक्ति रखते हैं व तत्वज्ञानी, एकान्तप्रिय और निस्वार्थी तथा योगी होते हैं।

रजोगुणी स्वभाव—आप डरपोक, थोड़े स्वार्थी, अपने धन्धेमें पूरी पूरी दक्षता रखने वाले, पैसेके बारेमें झूठ बोलने वाले तथा मित्रताके लिये सत्पात्र होते हैं। अपनी पत्नी और बालबच्चोंमें ही मस्त रहते हैं, मां, बाप, भाई, बहेन, आदि की तनिक भी परवाह नहीं करते। किसी

भी कार्यमें दूसरोंको आगे कर आप पीछे रहना पसन्द करते हैं। प्रेमके विषयमें ये धोखा खाते हैं।

तमोगुणी स्वभाव—आप लोगोंका नुकसान कर अपना स्वार्थ देखते हैं, दुनियामें किसीसे प्रेम नहीं करते, दूसरोंसे छलकपटका व्यवहार करते हैं और अति घमण्डी होते हैं। पैसेके व्यवहारमें धोखा खाते हैं Pennywise pound foolish आप दूसरोंपर विश्वास करते नहीं और स्वयंभी विश्वासके पात्र नहीं होते।

सिंहलग्न

सत्वगुणी स्वभाव—आप मानी, शूर, निडर, निश्चयी, शान्त व स्थिर बुद्धिवाले, गंभीर, मितभाषी, साहसी, धैर्यशील, उदार, आत्मसंतोषी, महत्वाकांक्षी सनातनी और साधुओंके प्रति भक्तिभाव रखनेवाले होते हैं दूसरोंसे बातचीत करनेमें अपनी छाप रख देते हैं, शत्रुओंका दमन करते हैं और केवल स्थूल बातोंकी ओर ध्यान देते हैं। परमार्थ मार्गपर नहीं।

रजोगुणी स्वभाव—ये अहंकारी, अकर्मण्य और चैनकी बन्सी बजानेवाले होते हैं। आप न तो किसीका कल्याणही करते हैं और न अकल्याण ही, बल्कि सबसे प्रेमका बर्ताव करते हैं; अतः आपका मित्र-परिवार भी काफी बड़ा होता है। ये उद्योगधन्धोंमें चतुर नहीं होते, बल्कि आरामतलब जीवन बितानेके आदी होते हैं। आप्तजनोंसे प्रेमका व्यवहार रखते हैं। आप न्यायान्यायमें पारंगत होते हैं, अन्यायके विरूद्ध झगड़ते हैं किन्तु स्वयं झगड़ोंसे बचकर रहना पसन्द करते हैं।

तमोगुणी स्वभाव—आप अपनी कर्तव्यशक्तिके विषयमें वृथाभिमान रखते हैं और अपने मनमें ऐसी इच्छा रखते हैं कि लोग आपकी खूब तारीफ करें और संसारमें आपका नाम गूँज उठे लेकिन

इतने लायक आपमें एक भी गुण नहीं होते। मीठी मीठी बातोंसे ये दूसरोंको फंसाते हैं, झूठ बोलते हैं और दयामायाहीन व मनमें दुराशा रखनेवाले होते हैं। आप बहुत क्रोधी होनेके कारण दूसरोंको कभी कभी आपसे कष्ट पहुँचता है।

कन्यालग्न

सत्वगुणी स्वभाव—आप शान्तिप्रिय, विनयशील, विषयपराङ्मुख, (इस स्वभावके लोग कभी कभी अविवाहित भी रहते हैं) दयालु, प्रेमी, मिलनसार, विश्वसनीय, दूसरोंका कार्य बिना वेतन और मित्रोंका संग्रह करनेवाले होते हैं।

रजोगुणी स्वभाव—आप काफी चिकित्सक, अल्प स्वार्थी किन्तु अपने स्वार्थके लिये दूसरोंको कष्ट न देनेवाले, व्यवहार-कुशल व दूसरोंका कार्य न करनेवाले होते हैं। आपका मित्र-परिवार बड़ा होता है।

तमोगुणी स्वभाव—आप असत्यवादी, अतिचन्चल, व्यभिचारी, अविश्वसनीय, परस्त्रीगामी और दूसरोंको हानि पहुँचानेवाले होते हैं।

तुलालग्न

सत्वगुणी स्वभाव—ये परोपकारी, निश्चयी, हठी, सच्छील, मृदुभाषी, दयालु, प्रगल्भबुद्धिसे युक्त, निस्वार्थी, लोगोंसे प्रेमका बर्ताव करनेवाले और दूसरोंके लिये कष्ट उठानेवाले होते हैं।

रजोगुणी स्वभाव—आप अल्पमात्रामें स्वार्थी, अपने शारीरिक सुखोंकी ओर विशेषरूपसे ध्यान देनेवाले और घरमें स्त्री व बालबच्चोंका ख्याल न करनेवाले होते हैं। आप लोगोंसे मित्रताका व्यवहार रखते हैं किन्तु उनको मदद नहीं करते। आप दुराग्रही, थोड़े अभिमानी और कुलाभिमानी होते हैं।

तमोगुणी स्वभाव—ये लोग अविश्वसनीय, घमण्डी, स्वार्थी, वितण्डवादी तथा अपने सुखके लिये दूसरोंको कष्ट देनेवाले होते हैं। आप अपनेको सर्वज्ञ समझते हैं।

वृश्चिकलग्न

सत्वगुणी स्वभाव—आप परोपकारी, सच्छील, दयालु, प्रेमी, हर-एक बातमें समतोल वृत्तिसे काम लेनेवाले और अपने विचार दूसरोंके सामने निर्भयतासे प्रगट करनेवाले होते हैं। आपका जन्म स्वकल्याणके लिये न होकर दूसरोंके कल्याणके लिये होता है। आपमें साधुसत्पुरुषोंके गुणधर्म वर्तमान होते हैं।

रजोगुणी स्वभाव—आप पराक्रमी, निडर, दुराग्रही, वितण्डवादी, दयालु, प्रेमी और गरीबोंपर उपकार करनेवाले होते हैं। आप अपने कार्यमें निमग्न रहते हैं और आपका मित्रपरिवार बड़े बड़े लोगोंका होता है। आप डॉक्टर या सर्जन हो सकते हैं।

तमोगणी स्वभाव—आप दुराचारी, मितभाषी, घमण्डी, कृतघ्न, क्रोधी, धूर्त व कपटी होते हैं। ये दूसरोंपर उपकार नहीं करते बल्कि क्रोध मनमें रखकर, समय आनेपर बदला चुकाते हैं।

धनुलग्न

सत्वगणी स्वभाव—आप परोपकारी, निस्वार्थी, अव्यभिचारी, दयालु, प्रेमी, ज्ञानी, विश्वबंधुत्वके रखनेवाले तथा लोगोंपर अधिकार चलानेवाले होते हैं। आपमें सब सद्गुणोंका समुच्चय पाया जाता है। आप या तो साधुसत्पुरुष होते हैं या राजनैतिक क्षेत्रमें क्रान्तिकारी होते हैं। किसीसे न दबनेवाले होते हैं।

रजोगुणी स्वभाव—आप अतिकामी, परोपकारी, न्यायान्याय-पारङ्गत, विद्वान, सच्ची राहपर चलनेवाले और दूसरोंके लिये कष्ट उठाने-

वाले होते हैं। आप ज्ञानी तो होते हैं किन्तु अपने ज्ञानके बारेमें अहंकार की भावना भी मनमें रखते हैं।

तमोगुणी स्वभाव—आप दुराग्रही, असत्यवादी, अतिचञ्चल, अपनी कर्तव्यशक्तीके बारेमें आप अपने हृदयमें झूटी कल्पनाएँ रखते हैं। इस राशिमें स्त्रीसुख अल्पमात्रामें मिलता है।

मकरलग्न

सत्वगुणी स्वभाव—आप दुनियाका कल्याण करनेके लिये परिश्रम उठाते हैं। उसी प्रकारसे, स्वयं मनमें शान्ति रखते हुए, दुनियामें शान्ति कैसे प्रस्थापित होगी और कैसे टिक सकेगी, इसके बारेमें प्रयत्न करते हैं। आप प्रेमी, दयालु और विश्वका कल्याण करनेवाले होते हैं तथा सेवा करना अपना धर्म समझते हैं। आप या तो डॉक्टर होते हैं या दुनियाके राजनैतिक क्षेत्रमें सूत्र संचालन करते हैं।

रजोगुणी स्वभाव—आप दुराग्रही, मानी, अल्पमात्रामें स्वार्थी, बड़े बड़े कार्य करनेवाले और दूसरोंका फायदा करनेमें अपना भी फायदा उठाने वाले होते हैं।

तमोगुणी स्वभाव—ये लोग दुष्ट, व्यसनी, परस्त्री-अभिलाषी, अतिघमण्डी, अतिस्वार्थी, अपने स्वार्थके लिये दूसरों की हानि करने वाले होते हैं। ये अपनेको सर्वज्ञ समझते हैं और दूसरे लोगोंसे भी बडप्पन पानेकी अपेक्षा करते हैं।

कंभलग्न

सत्वगुणी स्वभाव—आप बड़े विद्वान, ज्ञानी और मितभाषी होते हैं। न तो आप दूसरोंपर उपकार ही करते हैं और न तो दूसरोंसे मिलजुलके रहते हैं। आप अपने कामोंमें इतने डुबे हुए होते हैं कि आपको दुनिया की कोई खबर ही नहीं होती।

इस राशिमें रजोगुण और तमोगुणका सम्पूर्ण आविष्कार (Developement) होना यह एक कठिन समस्या है। लेकिन एक बात स्पष्ट है कि ये लोग बहुत ही स्वार्थी, अपने स्वार्थके लिये दुसरों को कष्ट पहुँचाने वाले, अतिलोभी और अपने बालबच्चों व स्त्री की परवाह न करनेवाले होते हैं। इनके मनमें कौनसे विचार चलते हैं यह जानना एक कठिन बात है। इस राशिमें निष्क्रियता व जड़ता ये दो ही गुण हमें ठीक जँचते हैं।

मीनलग्न

सत्वगुणी स्वभाव—आप धार्मिक, परोपकारी, सात्विक, दयालु, उदार, बुद्धिमान, सत्याभिमानी, दोनों पक्षोंका विचार करनेवाले और लोकहितके लिये कष्ट उठानेवाले होते हैं। आपमें साधु सत्पुरुषके गुणधर्म पाये जाते हैं।

रजोगुणी स्वभाव—आप बुद्धिमान, परोपकारी, न्यायान्यायमें पारंगत दूसरोंका फायदा करनेवाले, काव्य, गायन, नाटक, सिनेमा आदि बातोंमें दिलचस्पी लेनेवाले, घरमें औरत व बाल बच्चोंपर प्यार करनेवाले होते हैं। आप दूसरोंके साथ प्रेमका बर्ताव करते हैं और आपमें व्यापार धन्धोंके प्रति आसक्ति होती है। आप अक्सर डॉक्टर होते हैं।

तमोगुणी स्वभाव— ये लोग अविश्वनीय, अतिचंचल, अस्थिर, एकान्तवास प्रिय होते हैं। ये न तो किसीसे मित्रताका व्यवहार रखते और न तो किसीसे प्रेमका बर्ताव करते हैं।

परिच्छेद चौदहवाँ

द्वादश भावोंमें क्या क्या देखना चाहिये ?

प्रथम भाव—इन द्वादश भावोंमें क्या क्या देखना चाहिये यह निसर्ग कुंडलीसे दिया जाता है:-इस प्रथम भावमें मेष राशिका उदय होता है। इस राशिका अधिकारी मंगल है और प्रथम भावका कारक ग्रह रवि है। इसी लिये प्रथम भावमें योगी, संन्यासी, बैरागी, इनका शरीर कैसा रहेगा, निर्बल होगा या सबल ? परमार्थ मार्गमें जानेके लिये शरीर योग्य होगा अथवा नहीं? हठयोग, राजयोग, ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग, पवन-योग, लययोग, मंत्रयोग, इनमेंसे किस योगका अवलम्ब करेगा ? परमार्थ-मार्गमें बुद्धि कैसे रहेगी ? योगियोंका स्वभाव कैसे रहेगा ? आदि बातोंका विचार प्रथम भावसे किया जाता है। प्रयत्न, सृष्टिकी उत्पत्ति, अष्टांग योगसाधनकी पहली सिढ़ी—'यम' ब्रह्म, षड्दर्शन, धौति, तेजोधारणा, आस्तिक्य, जिव्हाधौति, अलंबुषा, महावेध मांडूकी मुद्रा, काकीमुद्रा कपालरंध्रधौति भुजंगिनी मुद्रा, मुक्तासन, महाब्रह्म।

मनुष्यके मुखपर प्रथम भावका बड़ा प्रभाव होता है। यही कारण है कि योगी और संन्यासीके मुखदर्शनसे मन प्रसन्न होता है और हृदयमें प्रेम भावना उत्पन्न होती है। किसीने ठीकही कहा है—"साधका निरखो आँख और माथा।" इस प्रथम भावके अधिपति भगवान शंकरजी हैं। बाल्य, उन्मत्त व पिशाच इन तीन अवस्थाओंमें योगी संसारमें विचरते हैं। इन तीन अवस्थाओंमें तीन प्रकारके योगी होते हैं। ज्ञानी प्रापंचिक योगी और विदेही। इन सब बातोंका प्रथम भावमें विचार करना पड़ता है।

" मूर्धज्योतिषी सिद्दर्शनम् वेदना ।

स्थूल स्वरूप सूक्ष्मान्वयार्थवत्त्वं संयमाद्भुतजयः ॥ "

इस सूत्रमें पृथ्वी प्रथम भूतजय दिया है ।

पृथ्वीके गुण व आकृति—गुरुत्व, रूक्षता, आच्छादन करना स्थिरता, भिन्न भिन्न प्रकारकी स्थिति, क्षमा, कृशत्व, कठिनता और सब प्राणी भोम भोग्यता । वृषभराशि और धनभाव पृथ्वीपर अमल करते हैं । वृषभराशि पृथ्वीतत्व की राशि है । यह सब धनस्थानमें देखना चाहिये ।

जलके गण—स्नेह, सूक्ष्मत्व, शुक्लत्व, मृदुत्व, गुरुत्व, शैत्य रक्षणशक्ति, पवित्रता व संधि करना । यह सब चतुर्थ स्थानमें देखना चाहिये ।

तेजके गुण—उर्ध्व गति, पचनशक्ति, दहनशक्ति, लघुत्व, पवित्र करना, तमका नाश करना, प्रकाश यह सब पंचम भावमें देखना चाहिये ।

वायुके गुण—वक्रगति, पवित्रता, दूर ढकेलना, प्रेरणा (अंतःकरणमें होनेवाली) बल, चंचलता, रूपराहित, रुक्षता आदि । यह सब सप्तमभावमें देखना चाहिये ।

आकाशके गुण—सर्वव्यापी, संधि-भावका अभाव, किसी आधिकारमें न चलना आदि दशम स्थानमें ये सब गुण देखना चाहिये । इन पंचमहाभूतोंपर अपनी चित्तवृत्तियाँ एकाग्र कर संयम करनेसे भूत-जय प्राप्त होता है और भूतजय प्राप्त होनेके बाद इन्द्रिय जय प्राप्त होता है । " रुपलावण्यबलबज्रसहंननत्वानिकाय् संपत् । '

सहस्रारचक्र (शनी)

Choroid Plexus of the forth Ventricle

स्थान—मस्तकमें अब सहस्रारकी बात सुनिये । आज्ञा चक्रके उपर अर्थात शरीरके सर्वोच्च स्थान मस्तक सहस्रार कमल (चित्र

चित्र नंबर २

Fig. 913.—A dissection showing the course of the cerebrospinal fibres.
(E. B. Jamieson.)

शनि सहस्रार चक्र

Corona Radiata

सहस्रदल दलसंख्या-१००८

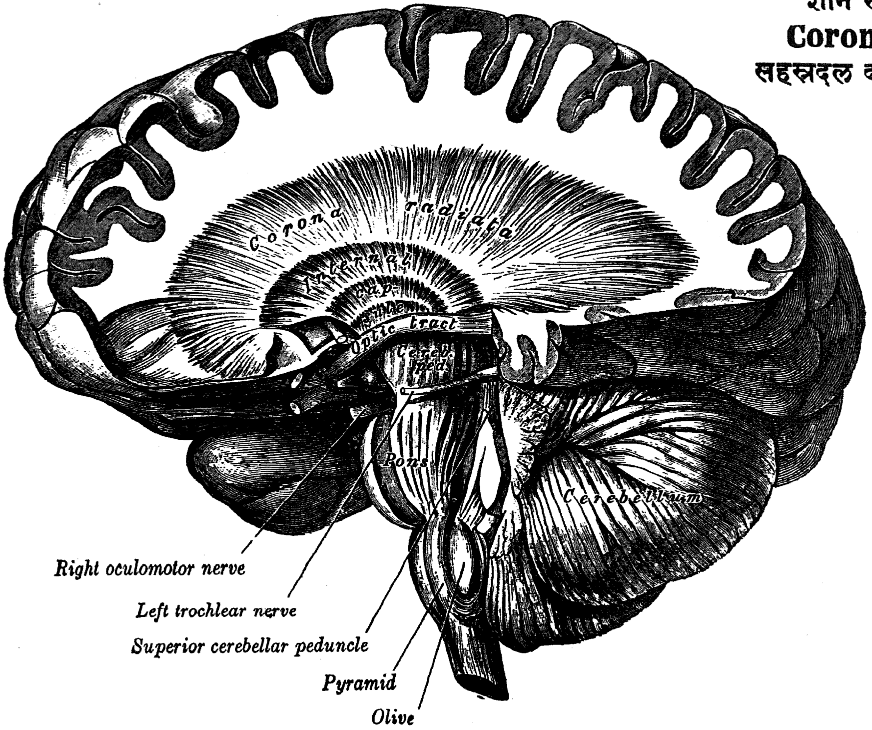

देखिये) है। इसी स्थानमें विवर समेत सुषुम्नाका मूलारंभ होता है । एवं इसी स्थानसे सुषुम्नानाड़ी अधोमुखी होकर चलती है। इसकी आन्तिम सीमा मूलाधार स्थित योनी मण्डल है । यह सहस्रदल कमल शुभ्रवर्ण है The fibres of the internal capsule radiate widely as they pass to and from the various parts of the cerebral cortex forming the Corona Radiata (Figure 785) and intermingling with fibres of the corpus collosum (see Gray's Anatomy page 823) There are 1008 fibres in Corona Radiata. तरुण सूर्यके सदृश रक्त वर्ण केशरके द्वारा रंजित अधोमुखी है। उसके पचास दलोंमें अकारसे लेकर क्षकारपर्यंत सबिंदू पचास वर्ण हैं इस अक्षर कर्णिकाके बीचमें गोलाकार चंद्र मंडल है। यह चंद्र मण्डल छत्राकारमें एक उर्ध्वमुखी द्वादश दल कमलको आवृत्त किये है इसमें कई स्थानपर मतभेद मालूम होता है। प्रकारान्तर ब्रम्हरन्धमें सहस्रार नामक एक सहस्र दलवाला महापद्म है । इस कमलके मध्यमें और एक बारह दलवाला कमल है। वह द्वादश दलवाला कमल श्वेत वर्णका है और परम तेज संपन्न है। इस कमलके बारहों पत्तोंमें क्रमशः ॥ ह, स, क्ष, म, ल, व, र, युं, ह, स, ख, फ्रें, यह बारह बीज लिख रहे हैं। उस कमलकी कर्णिकामें अ, क, थ, इन तीन वर्णोंके तीन कोन हैं उन कोनोंके मध्यमें ह, ल, क्ष, इन त्रिकोणाकार अक्षरोंके मण्डपमें ' ॐ ' बना हुवा है। फिर योगी ऐसा चिन्तन करे कि इस स्थानपर सुमनोहर नाद बिन्दूमय एक पीठ विराजमान है, उस पीठ (सिंहासन) पर दो हंस खडे हैं और वहाँ पादुका भी रखी है । उसी स्थलपर गुरुदेव विराजमान हैं, उनकी दो भुजाएँ हैं, तीन नेत्र हैं और वे शुक्लवस्त्रोंसे सुशोभित हैं। उसके शरीरपर शुभ्र चन्दन लगा है। कण्ठमें श्वेत वर्णके प्रासिद्ध पुष्पोंकी माला पड़ी हुई है, उनके वामपार्श्वमें रक्तवर्णा शक्ती (गुरुपत्नी) शोभा

दे रही है; इस प्रकार गुरुका ध्यान करें। कोई कोई आचार्य इस द्वादश दल कमलको "ललनाचक्र" कहते हैं, यह वर्णन विश्वसारतन्त्रमें मिलता है और यह ललनाचक्र सहस्रार और आज्ञा इन दोनों चक्रके बीचमें है ऐसा ये दूसरा स्थान बताते हैं। कंकाल मालिनी तन्त्रमें लिखा है किः—

" सहस्र दल पद्मस्थमन्तरात्मान मुज्वलम्। तस्योपरिनाद बिन्दो-र्मध्ये सिंहासनोज्ज्वले॥ तत्रनिजगुरुं नित्यं रजताचलसन्निभम्। वीरासन समासीनं सर्वाभरणभूषितम्॥ शुक्ल (क्ल) माल्याम्बरधरं वरदाभयपाणि-कम्। वामोरुशक्ति सहितं कारुण्येनावलोकितम्। प्रिययासव्यहस्तेन धृतचारु कलेवरम्। वामेनोत्पलधारिण्या रक्ताभरणभूषया। ज्ञानानन्द समायुक्तं स्मरेत्तन्नामपूर्वकम्॥

योगी ऐसा ध्यान करें कि जिस सहस्र दल कमलमें प्रदीप्त अन्तरात्मा अधिष्ठित है, उसके उपर नाद बिन्दुके मध्यमें एक उज्ज्वल सिंहासन विद्यमान हैं। उसी सिंहासन पर अपने इष्टदेव विराज रहे हैं, वे वीरासनसे बैठे है। उनका शरीर चांदीके सदृश श्वेत है, वे नानाप्रकारके आभूषणोंसे विभूषति हैं और शुभ्रमाला, पुष्प और वस्त्रधारण कर रहे हैं। उनके हाथोंमें वर और अभय मुद्रा है। उनके वाम अंकपर शक्ति विराजित है। गुरुदेव करुणा दृष्टिसे चारों ओर देख रहे हैं। उनकी प्रियतमा शक्ति दाहिने हाथसे उनके मनोहर शरीरका स्पर्शकर रही है। शक्तिके वामकरमें रक्तपद्म है और वे रक्तवर्णके आभूषणोंसे विभूषित हैं। इस प्रकार उन ज्ञानसमायुक्त गुरुका नाम स्मरणपूवक ध्यान करना चाहिये। इस कमलकी कर्णिकामें विद्युत्—सदृश अकथादि त्रिकोण यंत्र है। उस यंत्रके चारों ओर सुधासा-गर होनेके कारण यह यंत्र मणिद्वीपके आकारका हो गया है। इस द्वीपके मध्यस्थलमें मणिपीठ है। उसके बीचमें नाद-बिंदुके उपर हंस पाठका स्थान है। हंस पीठके उपर गुरु पादुका है। गुरुदेवही परमाशिव

था परब्रह्म है। सहस्रदल कमलमें चन्द्रमण्डल है। उसकी गोदीमें अमर कलानामक षोडशीकला है। तथा उसकी गोदमें निर्वाण शक्तिरूपा मूल प्रकृति बिंदू और विसर्ग शक्तिके साथ परमशिवको वेष्टन किये हुए है। हमारे मतसे ग्रहका अमल-शनि और जर्मन महात्मा गिखतेलके मत में भी शनि ही है। तत्वगुण-आत्मा, नामचक्र-शून्य, लोक, सत्यलोक, नामतत्व-तत्वातीत, तत्वबीज-विसर्ग, बीजका वाहन-बिंदू, देव-परब्रह्म, देव-शक्ति-महाशक्ति, यंत्र-पूर्णचंद्र, निराकार, ध्यानफल-अमरमुक्त, देवतावाहन कामनाथ कामेश्वरी, गुरुपादुका जपसंख्या १०००, तूर्याअवस्था।

इस चक्रपर ब्रह्मानंदको देखना चाहिये

अकथादि त्रिकोण यंत्र–Fornix, Figure 762 Page 796
Figure 791-Page 826

मणिद्वीप–Insula Island of Reil Figure 775. Page811

गुरुपादुका–Corpora mamillaria Figure 762 Page 796
Fig. 789

हंसपीठ–Supra pineal recess Figure 779 Page 816

सहस्रदल–Corona Radiata Figure 788 Page 823 देखिये
(Grays Anatomy.)

The cerebrospinal fluid is a clear, slightly alkaline fluid, with a specific gravity of about 1007. It contains in solution inorganic salts similar to those in the blood-Plasma and also traces or Protein and glucose. It supports and protects the delicate structures of brain and medulla spinalis, maintains a uniform pressure

on them, and probably acts as their nutritive fluid. It is produced by the action of the secreting cells **which cover the choroid plexuses of the, brain** and is normally present at a certain pressure which is not dependent on the arterial or venous blood pressure. Its secretion may be increased (a) by an excess of carbonic acid (b) by volitile anaesthetics, or (c) by an extract of the chorioid plexuses or of the brain. (See Grays Anatomy Page 844).

THE CEREBROSPINAL FLUID (सुधासिंधू)

The cerebrospinal fluid is a watery fluid (specific gravity about 1005) which is found in the ventricles of the brain, and in the cerebrospinal subarchnoid space. The fluid is formed by the choroid plexus which project into the ventricles; it escapes into the subarchnoid space through the foramina in the root of the fourth ventricle. (Foramen of majendie and foramina of Lusehka). A choroid plexus is much folded process of the Pia mater, rich in blood-vessels; The ventricular aspect of the tufts is covered by ependyma modified to form a glandular epithelium, i. e. the cells are not ciliated are cuboidal, and often contain vacuoles. The proof that the plexus forms the fluid is three fold; (i) there are histo-

logical changes (swelling of the cells, etc,) after excessive formation of cerebrospinal fluid, (ii) when the exit from the ventrical e. g. the foramen of menro, is blocked, the ventricle distends; if previously the choroid plexus of the ventricle is removed no distension occurs (Dandy and Black fan); and (iii) fluid has been seen excluding from the surface of an exposed plex us.

Page 665-666 Chapter 47th
Hand book of Physiology
by
Halliburton M. D. and
McDowall

इस चक्रपर सप्त ज्ञान भूमिकाकी सातवी भूमिका " तुर्यगा " को देखना है। तुरीया अवस्था—" ब्रह्म ध्यानावस्थस्य पुनः पदार्थान्तरापरिफूर्तिस्तुरीय " ब्रह्मचिंतनमें निमग्न इस महापुरुषको पुनः किसी भी समय किसी भी अन्य पदार्थकी परिस्फूर्ति न होना यही ज्ञानकी सप्तम भूमिका तुरीया कहलाती है। इस स्थितिको प्राप्त स्वेच्छापूर्वक या परेच्छापूर्वक व्युत्थानको प्राप्त नहीं होता, अपितु एकही स्थिति ब्रह्मीभूत स्थितिमें सदारमण करता है। " अस्यामवस्थायाम्योगी नस्वतोनापि परकीय प्रयत्नेन व्युत्तिष्ठते केवलं ब्रह्मीभूत एवं भवति ।

योगी लोक कहते हैं कि आज्ञा चक्रके ऊपर तीन पीठस्थान हैं उन तीनों पीठोंका नाम है—बिंदुपीठ, नादपीठ और शक्तिपीठ (कलापीठ) ये तीनों पीठस्थान कपाल देशमें रहते हैं। शक्ति पीठका अर्थ है ब्रह्मबीज " ॐ " कार। ॐकारके नीचे निरालंबपुरी तथा उसके नीचे

षोडशदल युक्त सोमचक्र है इन दलोंको चंद्रकी १६ कलाएँ कहते हैं उसके नीचे एक गुप्त षडदल पद्म है। उसे ज्ञानचक्र (मनश्चक्र) कहत हैं। इसके एक एक दलसे क्रमशः रूप, रस, गंध स्पर्श शब्द और स्वप्न ज्ञान उत्पन्न होता है। इसीके नीचे आज्ञा चक्रका स्थान है। आज्ञा चक्रके नीचे तालुमूलमें एक गुप्तचक्र है इस चक्रको द्वादशदलयुक्त रक्तवर्ण पद्म कहा जाता है। इस पद्ममें पंच सूक्ष्म भूतोंके पंचिकरण द्वारा पंच स्थूल भूतोंका प्रादुर्भाव होता है। इसी स्थानको घंटिकास्थान और दशम द्वार मार्ग कहते हैं। इसी चक्रको कला या ललनाचक्र ऐसा कोई कोई आचार्य कहते हैं। इस चक्रको Cavernous plexus भी कहते हैं।

ब्रह्मरन्ध्रचक्र (राहू)

यह चक्र ब्रह्मरन्ध्रमें है; यह चक्र निर्वाणप्रदान करनेवाला है। इस चक्रमें सूचिकाके अग्रभागके समान धूम्राकार जालन्धर नामक स्थानमें ध्यान करके चित्तलय करनेसे मोक्षकी प्राप्ती होती है। यह स्थान भगवान महावीर (हनुमानजी) जी का है इस चक्रपर निरानंदको देखना चाहिये।

ब्रह्मचक्र

यह चक्र षोडश दलमें सुशोभित है। उसमें सच्चिद्–रूपा अर्ध-शक्ति प्रतिष्ठित है। इसमें पूर्णा चिन्मयी शक्तिका ध्यान करनेसे मुक्तिकी प्राप्ती होती है। यह सब लग्नमें देखना चाहिए।

आज्ञाचक्र (शिवका तृतिय नेत्र) लग्नमें अग्नीचक्र

ग्रह गुरु जर्मन महात्मा गिखतेलके मतसे भी गुरु

Plexus of command.

स्थानः–Region of mind कमलवर्ण श्वेत दो दल–अंग्रेजी Anatomist इसीको Pineal gland और दूसरा दल Pitnit-

आज्ञाचक्र—Pineal Gland—गुरु

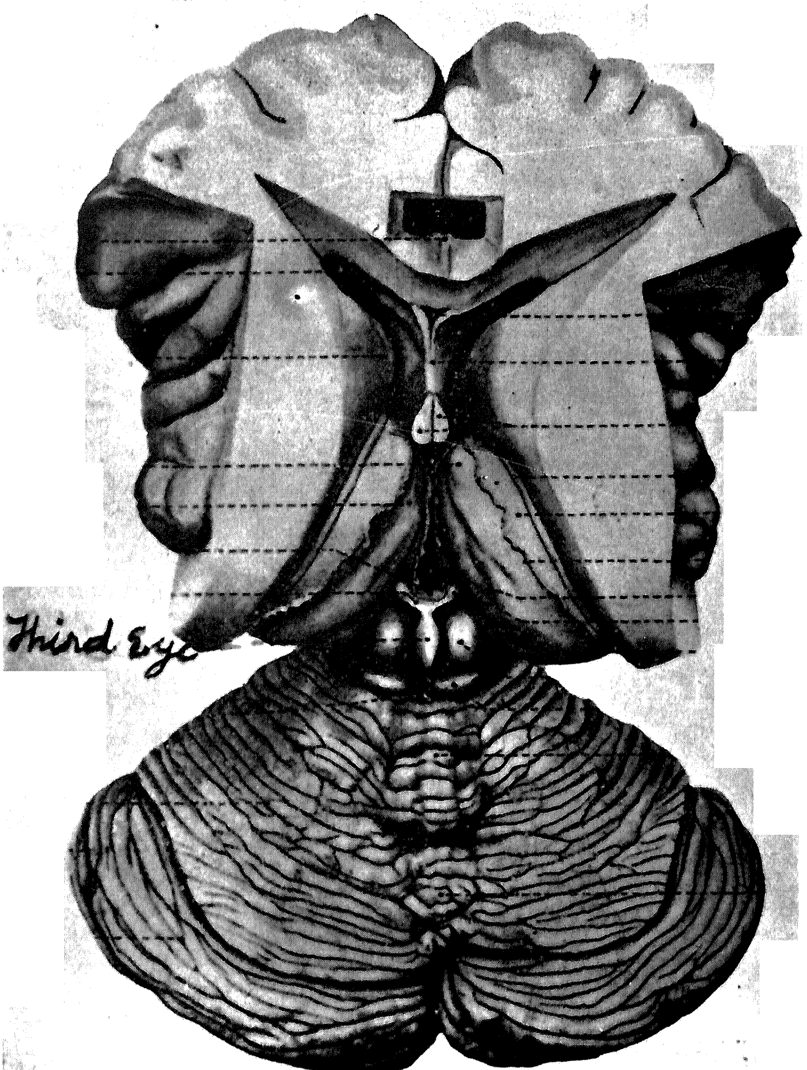

चित्र नंबर ३

ary Body हँ क्षँ चक्रका यंत्र–विद्युत्प्रभा युक्त " इतर " अर्धनारी नटेश्वरलिंग है। यह यंत्र महत तत्वका स्थान है। यंत्रका बीज " ॡँ " सह ॐ प्रणव है। बीजका वाहन नाद है। और इसके उपर बिन्दु भी स्थित है। यंत्र देव–महाकाल नामक सिद्ध लिंग और शक्ति हाकिनी है। यंत्र लिंगाकार है। यह परमहंस पुरुष है। इस स्थानमें " हंस " पुरुष परमाशिव और उनकी शक्ति सिद्ध काली " है " (यह यँ बीज और वायुका स्थान है) जप संख्या– १००० तपो लोक, तत्व–मन (योनि त्रिकोणमें पाताल लिंग) देवता वाहन–शंभु–त्राटककर्म, नेति कर्म, कार्य–संकल्प–विकल्प, रुद्रग्रन्थी, शक्ति हाकिनीका रूप शुक्लवर्णी चतुर्भुजा, षण्मुखी इस द्विदलवर्णकी कर्णिकामें त्रिकोणाकृति यंत्रोपरि-ॡँ बीज सहित प्रणवाकार तेजोमय इतराख्य शिवलिंग विद्यमान है।

Adnya Chakra

The seat of altruistic sentiments and volitional control, companion, gentleness, patience, renuciation, meditativeness, gravity, earnestness resolution, determination, and magnanimity.

चंद्रामृत या १७ सत्रहवी जीवनकला। इस चक्रमें ज्ञानानन्दको देखना है। इस चक्रपर सप्तज्ञान भूमिकाकी छठी भूमिका—" पदार्था-भाऽवनी " इसीको देखना पड़ता है "

" असंसक्ति भूमिकाभ्यास पाटवाच्चिरं प्रपञ्चापरिस्फूर्त्यवस्था पदार्थाभावनी। अस्यामवस्थायामपरप्रयत्नेन योगी व्युत्तिष्ठते।

असंसक्ति नामक पांचवी भूमिकाके परिपाकसे प्राप्त पटुताके कारण दीर्घ कालतक प्रपञ्चके स्फुरणका अभाव पदार्थाभावनी भूमिका कहलाती है। पाँचवी भूमिकामें विश्वप्रपञ्चका बिस्मरण अल्प कालतक है।

रहता है और छठी भूमिकामें यह स्थिति दीर्घकालपर्यंत रह सकती है। इन दोनों भूमिकाओंमें केवल समयकाही भेद होता है। इस भूमिकाको गाढ़ सुषुप्तिके नामसे पुकारते हैं। इस भूमिकामें स्थित महापुरुष देह निर्वाहादि क्रिया भी स्वतः व्युत्थित दशामें आकर नहीं करता। परन्तु अन्यके द्वारा अर्थात् व्युत्थान पाकर क्रिया करता है। दूसरा कोई मुँहमें ग्रास दे देता है तो दाँत और जीभसे खानेकी क्रिया हो जाती है।

Pineal Body or gland. (See figure 760 page 794) Pituitary Body Hypophysis (see fgure 765 Page 800) जब कुंडलिनी आज्ञाचक्रमें प्रवेश करती है तब ये दोनों glands आज्ञाचक्रको जगाते हैं। Madam Blavhatsky ने लिखा है The pulsation of the pituitary body mounts upwards more and more until the cursent finally strikes the pineal gland and the dorment orgen (Adnya Chakra is awakened and set all glowing with the pure Akashik Fire (Kundalini)

ABOUT THIRD EYE
IN THE CRANIAL CAVITY.

In the anterior Centre of the frontal lobe of the brain from for eye movements (the lobe of intelligence) from which are issued the orders to move the different parts of our voluntary muscles and which is a pluxus controlled by our thought. This chakra is the Naso-Ciliary extention of the cavernous plexus/ of the sympathetic

through the opthalmic division of the fifth cranial nerve, ending in the ciliary muscles of the iris and at the root of the nose, through the supra-orbital foramen. It has two petals or branches (one is called pineal gland, and second is called pituatary body). Here is found the great light the third eye (the Pariatal eye) as it is called and by contemplation of this yogi gains wonder ful and Terrific Psychic powers because this eye is full of fire. It may seem strange, almost in comprehensible, that the chief success in Gupta-Vidya or occult knowledge, should upon such flashes of clairvoyance and that the latter should depend in man, two insignificant excrescences in his cranial cavity.

The Pineal Gland:- This gland, which is a small redish body, is placed beneath the corpus callosum, and rests upon the corpora quadringemina It has composed of tubes and sacculus lined and sometimes filled with epithelial cells, and containing deposites of earthy salts (Brain Sand). A few small atrophied nerve-cells without axons are also seen. In certain lizards, such as Hatteria, and in certain fishes such as the Lamprey, the pineal out growth is better developed and may be paired, One division correspo-nds to the pineal gland: the other becomes develo-

ped into an eyelike structure connected by nerve-fibres to the habenular ganglian; This third eye situated centrally on the upper surface of the head but is covered by skin.

Page 879 Chapter 59th
The Endocrine Orgens Pineal Gland.
By
Halliburton's Physiology.

The human pineal body is phylogenetically homologous with the parietal eye of cyclostome fishes: Gray's anatomy. Page 798.

It is described separately partly for purposes of convenience and partly because it controls certain automatic bodily activities e. g. the circulation and digestion, over which we have no voluntary control. Every organ of the body over which we have no voluntary control appears to be supplied with two sets of the fibres from the sympathetic and the parasympathetic which have opposite functions.

Page 100 Chapter 9th
An Autonomic Narvous System.
Halliburton's Physiology.

भागवत्, रामायण, महाभारत तथा पुराणादि प्राचीन ग्रंथोंको पढ़नेसे यह ज्ञात होता है कि ऋषिमुनि लोग कठिन तपश्चर्याके पश्चात् कुछ सिद्धियाँ प्राप्त कर लेते थे। इन सिद्धियोंमें कई अति विचित्र

सिद्धियाँ हैं। एक सिद्धि ऐसी है कि क्रोधित महात्माकी दृष्टि पड़तेही सामनेवाला प्राणी भस्म हो जाता है। इस प्रकारके योगियोंकी चर्चा करते हुए योगेश्वर भगवान शंकरके त्रिनेत्रधारी होनेकी कथा पुराणोंमें स्थान-स्थानपर आयी हुयी है। इस कथापर कई दिनोंतक मेरा विश्वास नहीं था किन्तु अध्ययनके बाद यह " त्रिनेत्र " सत्य साबित हुआ है। यह त्रिनेत्र शंकरजीके भाल प्रदेशपर बतलाया गया है। जब योगशास्त्रमें कुंडलिनीको जगाया जाता है तब वह ऊपर चढ़ती है। अन्तमें वह शिरमें आती है। इसके बाद दोनों आखोंके बीच भृकुटीमें (आज्ञा चक्रमें) आती है और तभी यह चक्र जगाया जाता है। इस चक्रको योग शास्त्रमें " अग्निचक्र अथवा शिवका तृतिय नेत्र " कहा गया है। अभी पाश्चात्योंने शरीरपर दो शास्त्र लिखे हैं। एक Anatomy और दूसरा Physiology है। Anatomy में शरीरका वर्णन किया गया है और Physiology में Functions of every Part of the body है। इन दोनों ग्रंन्थोंमें मनुष्यके मास्तिष्कमें आज्ञाचक्रके बीच तीसरे नेत्रकी चर्चा की गयी है। हमने भी ऊपर इस तीसरे नेत्रका वर्णन दिया है। जब कुंडलिनी आज्ञा चक्रको जगाती है तब यह तीसरा नेत्र खुल जाता है। जब खुल जाता है तब योगीको दिव्य दृष्टि प्राप्त हो जाती है। इस योगीका सामर्थ्य बड़ाही तीव्र होता है। जब क्रोधित होकर वह अपने तीसरे नेत्रसे देख लेता है तब सामनेवाला भस्म हो जाता है। उपर्युक्त विवेचनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि इस तीसरे नेत्रका ज्ञान द्राविड़ोंको था। इन लोगोंने केवल शंकरजीकोही त्रिनेत्रधारी बतलाया है। वे स्वतः भी त्रिनेत्रसे परिचित होते हुए इस विषयको उन्होंने कहीं भी लिखकर नहीं रक्खा है। संभवतः लिखकर न रखना यह उनकी भूल हो सकती है क्योंकि योगशास्त्र द्राविड़ोंका है और शंकरजी भी द्राविड़ोंकेही देवता हैं। शंकरजी आर्योंके देवता नहीं माने जाते।

Anatomy और Physiology लिखनेवाले अंग्रेज शास्त्रकारोंको इस तीसरे नेत्रका कार्य तथा परिणाम बिलकूल मालूमही नहीं है। आप लिखते हैं " The function of the Pineal body in the humen body is Peculiar and uncertain. See Gray's Anatomy Page 798. पाश्चात्य शास्त्रकार योगशास्त्रसे अनभिज्ञ हैं अतएव इस तीसरे नेत्रके विषयमें अधिक नहीं जानते।

स्त्रीके गर्भाशयमें जिस दिनसे गर्भ रहता है उसी दिनसेएक माह तक मातापिताके रज और वीर्यसे उस गर्भमें कलल अर्थात् मूढगर्भ रहता है। इस माहमें उस गर्भपर शुक्रका प्रभाव रहता है; इसी पहले माहमें गर्भमें अस्पष्ट सिर उत्पन्न होता है। इस प्रकार ज्योतिषशास्त्रके पंचीकरणमें लिखा हुआ है।

द्वितीय भाव

इस भावमें वृषभ राशिका प्रभाव होता है। इस राशिका अधिपती शुक्र है। और भावकारक ग्रह भी शुक्र है। यह ग्रह संपत्ती, अन्नपान बताता है। संसारी लोगोंके लिये ज्योतिष शास्त्रने इस भावमें धन संचयका विचार किया है। संन्यासी व साधुपुरुष तो धनसे पहलेही दूर रहते हैं इनका शमदमादि षड्साधन संपत्ति है। योगियोंका मुख्य धन शान्ति और ब्रह्मचर्य है। इसमें सबसे श्रेष्ठ धन ब्रह्मचर्य है। " ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायाम् वीर्यलाभः " वीर्य लाभसे ओजकी प्राप्ति होती है; ओजकी प्राप्तिसे तेज प्राप्त होता है। यतयो भोगसंग्रहात् " —यतियोंको भोगका संग्रह याने द्रव्य, स्त्री व मानापमान न करना चाहिये क्योंकि इस संग्रहसे उनका अधःपतन या आत्मनाश होता है।

आजकल हम देखते हैं की जो परमेश्वर प्राप्तिके लिये घरबार, स्त्री पुत्र आदि छोड़कर संन्यास लेते हैं और जंगलमें चले जाते हैं वे योगाभ्यास

कर कुछ सिद्धियाँ प्राप्त करते हैं और किसी ग्राममें मठ या आश्रम बांधकर प्रपंचके जटिल जंजालमें फंस जाते हैं । राजा भर्तृहरि अपने " वैराग्य-शतकमें " योगी परिवारके विषयमें कहते हैं—

योगीका कुटुंब (Family of Yogi)

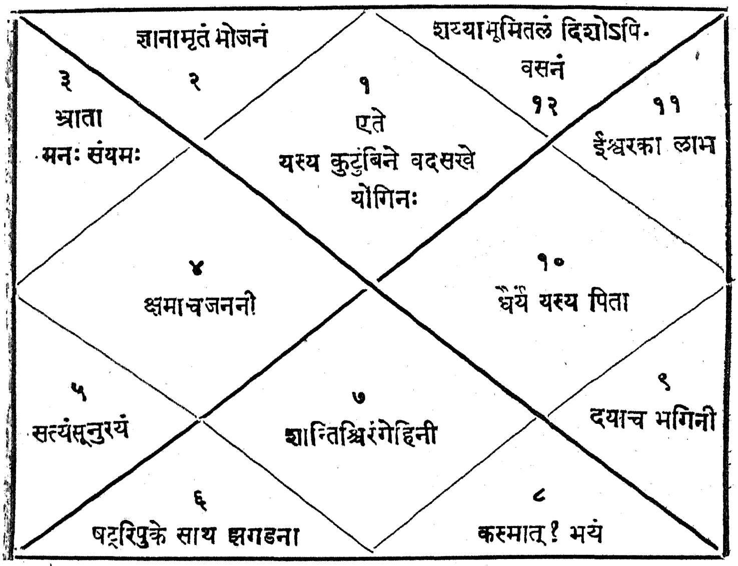

धैर्यं यस्य पिता क्षमाचजननी शान्तिश्चिरमगेहिनी ।
सत्यंसूनुरयं दयाच भगिनी भ्राता मनः संयमः ॥
शय्याभूमितलं दिशोऽपिवसनं ज्ञानामृतंभोजनं ।
एते यस्य कुटुंबिने वदसखे कस्मात्भयं योगिनः ? ॥

अर्थात् ऐसे योगी जिनके कुटुम्बमें धैर्य पिता है, । क्षमा माता, चिर शान्ति पत्नी, सत्य पुत्र, दया बहन, मनसंयम भाई है और जिनकी भूमितल ही

शय्या है, आकाश वस्त्र है और ज्ञानामृतही भोजन है उन्हें किस बातका भय है ?

द्वितीय भावमें इसी कुटुम्बका विचार करना चाहिये । अष्टांग योग, साधनकी दूसरी सिढ़ी—नियम, पृथ्वीधारणा, माया, उदानवायु जय, त्राटक, नागवायु, हस्तिजिव्हा, दन्तधौति, पिंगलानाड़ी, जालंधरबंध, संकटासन गोमुखासन, वृषासन, खेचरीमुद्रा, शांभवी मुद्रा, गजकरणी, मातंगिनी मुद्रा आदि विषय । योगाभ्यासमें यशकी प्राप्ति होगी या नहीं ? शुभवाणी या शापवाणी ? सत्यासत्यवाणी, आत्माकी स्वतत्रंता । शमादि षट्साधन संपत्ति १ शम, २ दम, ३ उपरति, ४ तितिक्षा, ५ श्रद्धा, ६ समाधान आदि बातोंका और कंठ कूपे क्षुत्पिपासा निवृत्ति, आदर्श संयम और आस्वाद संयम, विचार इस द्वितीय भावमें करना है ।

विशुद्धचक्र (चन्द्र)

Carotid plexus, pharyngeal plexus

स्थान—कंठ, इस कमलका वर्ण—धूम्र, दल—१६, मातृका—१६ का होता है और इन दलोंपर अँ से अः तक १६ स्वरमाने गये हैं । चक्रका यंत्र—पूर्णचंद्राकार और पूर्णचंद्रकी प्रभासे देदिप्यमान् है । यह यंत्र शून्य आकाश तत्वका द्योतक है । तत्वका वर्ण—नील, यंत्रका बीज—आकाश हँ है और बीजका वाहन ॐ श्वेत हस्ती है । लोक—जन, जपसंख्या—१०००, यंत्रके देव और देवशक्ति—पञ्च वक्त्र सदाशिव (अर्धनारीनटेश्वर शिवमूर्ती) और पीतवर्णा चतुर्भुजा पंचवदना शाकिनी शक्ति है । जालधर पीठ—अग्निजीव, जीवात्माका वास है । महाकालका स्थान—(रुद्रग्रंथी), गुण—शब्द, यंत्र—शून्यचक्र, ज्ञानेंद्रिय—कर्ण, कर्मेंद्रिय—वाक् तत्व—आकाश, Region of Ether, देवता - वाहन—सदाशिव, कार्य—आकाश, इस स्थानमें "छगलाण्ड" नामक शिवलिंग है ।

PLATE 159.—VAGUS NERVE (*Continued*)

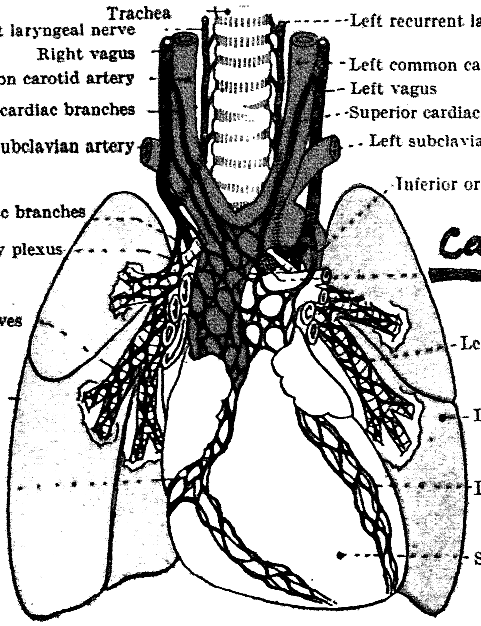

चित्र नंबर ४

पाँच प्राणोंमें प्राण-उदान, वर्ण-व्हायोलेटब्ल्यू, कार्य Deglutition Takes the jiva to Brahman in sleep (नींदमें जीवात्माको ब्रह्मके पास ले जाता है) Separates the Physical form the astral body at death देवदत्त वायूका कार्य-yawning, हमारे प्राचीन आचार्योंने इस चक्रपर-चंद्रका अमल माना है और जर्मन महात्मा गिखतेलके मतसे "मंगल ग्रह" अंमल करता है। सप्तज्ञान भूमिका-ओंमें "असंसक्ति" नामक पाँचवी भूमिका इस चक्रपर देखना जरूर है।

"असंसक्ति-सविकल्पक समाध्यभ्यासेन निरुद्धे मनसि निर्वि-कल्पकसमाध्यवस्था संसक्तिः॥ सविकल्प समाधिके अभ्यासके द्वारा मानसिक वृत्तियोंके निरोधसे जो निर्विकल्पक समाधि की अवस्था होती है, वही असंसक्ति कहलाती है। इसे सुषुप्ति भूमिका भी कहते हैं: क्योंकि इस भूमिकामें सुषुप्ति अवस्थाके समान ब्रह्मसे अभेदभाव प्राप्त हो जाता है। यह जगत्प्रपञ्चको भूला रहता है परंतु समयपर स्वयं उठताही है और किसीके पूछनेपर उपदेश करता है तथा देहनिर्वाहकी क्रिया भी करता है। "अस्यामवस्थायां योगी स्वयमेव व्युत्तिष्ठते"॥

इस चक्रपर मायानन्दको देखना चाहिये। इस चक्रको उड्डियान कहते हैं।

Vishudha Chakra

Ego—Altruistic sentiments and affection, grief, regret, respect, reverence, contenments.

स्त्रीके गर्भके दूसरे माह पर मंगलका प्रभाव होता है। पहले माहमें स्त्री और पुरुषके जो रज और वीर्य बिन्दू प्रवाही थे, इस महिनेमें घनीभूत होते हैं और मांसपिंडमें भुजाएँ निर्माण होती हैं। इस भावका अधिपति भगवान् विष्णु है।

तृतीय भाव

नैसर्गिक कुंडलीमें इस भावमें मिथुन राशिका उदय होता है। इस भाव और राशिपर बुधका प्रभाव होता है और तृतीय भाइ-कारक ग्रह मंगल है। प्राचीन आचार्योंने इसमें भाई, बहन और पराक्रमका विचार करना चाहिए ऐसा बतलाया है। योगी पुरुष तो भाव बहन छोड़कर चले जाते हैं, इसलिये यहाँ इनका विचार करनेकी जरूरत नहीं है। भाई मनसंयम है (भ्राता मनःसंयमः)। राजा भर्तृ-हरीने बतलाया है योगी पुरुषका मनसंयम अति दुस्तर कार्य है। भगव-द्गीतामें अर्जुन भगवानसे पूछते हैं—चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथिबल वद् दृढम्। तस्याहं निग्रहमन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥ (अर्थात यह मन बड़ा चञ्चल और प्रमथन स्वभाववाला है तथा बड़ा दृढ़ और बलवान् है इसलिए उसको वशमें करना मैं वायुकी भाँति अति दुष्कर मानता हूँ)। भगवान् श्रीकृष्ण उत्तरमें कहते हैं—

" असशयं महाबाहो मनोदुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥ "

(अर्थात हे महाबाहो! निस्सन्देह मन चञ्चल और कठिनतासे वशमें होनेवाला है; परन्तु अभ्यास अर्थात् स्थितिके लिए बारम्बार यत्न करने पर वैराग्यसे वशमें होता है, इसलिए इसको अवश्य वशमें करना चाहिये)। यह स्थान बुद्धिका है। इस बुद्धिको अपने बलसे, हठयोगद्वारा अपने वशमें रखना पड़ता है। मनसंयम ही योगीके लिये पराक्रम है। साधन चतुष्टय, आसनोंका अभ्यास करना, नेति, कुकरवायु, क्रोध, पूषा, वायुधारणा, कूर्मासन, उत्तानकूर्मासन, कुक्कुटासन, कर्णधौति, कपालभाति, (वातक्रम, व्युत्क्रम शीतक्रम) वज्रोली (घेरंडसंहितांतर्गत) मनश्चक्र (बलवान चक्र) Phrenic

अनाहत चक्र—मंगल

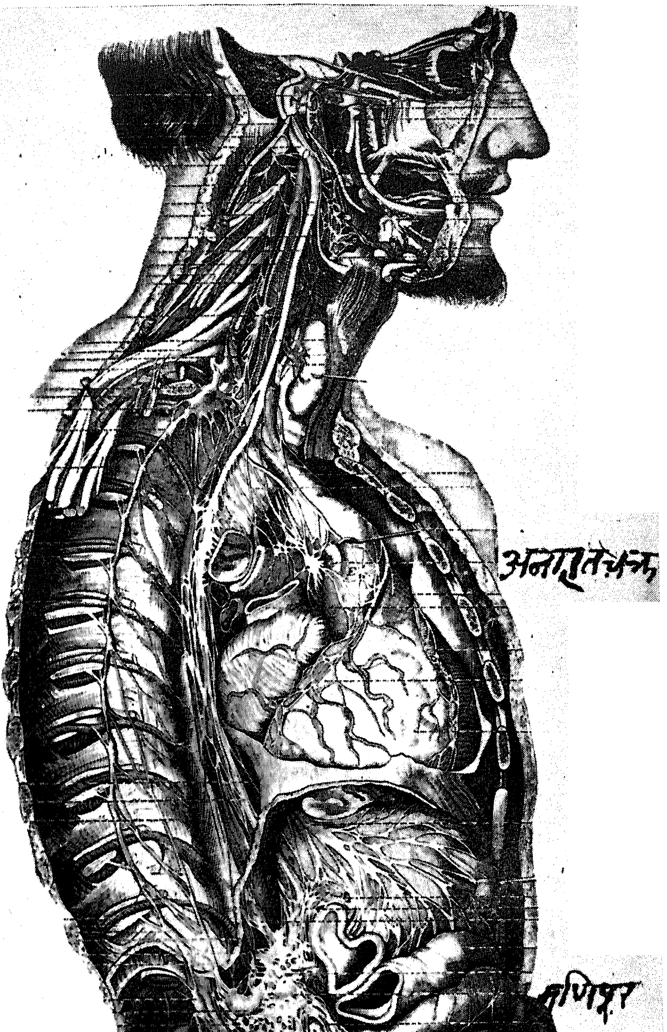

चित्र नंबर ५

Plexus द्विदल, अग्नि, माया, परमात्मा, परमहंस, पूर्णागिरीपीठ, आदि बातोंका इस भावमें विचार करना चाहिये। इस भावका अधिपति गणेशजी है।

गर्भके तीसरे माहमें गुरूका प्रभाव होता है और इस माहमें अंकुर उदर आदि अवयव पैदा होते हैं। श्रावणसंयमश्रोत्राकाशयोः सम्बंध-संयमाद्दिव्य श्रोत्रम्।

चतुर्थ भाव

इस भावमें कर्क राशिका उदय होता है, जिसपर चन्द्रका प्रभाव होता है। इस चतुर्थ भावका भावकारक ग्रह चन्द्र है किन्तु मेरी रायमें इसका भावकारक ग्रह शनि है। इस भावमें मनुष्य रोज रातको सोता है। निद्रावस्था यह एक प्रकारकी मृत्युकी अवस्था होती है। प्रापंचिक लोग रोज रात्रिके समय सोते हैं किन्तु योगी जागते हैं। भगवान् कृष्ण कहते हैं—" या निशासर्वभूतानाम् तस्याम् जागर्ति संयमी। यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः॥" अर्थात् जिस समय सकल भूतप्राणी (परमार्थ मार्गमें) सोते हैं उस समय संयमी पुरुष (योगी) (परमार्थ मार्गमें) जागते हैं और सकल प्राणीमात्र जिस समय (अपने प्रपंचमें) जागते हैं, उस समय योगी सोते हैं अर्थात् संसारिक जीवनसे अलिप्त होनेके कारण प्रापंचिक बातोंकी ओर स्थान ही नहीं देते। योगी अपने योगाभ्यासमें कितना सतर्क वा सजग होता है यह इस भावमें देखना चाहिये। मठ या आश्रम आदिका विचार इस भावमें करना चाहिये।

चतुर्थस्थान

अनाहतचक्र Cardiac plexus (मंगल)

स्थान—हृदयदेश, अरुणवर्ण, द्वादशदल, दलके अक्षर " कँ से ठँ तक," चक्रका यंत्र—धूम्रवर्ण, षटकोण तथा वायु तत्वका सूचक है। यंत्रका

बीज "यँ" और बीजका वाहन मृग है। पिनाकि सिद्ध लिंग अधोमुखी है। यंत्रके देव तथा शक्ति ईशान रुद्र उपरहंस और चतुर्मुखी अग्निवर्णा चतुर्भुजा काकिनी शक्ति है। इस चक्रके मध्यमें शक्ति त्रिकोण है। जिसमें विद्युत्सा प्रकाश व्याप्त है। इसी त्रिकोणसे संबंध "बाण" नामक स्वर्ण कान्तिवाला शिवलिंग है, इसीको कल्प वृक्ष कहते हैं जिसके ऊपर एक छिद्र है। इस छिद्रसे लगा हुआ अष्टदलवाला हृत्पुण्डरीक नामक कमल है। इस हृत्पुंडरीकमें उपास्य देवताका ध्यान किया जाता है। (उमासमेत उमेश) जपसंख्या ६००० अग्निऋषी, महर्लोक गुण-स्पर्श, ज्ञानेन्द्रिय-त्वचा, कर्मेन्द्रिय-कर, वाणी—मध्यमा, यँकार बीज वायु, इस चक्रपर प्राचीन आचार्योंने रविग्रहका अमल बतलाया है। मैंने मंगलको इस स्थानपर रक्खा है, जर्मन महात्मा गिखतेलने रविको दिया है। सप्तज्ञान भूमिकाओंमें "सत्वापत्ति" नामक भूमिका है। इसीको इस चक्रपर देखना चाहिये। सत्वापत्ति—निर्विकल्प ब्रह्मात्मैक्य साक्षात्कार:" संशयविपर्ययरहित ब्रह्म और आत्माके तादात्म्य अर्थात् ब्रह्म स्वरूपेकात्मत्वका अपरोक्ष अनुभवही सत्वापत्ति नामकी चतुर्थ भूमिका है। यह सिद्धावस्था है। इस भूमिकामें स्थित महापुरुषको "ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या" का वास्तविक अनुभव हो जाता है। यद्यपि इस दशाको प्राप्त पुरुषको जगत्का भान होता है और शरीर तथा अंतःकरण द्वारा सभी क्रियाएँ सावधानीके साथ होती हैं, तथापि मायावश जीव जिस जगत्को सत्य स्वरूप देखता है उस जगतके मिथ्यात्वका उसे यथार्थ अनुभव हो जाता है। यह भूमिका स्वप्न कहलाती है।

इस चक्रमें प्राणवायू रहता है। वर्ण-पीत, स्थान—हृदयमें, कार्य-Respiration. सहवायू—नाग, does eructation and hiccough.

इस चक्रपर विषयानन्दको देखना चाहिये। इस बाण लिंगको पूर्णागिरी पीठ कहते हैं।

Anahat Chakra

The seat of the egoistic sentiments hope, anxiety, doubt, remorse, conceit, egoism.

ऐसा ज्योतिष शास्त्रमें लिखा है। किन्तु वे संन्यासी लोगोंके घर नहीं होते। " शय्याभूमितलं दिशोऽपिवसनं " ऐसी उनकी परिस्थिति होती है। आजकल हम देखते हैं कि सब परमार्थी लोग आश्रम मठ या कुटि बांधते हैं और स्वयं गुरु बनकर शिष्य व शिष्या बनाते हैं और उनके द्वारा द्रव्य-प्राप्ति करते हैं। इस प्रकार जिन्दगीके आखिर तक पैसा जुटाते रहते हैं। उनके देहावसानके पश्चात् शिष्योंमें बड़े झगडे मचते हैं। और इस प्रकार योगीका अधःपतन होता है। कोई भी योगी पुरुष आश्रम, मठ या कुटी बांधेगा या बिना आश्रम मठ या कुटी बांधे समाधिस्थ होगा ? उसके जीवनका अन्त होते तक उसकी स्थिति किस प्रकार की रहेगी ? अष्टांग योग साधन की चौथी सिद्धी प्राणायाम की स्थिती बताता है। प्राणायाम पुरा होगा या नहीं इसका विचार करना है। लययोग, वर्तमान जन्ममें होनेवाले कर्म, जलधारणा, नौलिकर्म, हृद्धौति, महाबंध, योनिमुद्रा, अन्तर्धौति, (वात, वारि व अग्नि छोड़कर) मंडुकासन, उत्तान मंडुकासन।

गर्भके चौथे माहपर रविका प्रभाव होता है और इस माहमें अस्थि, हाथ-पैर आदि अवयव उत्पन्न होते हैं। हृदयेचित्तसंवित् ॥ वात संयम. इस भावकी अधिपति दुर्गा है।

पंचम भाव

इस भावमें सिंह राशिका उदय होता है। जिसका आधिपति

रवि है। शास्त्रकारोंने पंचम भावकारक ग्रह गुरु बतलाया है किन्तु मेरी रायमें शुक्र और रवि इन दो ग्रहोंका भी उसमें समावेश करना चाहिये। योगी व संन्यासी लोगोंकी कुंडलीमें यह स्थान प्रबल होता है। इतना प्रबल स्थान दूसरा कोई भी नहीं है। जब कोई योगी या संन्यासी योगाभ्यासको प्रारम्भ करता है और अष्टांग योग साधनमें दिये हुये यम नियम आसन प्राणायाम आदिका अभ्यास पूरा करता है उस समय अष्टसिद्धियाँ या कोई सुन्दर कामिनी योगीके सामने योगी को योगभ्रष्ट करनेके लिये उपस्थित होती है। यह समय योगी की परीक्षाका कठिन समय होता है, क्योंकि इस समय यदि वह स्त्रीके वशीभूत होता है तो योगभ्रष्ट होकर उसका अधःपतन होता है। अष्टांग योग साधनमें पाँचवी सिढ़ी 'प्रत्याहार' है। प्रत्याहार किसे कहते हैं। मनोमत्तगजेन्द्रस्य विषयोद्यान चारिणः। नियंत्रणे समर्थोऽयं निनाद-निशितांकुशः। चरता न्यक्षुरादिनां विषयेषु यथाक्रमम् यत्प्रत्याहरणं तेषां प्रत्याहारः प्रकीर्तितः ॥ (हठयोग प्रदीपिका" पृष्ठ १७६) मनमेंसे बाह्य विषयोंका त्याग करते जाना, इसीको प्रत्याहार कहते हैं। प्रत्याहार की सिढ़ी सफलतापूर्वक चढ़ जाना एक बड़ा ही दुष्कर कार्य है। विश्वामित्र और पाराशर जैसे महामुनी भी इस अवस्थामें जाकर योगमें न टिक सके तो फिर सर्व साधारण मनुष्यों की क्या कथा है? किसी ने ठीक ही कहा है—" वातांबुपर्णाशनात्। तेऽपि स्त्री मुखपंकज सुललितं दृष्टवैव मोहंगता। शाल्यन्नं सघृतंपयोदधियुतं भुंजन्ति ये मानवाः ॥ तेषाम् इन्द्रिय निग्रहो यदि भवेत् विंध्यत् तरेत्सागरैः ॥ प्रत्याहार पूरा होगा या नहीं? इसका विचार यही स्थानसे करना है।

अष्टसिद्धि और स्त्रीके मोह पर शुक्रका प्रभाव होता है। अपने ज्ञानबल और निश्चयबलसे इस मोहको दूर हटाना गुरूका कार्य है। इस कार्य पर गुरूका प्रभाव होता है। इस पंचम स्थानमें पुत्रोत्पत्तिका

विचार किया जाता है। इसी तरह सत् शिष्यही पुत्रके समान होता है। इसका भी विचार करना है। इस स्थानमें पंच महाभूतोत्पत्ति (ब्रह्मसे माया, मायासे कर्म, कर्मसे त्रिगण और त्रिगुणसे पंचमहाभूतोंकी उत्पत्ति हुई है) का विचार रविसे किया जाता है। मोह, स्वाध्याय, समानजय, वज्रोलीमुद्रा, सिंहासन, नौली, गोरक्षासन, उपासना पूर्ण होगी अथवा नहीं? अध्ययन व अध्यापन, नित्यानित्य वस्तुविवेक ईश्वर गुणानुवाद आदि बातोंका विचार इस भावमें करना चाहिये।

गर्भके पाँचवे माहमें चंद्रका प्रभाव होता है और इस माहमें चर्म, अस्थि, नाड़ियाँ आदि गर्भमें उत्पन्न होती हैं। इस भावका अधिपति भगवान शंकरजी है। कूर्मनाड्यां स्थैर्यम् प्रतिभाद्वा सर्वम्।

षष्ठ भाव

इस भावमें कन्या राशिका उदय होता है जिस पर बुधका प्रभाव होता है। इस भावके कारकग्रह शनि और मंगल हैं। प्राचीन शास्त्रकारोंने अपने ग्रन्थोंमें ऐसा लिखा है कि छठवाँ, आठवाँ और बारहवाँ स्थान दुःस्थान है क्योंकि इन स्थानोंमें चाहे कोई भी ग्रह क्यों न हो, शुभफल नहीं प्राप्त होता। इसका कारण यही हो सकता है कि षष्ठभावके कारक ग्रह जो शनि और मंगल हैं, दुःख देनेवाले ग्रह हैं। अष्टमभाव और व्ययभावका कारकग्रह शनि है। इस प्रकारसे हम देखते हैं कि षष्ठस्थानमें आधिभौतिक दुःख, अष्टम स्थानमें आधिदैविक (मानसिक और शारिरिक दुःख) और व्ययस्थानमें आध्यात्मिक दुःख भोगने पड़ते हैं। प्रापंचिक लोगोंके लिये ये अशुभफल ठीक ही हैं किन्तु योगी और संन्यासियोंके लिये जोकि घरबार छोड़कर जंगलमें जाते हैं और इन्द्रिय निग्रह करनेमें सफल होते हैं—यहाँतक कि जिनके लिये 'शीतोष्ण सुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः' एक ही बराबर है।

यह स्थान शुभफल देनेवाला होता है। योगी व संन्यासी की कुंडलीमें ये तीनों स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। स्त्री, पुत्र, मकान, खेती आदिमें फंसे रहकर त्रिविध ताप भोगे बिना मनुष्यके मनमें वैराग्य भाव उत्पन्न नहीं होते। इस स्थानमें शीतोष्ण सुखदुःख, मानापमान आदिका विचार करना चाहिये। अष्टांगयोग साधनमें छठवीं सिद्धी "धारणा" है ? "धारणा" किसे कहते हैं ? "देशबंधश्चित्तस्य धारणा"। पातंजल योगसूत्रमें पहले विभूतिपादको भी यही अर्थ दिया हुआ है। अपनी चित्तवृत्तियाँ अन्य विषयोंमें न स्थिर कर, नाभिचक्र, हृदय, उर, कंठ, मुख, नासिकाका अग्रभाग आदि दस स्थानोंमें ही स्थिर करना इसीको "धारणा" कहते हैं। "समानवायु, सगुण साक्षात्कार, संकल्प, मत्सर, जलधारणा" "अयुक्ताभ्यासयोगेन सर्वरोग समुद्भवः" अर्थात् अयुक्त अभ्यास सब प्रकारके रोगोंकी जड़ है। उड्डीयानबंध, मूल-शोधन, शलभासन, पश्चिमोत्तानासन, नाभिचक्रे काव्य व्यूह ज्ञानम् आदि बातोंका विचार इसी भावमें करना है।

गर्भके छठवें माह पर शनिका प्रभाव होता है। इस माहमें त्वचा व रोम पैदा होते हैं और गर्भमें हलचल उत्पन्न होती है।

किसी भी योगी पुरुषके लिये काम क्रोधादि षड्रिपु होते हैं, जिनमें सबसे महान् व दुर्दम्य दुश्मन "काम" होता है। व्यासजीने अपने सूत्रमें कहा है—"मातास्वसादुहितृश्च नैक शय्यासनो भवेत। बलवान-मींद्रिय ग्रामो विद्वांसमपिकर्षति ॥ संगात् संजायतेकामः ; कामात् क्रोधो ।भिजायते ॥" भगवान् श्रीकृष्णजीने अर्जुनसे कहा है—"जहिशत्रुं महा-बाहो कामरूपं दुरासदम्"। इन षड्रिपुओंको जब तक जीत नहीं लिया जाता तब तक परमार्थका मार्ग निष्कटंक नहीं होता। Alan Leo अपने ग्रन्थमें लिखते हैं—" The sixth house is the most mystical house" इस छठवे स्थानमें अन्तर्ज्ञान, स्वप्नमें दृष्टान्त

मणिपूर चक्र—रवि

PLATE 217.—CŒLIAC PLEXUS

मणिपूरचक्र

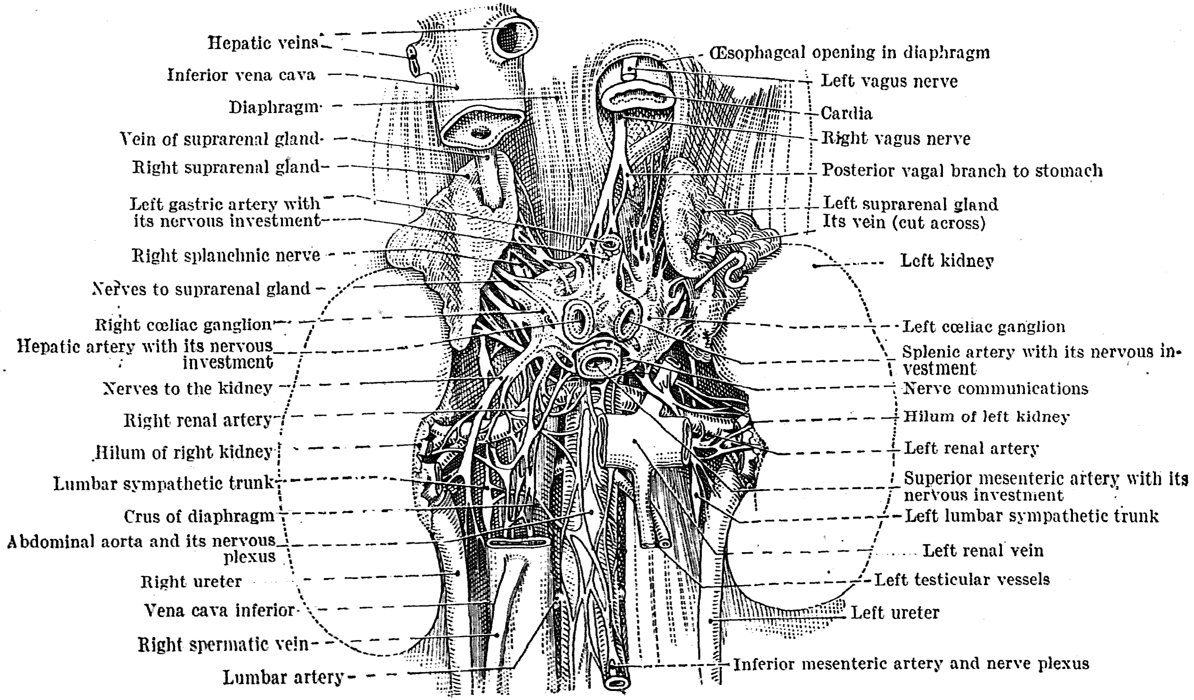

चित्र नंबर ६

होना, पिशाच्च देवतादिका दर्शन होना, आदि बातें देखना चाहिये। यही कारण है कि मैंने इस स्थानका अधिपतित्व नेपच्यूनको दे दिया है। इस भावका अधिपति भगवान भैरव है।

षष्ठ स्थान
मणिपूरचक्र

Solar plexus, Epigastric plexus, Coeliac plexus, Region of Sun. रवि

स्थान:—नाभि, दल—दश, दश दलोंका अंग्रेजी नाम 1 Phrenic 2 Hepatic 3 Lienal 4 Superior gastric 5 Supra Renal 6 Renal 7 Spermatic 8 Superior Mesentric 9 Abdominal aortic 10 Inferior mesentric चक्रका वर्ण—नील, लोक—स्वर्लोक, दलोंके अक्षर—डँ से फँ तक, तत्व अग्नि रँबीज बीजकावाहन मेष, गुण-रूप, ज्ञानेंद्रिय—चक्षु, कर्मेंद्रिय—चरण, रुद्रासिद्धलिंग, इस चक्रका यंत्र त्रिकोण है। इसके तीनों पार्श्वमें द्वारके समान तीन "स्वस्तिक" स्थित है। यंत्रका रंग-बाल रविके समान है। यंत्रके देव और शक्ति-वृद्धरुद्र और त्रिवक्त्रा चार हाथोंकी मेघवर्णसमान वर्णकी लाकिनी शक्ति है। जपसंख्या ६०००, कार्य तेज, प्रसरण उष्णवाह देवतावाहन—रुद्रनन्दी, कर्मेंद्रिय—गुद, विष्णुग्रंथी (इन ग्रंथीयोंमें स्थानका मतभेद दिखाई देता है) प्राचीन आचार्योंने इस चक्रपर मंगल ग्रहका अधिष्ठान दिया है। लेकिन मैंने रविको दिया है। जर्मन महात्मा गिखतेलने शुक्रको दिया है। इसीको वडवानल कंद कहते हैं। पांचप्राणोंमें एक प्राणवायुको देखना है। स्थान—नाभि, वर्ण—हरा, कार्य—अन्न पचनेका कार्य (Digestion), सहवायु कृकरवायु—कार्य भूख और प्यास निर्माण करना। इस चक्रपर कर्तव्यानन्द (कर्मयोगानन्द) देखना है।

सप्तज्ञान भूमिकाओंमें तीसरी भूमिका " तनुमानसा " इस चक्रपर देखना है " तनुमानसा " निदिध्यासनाभ्यासेन मनस एकाग्रतया सूक्ष्म वस्तु ग्रहण योग्यता तनुमानसा। निदिध्यासन (ध्यान और उपासनाका अभ्यास) में मानसिक एकाग्रता प्राप्त होती है, उसके द्वारा जो सूक्ष्म वस्तु के ग्रहण करने की सामर्थ्य (योग्यता) प्राप्त होती है उसे तनुमानसा कहते हैं। ये तीन भूमिकाएँ जाग्रत भूमिकाएँ कहलाती हैं। क्योंकि इनमें जीव और ब्रह्मका भेद स्पष्ट ज्ञात होता है। इनमें स्थित व्यक्ति साधक माना जाता है; ज्ञानी नहीं।

About Solar Plexus

The SOLAR PLEXUS lies on the posterior abdominal wall in the relation to the abdominal aorta and behind the stomach. The plexus is continuous with subordinate plexuses Diaphragmatic, Superior, Mesentric, and Aortic, and by means of the HYPO-GASTRIC NERVES the aortic plexus becomes continued into the hypo-gastric plexus which again FORMS CHIEF ORIGIN OF THE PELVIC PLEXUS.

The Discectional Anotomy
by
Late Dr. Cunningham
M, D, F, R. S & C.
LONDON.

जो योगसाधक (किसी भी प्रकारका योग हो) जबतक इस चक्र को जीत नहीं सकता तबतक योगी नहीं हो पाता, इसलिये सबसे बड़े महत्वका यह चक्र है। योग साधककी जबतक देहावस्था नहीं छूटती तबतक सब प्रयत्न व्यर्थ हैं।

स्वाधिष्ठान चक्र—शुक्र

PLATE 231.—SACRAL PLEXUS

स्वाधिष्ठान-चक्र

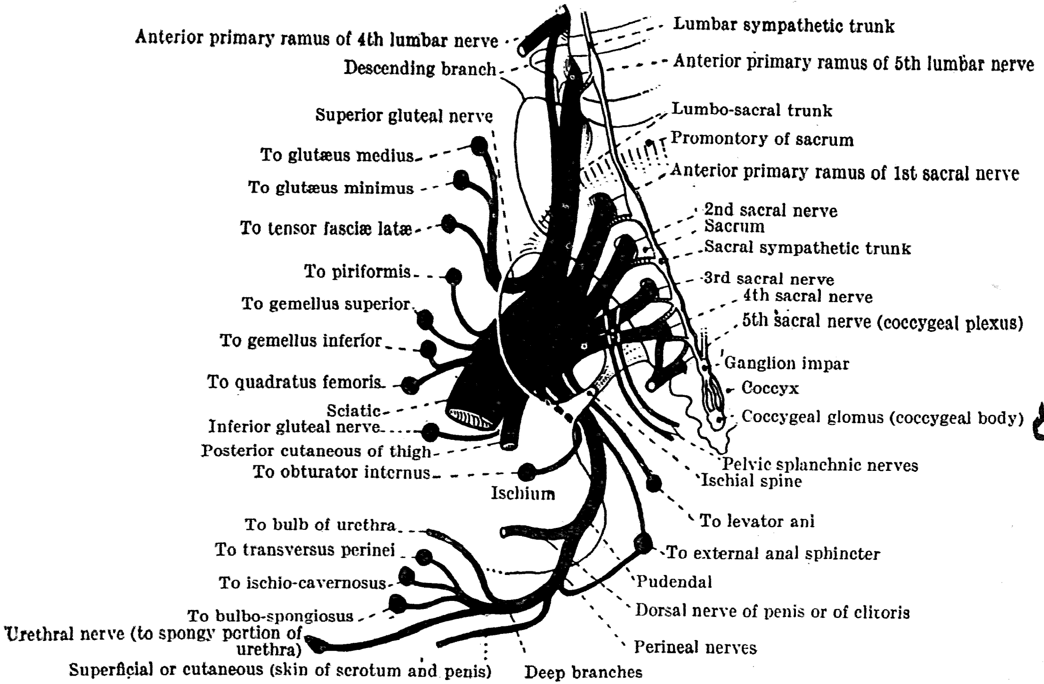

चित्र नंबर ७

Manipoor Chakra

In the production of sleep and thirst and the expressions of passions like jealousy. shame fear, stupefaction.

सप्तम भाव

इस स्थानमें तुला राशीका उदय होता है जिसका स्वामी शुक्र है। शास्त्रकारोंने इस भावका भावकारक ग्रह शुक्र ही दिया है। शुक्र ज्ञानी और योगी है और तुला राशिमें ही ज्ञान है। अष्टांग योग साधनमें सातवी सिद्धी "ध्यान" है। प्रापंचिकोंका ध्यान "स्त्री और धन" एवं योगियोंका ध्यान "ईश्वर" है।

इस स्थानमें मनुष्यप्राणीका गुप्त कर्म देखा जाता है। जिस प्रकारसे स्त्रीके साथ संभोग कार्य गुप्त रीतिसे किया जाता है उसी प्रकारसे योगी आसन प्राणायाम, मुद्रा, ध्यान, समाधि आदि कर्म गुप्त रीतिसे करते हैं। योगी यह सब कर्म प्रकट रीतिसे करता है या गुप्त रीतिसे। योगी स्त्री जनसंमर्दमें फसेगा या अलग रहेगा, काम, व्यान वायु तपश्चर्या, थलबस्ति, मत्स्येन्द्रासन, मयुरासन, ईश्वरसे प्रेम करेगा या नहीं।

स्वाधिष्ठान चक्र

Hypogastric Plexus. Prostatic Plexus शुक्र

स्थान—बस्ती, वर्ण–सिंदूर, दल–षड्दल. बाल सिद्धलिंग षडांगुल, जपसंख्या ६०००, बीज–वँ, दलोंके–अक्षर–बँ भँ मँ यँ रँ लँ, देवता–विष्णु और देवशक्ति–चार हाथोंवाली दोमुख और आकाशवर्णकी राकिनी है। इस चक्रका यंत्र जलतत्वका द्योतक है। और यंत्रका आकार अर्धचंद्राकार है। इस अर्धचंद्राकार यंत्रका रंग चंद्रवत् शुभ्र है। बीजका वाहन मकर है। वँकार बीज वरूण, गुण–रस, ज्ञानेंद्रिय–रसना, कर्मेंद्रिय–

लिंग, लोक—भुवर्लोक, अधिकारी—ब्रम्हा सृष्टयाधिकारी, कार्य—आप आकुंचन, रसवाह, देवता-वाहन-विष्णु, गरुड, कर्मेंद्रिय, हस्त, प्राचीन आचार्योंने इस चक्र पर शुक्र ग्रहका अमल दिया है जर्मन महात्मा गिखतेलने बुधको दिया है। गिखतेलके मतसे मैं सहमत नहीं हूं क्योंकि इस चक्र पर भगवान विष्णुका अधिष्ठान प्राचीन आचार्योंने दिया है और भगवान विष्णु षडगुणैश्वर्यका और षड्विकार का मालिक है। यह ऐश्वर्य छ भग और षड्विकार इस चक्र पर रखा है इसलिये शुक्र अधिष्ठान बराबर है।

इस चक्र पर सप्तज्ञान भूमिकाओंका "द्वितीय भूमिका—विचारणा" गुरुमुपसृत्य वेदान्त वाक्य विचारात्मक श्रवण मननात्मिका वृत्ति—सुविचारणा" श्रीसद्गुरुके समीप वेदान्त वाक्यके श्रवण मनन करने वाली जो अन्तःकरण की वृत्ति है यह सुविचारणा कहलाती है।

पंच प्राणोंमें व्यान नामक वायू इस चक्रपर अमल करता है। वर्ण-गुलाबी, स्थान—सब शरीरमें, कार्य—रक्ताभिसरण, सहवायू—धनंजय Causes Decomposition of Body. इस चक्रपर भक्ति आनन्द देखना चाहिए।

Swadhisthan Chakra

This chakra the sacral plexus with six branches concerned in the excitation of sexul feelings with the accompaniments of lassitude, stupor, cruelty, suspicion, contempt.

गर्भके सातवे माहमें बुधका प्रभाव होता है। इस माहमें चेतना और नाखून उत्पन्न होते हैं। इस भावका अधिपति प्रभु रामजी है। इस आदिका विचार इस भावमें करना है।

अष्टम भाव

मानवप्राणीको कई गुह्यांग होते हैं जिसमें पायू और लिंग हैं। इस गुह्यांगपर वृश्चिक राशि और मंगल ग्रह इनका प्रभाव माना जाता है। अष्टम भाव मृत्युस्थान कहलाता है। यह स्थान गूढ़ है और वृश्चिक राशि भी गूढ़ है। लेकिन इस भावके भावकारक ग्रह शनि महाराज होते हैं। वृश्चिक राशि हठयोगी बनाती है; वैसे तो दुःख देनेवाली राशि है। शनि महाराज मनुष्यको मृत्यु और ईश्वरी ज्ञान प्रदान करते हैं। यह स्थान गुह्य होनेसे यहाँ पर गूढ़ विषयोंका विचार करना है। अष्टांग योग साधनमें आँठवा अंग "समाधि" करके है। इस विषय पर ध्यान देना चाहिए। योग शास्त्रमें ऐसा कहा है कि "ध्यान बहुत काल तक जब स्थिर होता है तब इसीको समाधी कहते हैं। समाधी इसीको कहते हैं कि बाह्य जगत्‌को भूला जाता है और स्वशरीर की आसक्ति छुट जाती है तथा एकाग्र चित्त होता है। समाधि दो किस्मकी होती है—१ ली संप्रज्ञात समाधि और दुसरी असंप्रज्ञात समाधि। इस भावमें संप्रज्ञात समाधीका विचार करना है। वृश्चिक याने बिच्छू कहलाता है। बिच्छू यह प्राणी हर हमेशा घरके अड़ोस पड़ोसमें जिस जगह पर मनुष्यका हाथ न पहुँच सके ऐसी जगह पर या छोटे २ विवरमें अपना वास्तव्य करता है। ऐसे नमूनेका और प्राणी है उसका नाम "साँप"। मनुष्यके गुदद्वार समीप एक नाड़ी आई है उसीको योग शास्त्रकारोंने सर्प कहा है। यह सर्परूप नाड़ी मनुष्यको ईश्वरी ज्ञान प्रदान करनेवाली है। यह नाड़ी कहाँ है इसीका विवेचन प्रथम करना है। रीढ़ की हड्डीके नीचे गुदद्वारके ऊपर माँसका एक छोटासा ठोस गोला है। अंग्रेजी अनॉटमीमें जिसको Glomus coccygeum or Gland of Laschka कहते

हैं। इसीको ही योगशास्त्रमें " स्वयंभू लिंग " कहते हैं। छोटे बच्चोंको कभी कभी टट्टीके समय उनके गुदद्वारसे एक माँसका गोला बाहर आता है। उसको अपने ऊंगलीसे अंदर दबाना लगता है। यह स्वयंभू लिंग है। इस स्वयंभू लिंगके शक्तीपर मनुष्य की शक्ति निर्भर है। इस स्वयंभू लिंग को वह सर्परूप नाड़ी साढे तीन चक्करसे वेष्टित हुई है और वह अपना मुँह नीचे गुदद्वारकी तरफ करके सोई है। योग शास्त्रमें इसी नाड़ीको कुंडालिनी कहा जाता है। यह नाड़ी सर्पाकृति है। ऐसा हठयोगशास्त्रमें "कुंडली कुटिलाकारा सर्पवत् परिकीर्तिता। साशक्तिश्चालिता येन समुक्तोनात्र संशयः॥" कहा है। बहुत प्राचीन कालसे द्रविड़ आदि लोगोंने ऐसा काफी अनुसन्धान किया है जब मनुष्य यत्न करेगा तो परमेश्वरी ज्ञान प्राप्त कर लेगा। यह ज्ञान मानवी शरीरसे ज्ञात होता है और मानवी शरीरमें जो मेरुदण्ड करके कहते हैं; यह मेरुदण्ड ईश्वरी ज्ञानका कोष होता है। यह कुंडालिनी ईश्वरी ज्ञानको प्राप्त कर देनेवाली नाड़ी मानवी शरीरमें किस स्थानमें वास्तव्य करती है यह निश्चित् समझा नहीं जाता। इनमें बहुत मत भेद हैं। इसलिये इन सब मत भेदोंको हम प्रकाशित करते हैं। शिव स्वरोदयमें निम्न लिखित पाया जाता है। " नाभिस्थानग कन्दोर्ध्व अंकुरा देव निर्गताः। द्विसप्तति सहस्राणि देहमध्ये व्यवस्थिताः। नाडीस्था कुंडली शक्ति भुजंगाकार शायिनी। ततो दशोर्ध्वगा नाड्यो दशैवाधः प्रतिष्ठिताः "॥ नाभिस्थानमें जो कंद है इस कंदसे बहात्तर हजार नाड़ियाँ निकलके सब शरीरमें फैली हुयी हैं। इसी नाडीमेंसे एक नाड़ी कुंडालिनी नामसे निकली है और वह नाड़ी निद्रिस्त है। योग तत्वामृतमें लिखा है कि " कन्दस्य मध्यमें गार्गि सुषुम्ना संप्रतिष्ठिता। पृष्ठ मध्ये स्थिते नासासह मूर्धान मागता॥ शिरासमावेश्य मुखेनमध्ये स्वपुच्छमास्थेन निगृह्य सम्यक्। नाभौ सदातिष्ठति कुंडालिसा धिया समाधाय निबोध-

येत्ताम" ॥ इस नाभिस्थानमें जो कन्द है उसमेंसे सुषुम्ना नाड़ी निकली है। इस कन्दमें कुंडलिनी है।

बंबईके सुपरिचित डॉक्टर कै. वसंत गंगारामजी रेळे महोदयने Mysterious Kundalini नामक ग्रंथ लिखा है। उसमें Kundlini and its Location करके एक परिच्छेद दिया है। उसमें Right Vegus Nerve यही कुंडलिनी होती है ऐसा बताते हैं। लेकिन डॉक्टर महोदय योगशास्त्रको बिलकूल न जानते हुए उनकी बड़ी भूल हो गयी है।

मैं उपर दिये हुए मतोंसे सहमत नहीं हूं। कारण यह है कि जब कुण्डलिनी मूलाधारके ऊपर और नाभिस्थान पर मानी जाय तो तीन चक्र मूलाधार, स्वाधिष्ठान और मणिपूर और दो ग्रंथियोंका भेदन नहीं हो सकता। इसलिये कुण्डलिनी इस जगह पर नहीं हो सकती। मेरा मत यह है कि यह चीज भिन्न स्थानपर होनी चाहिये।

अब हम दूसरा मत बतलाते हैं। नीचे दिये हुए योगी और कुछ लोग कुंडलिनी मूलाधार चक्रमें है ऐसा लिखते हैं।

महाराष्ट्रीय महान् विभूती और भक्तियोगी ज्ञानेश्वर महाराज इन्होंने अपनी "ज्ञानेश्वरी" नामक भगवद्गीतापर जो टीका लिखी है उसमें "१२ वें परिच्छेदमें" कुंडलिनियेचा टेंभा। आधारी केला-उभा ॥५०॥ तैसी वेढियाते सोडिती। कवतिकें आंग मोडिती। कंदावरी शक्ती। उठिली दिसे ॥ २७ ॥ ज्ञानेश्वर महाराज कंद याने मूलाधार चक्र ऐसा बताते है। हठयोग प्रदीपिकामें लिखा है "कन्दोर्ध्वे कुण्डली

शाक्त: शुभ मोक्ष प्रदायिनी। बन्धनायच मूढानां यस्तां वेत्तिस वेदवित्॥ ब्रम्हद्वार मुखंनित्य मुखेनाच्छाद्य तिष्ठति॥ प्रसुप्त भुजगाकारा पद्मतन्तु निभा शुभा। प्रबुद्धा वान्हियोगेन व्रजत्यूर्ध्वं सुषुम्णया। मूलाधारमें कुंडलिनी है और वह नाड़ी कमलतंतूके बराबर है गोरक्ष पद्धतीमें उपरका मत दिया है।

" मूलाधारे मूलविद्यां विद्युत कोटि समप्रभाम्।
सूर्य कोटि प्रतीकाशां चंद्र कोटि द्रवां प्रिये॥
बिसतन्तुस्वरूपां तां बिन्दु त्रिवलयां प्रिये।
(ज्ञानार्णव तंत्र)

कुण्डले अस्याः स्तः इति कुण्डलिनी।
मूलाधारस्थ वन्ह्यात्म तेजो मध्ये व्यवस्थिता॥

जीव शक्तिः कुण्डलाख्या प्राणाकाराथ तैजसी।
महा कण्डलिनी प्रोक्ता परब्रह्म स्वरूपिणी॥

शब्द ब्रह्ममयी देवी एकानेकाक्षराकृति।
शक्तिः कुण्डलिनी नाम बिसतन्तु निभा शुभः॥
(योग कुण्डल्युपनिषद्)

यदोल्लसतिश्रृंगार पीठात् कुटिल रूपिणी।
शिवार्क मण्डलं भित्वा द्रावयन्तन्दु मण्डलम्॥
(योग शिखोपनिषद्)

श्रृंगार पीठ—आधारचक्र

घेरण्ड संहितामें " मूलाधारे आत्मशक्तिः कुंडली परदेवता। शायिता भुजगाकारा सार्द्ध त्रिवलयान्विता। मूलाधारे कुंडलिनी भुजंगा-

कार रूपिणी। जीवात्मा तिष्ठति तत्र प्रदीपकलिका कृतिः ॥" तंत्र सारमें लिखा है "ध्यायेत् कुण्डलिनी सूक्ष्मा मूलाधार निवासिनीम्। तामिष्ट देवता रूपां सार्द्ध त्रिवलयान्वितम्। कोटि सौदामिनी भासां स्वयंभुलिंग वेष्टिनीम्। तामुत्थाय महादेवी प्राण मन्त्रेण साधकः"॥ देवीतन्त्रमें यही मत दिये हैं "या मात्रा त्रपुषीलता तनुलसत तंतुस्थिति स्पर्धिनी। वाग् बीजे प्रथमे स्थिता (मूलाधारमें स्थित) तव सदांतामन्महे ते वयम्। शक्तिः कुण्डलिनी ति विश्वजनन व्यापार बध्योद्यमो। ज्ञात्वेत्थं न पुनः स्पृशन्ति जननी गर्भेऽर्भकत्वं नरा ॥ देवीतंत्र ॥

" कुंडलिनी शक्तेरवस्थात्रयविद्यते। यद्यास्मिन् चक्रे
कुमारी कुमारावस्थामापन्ना। प्रथमंसुप्ता स्थिता
मन्द्रयते मन्द्रंस्वरं करोति। पूर ९ हिरण्मयी
ब्रह्मा विवेशो पराजताः ॥ यजर्वेद

प्रथम–आधारचक्र

इसमें कुण्डलिनी मूलाधार चक्रमें है।

एक मत और पाया जाता है उसमें लिखा है कि "मूलाधारा व्द्ययं-गुलादूर्ध्वं प्रसूतभूजगाकारां स्वयंभुलिंगवेष्टितां बिसतन्तु निभां सोमसूर्याग्नि रूपिणीं तडित्वल्लीनिभां कुण्डलिनी ध्यात्वा सुषुम्ना मार्गेण तां ब्रह्मरन्ध्रे-नयेत् ॥ लक्ष्मीस्तुति ॥" कुण्डलिनी मूलाधार चक्रके दो अंगुल ऊपर है। यह ऊपर दिये हुए मतोंके अनुसार कुण्डलिनी नाभिस्थानमें और मूलाधारके ऊपर को माना जाय तो अनवस्था प्रसंगको प्राप्त होना है।" क्योंकि सब योगशास्त्रके ग्रंथोंमें और सब तन्त्रग्रंथोंमें एकही मत प्रदर्शित किया है वह यह है कि कुण्डालिनी षट्चक्रोंका और तीनों ग्रंथि-

योंका भेदन कर ब्रह्मरन्ध्रमें चढ़ती है। आद्य आचार्य शंकराचार्यजीने अपने " योगतारावली और सौंदर्यलहरीमें लिखते हैं "अपराजिता कुण्डलिनी शक्तिः षट्चक्राणि भित्वा भूयोभूय प्रविशति"॥ योगतारावली, और ' महीम् मूलाधारे कमपि मणिपूरे हुतवहं। जलं स्वाधिष्ठाने हृदि मरुत् आकाशमुपरी ॥ मनोऽपिभ्रूमध्ये सकलमपि भित्वा कुलपथं। सहस्रारे पद्मे सहरहसि पत्याविहरसे॥" चित्रिणी नाडी कुंडलिनी होती है। इसका प्रमाण सुनिए।

" उद्घाटयेत्कपाटन्तु यथाकुञ्चिकया हठात् ।
कुण्डलिन्या तथा योगी मोक्षद्वार विभेद्येत ॥

मध्ये सुषुम्णा तन्मध्ये वज्राख्या लिंङ्ग मूलतः।
तन्मध्ये चित्रिणी सूक्ष्मा बिसतन्तु सहोदरा ।
मूलात्सहस्रार स्तत्तदन्तर ब्रह्मनाडिका ॥

येन मार्गेणगतव्यं ब्रह्मस्थान निरामयम् ।
मुखेनाच्छाद्यतद्द्वारं प्रसुप्तापरमेश्वरी ॥

महायोग विज्ञान, पृष्ठ ४०-४१ द्वितीय प्रकाशन
लेखक—श्री योगानन्द जी ब्रह्मचारी
स्वर्ग आश्रम ऋषिकेश देहरादून

पराशक्तिः कुंडलिनी बिसतन्तु तनीयसी ।
ललिता सहस्रनाम।

षड्चक्र निरूपण नामक ग्रंथमें इस कुण्डलिनीका निश्चित स्थान दिया हुआ है उसे देखिये।

"तन्मध्ये चित्रिणीसा प्रणव विलसिता योगिना योगगम्या ।
लूतातंतूपमेया सकल सरसिजान् मेरुमध्यान्तर स्थान ॥
भित्वा देदीप्यते तद् ग्रथन रचनया शुद्ध बोध स्वरूपा ।
तन्मध्ये ब्रह्मनाडी हरमुख कुहरात् आदि देवान्त संस्था ॥१॥
विद्युन्माला विलासा मुनिमनसि लसत्तन्तुरूपासुसूक्ष्मा ।
शुद्ध ज्ञान प्रबोधा सकल सुखमयी शुद्ध बोध स्वभावा ॥
ब्रम्हद्वारं तदास्ये प्रविलसति सुधाधार गम्य प्रदेशं ।
ग्रंथिस्थान तदेतद्वदन मिति सुषुम्णाख्य नाड्या लपान्ति ॥ २ ॥

तंस्योर्ध्वे बिसतंतु सोदर लसत सूक्ष्मां जगन्मोहिनी ।
ब्रम्हद्वार मुखं मुखेन मधुरं सन्छादयन्ति स्वयम् ॥
शङ्खावर्तनिभानवीनचपला मालाविलासास्पदा ।
सुप्ता सर्प समाशिवोपरिसलत् सार्द्ध त्रिवृत्ताकृति ॥ ३ ॥

प्रथम श्लोकमें कहा गया है कि चित्रिणी नाड़ीका स्थान "—मेरु मध्यान्तर स्थान—" मेरु दंड के भीतर मध्य स्थानमें है Cauda Equina से निकलकर coccyx में मिलती है दोनों बाजूकी तरफ सुषुम्ना और वज्रा नाड़ी है और बीचमें चित्रिणी नाड़ी है। इस नाड़ीको मैं कुंडलिनी कहता हूं। इस चित्रिणी नाड़ीको अंग्रेजी अनॉटामिस्ट Anatomist Filum Terminal कहते हैं। "Below the end of of the spinal cord, the Pia Mater though, at first, retaining its tubular form, afterwards becomes suddenly reduced in size, and finally prolonged as a sheath to the delicate thread-like continuation of the spinal cord, the filum terminale or

central ligament. *Its glistening and silvery hue distinguishes this ligament amidst the surrounding bundles of nerve-roots.*

कुंडलिनी क्या चीज है, यह अंग्रेजी अॅनॉटमिस्ट लिखते हैं—

The Medulla spinalis or spinal cord is the elongated nearly cylindrical part of the central nervous system which occupies the upper two-thirds of the vertebral canal. It's average length in the male is 45 C. M. (about 18 inches) its weight is obout 30 gms. It extends from the leval of the upper border of the atlas vertebra to that of the lawer border of the first or upper border of the second lumber vertebra. Above it is continuous with the brain, below, it ends in the conus medullaris from the apex of which a delicate non-nervous filament, the Filum Terminale descends as far as the first segment of the coccyx. The Filum Terminale is a delicate filament about 20 c. m, (about 8 inches) in length prolonged down wards from the apex of the conus medullaris. Its upper part or Filum Terminale Internum about 15 c. m. (about 6 inches) long is continued within the tubular sheath of dura mater and reaches, as far as the lower border of the second sacral vertabra. It is surrounded by the nerves

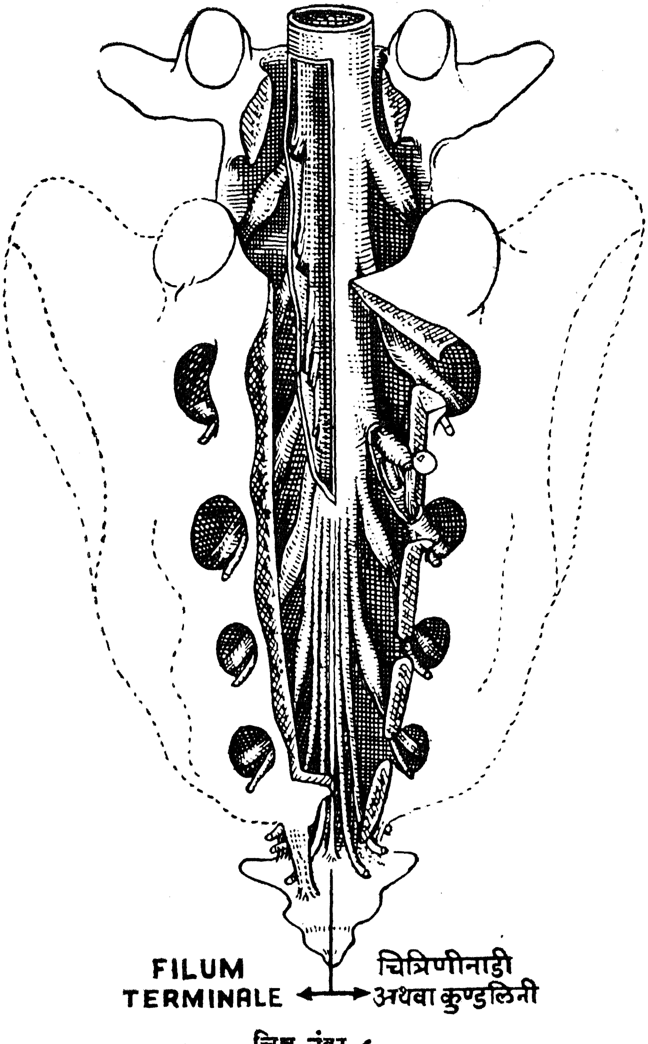

चित्र नंबर ८

forming the Cauda Equina, but can be readily distinguished from them by its bluish-white colour. Its lower part, or Filum Terminale externum, is closely invested by, and adherent to the dura, it decends from the apex of the tubular sheath of the dura mater and is attached to the back of the first segment of the coccyx. The Filum Terminale consists mainly of fibrous tissue continuous about with that of the pia mater but adhering to its outer surface are a few strands of nerve fibres which probably represent rudimentary second and third caccygeal nerves, further, Tne Central coccygeal canal of the medulla spinalis is continued downwards into it for 5 c. m.

अमेरिकन अनाटमिस्ट अपने ग्रंथमें लिखते हैं कि—

ABOUT FILUM TERMINALE

In the midst of this bundle you will be able to pick out a slender, silvary looking thread, the Filum Terminale or Central Ligament. Continuous with the apex of the conus medullaris, this terminal filament runs down the middle line amongst the nerve-roots the lower end of the dural cavity. There it pierces the dural sheath

and receiving an investment from it, decends to be attached to the back of the coccyx.

" The Filum Terminale begins at the foramen magnum, where it is continuous with periosteum, and dura mater of the brain and ends opposite the second or third piece of the sacrum in the thread like filum terminale externum which anchors the end of the dural tube to the back of the coccyx." Page 245-47 Chapter III, Anatomy of the brain, cord, and Autonomic System, The Practitioners Library of Medicine Surgery, Vol I America.

यह नाड़ी ८ इंच लंबी, रेशमके तंतुके समान तेजस्वी, प्रकाशमान सूक्ष्म, पतली और बड़ीही नाजूक है। इतनी नाजूक है। कि प्राचीन ग्रंथकारोंने " लुतातन्तूपमेया—याने मकड़ी दूसरे सूक्ष्म जीवोंको पकड़नेके लिये जो घरके कोनेमें जाल बनाती है (She is fine like the spider's thread) उसका तंतु इतना सूक्ष्म होता है कि आखोंसे देख सकते हैं किन्तु वह इतना बारीक है कि हाथमें पकड़नेसे विशेष स्पर्श नहीं होता। यह लसततन्तु बिसतन्तु, त्रपुषीलतातनुलसत तन्तू इस नामसे बतलाया गया है। यह चित्रिणी नाड़ी (Filum terminal) कुण्डलिनी होती है। इसके और भी प्रमाण सुनिए सभी योग शास्त्रकारोंने यह कहा है कि कुण्डलिनी " स्वयंभूलिंग " को वेष्टित है। इसलिये प्रथम स्वयंभू लिंग शरीरमें किस स्थानपर है यह निश्चित करना जरूर है।

अंग्रेजी शारीरशास्त्रज्ञ Gray अपने अनाटमीमें कहते हैं।

स्वयंभुलिंग—मंगल

FIG. 1163.—A section through an irregular nodule of the glomus coccygeum. × 85. (Sertoli.) (From Quain's Elements of Anatomy.)

स्वयंभुलिंग.

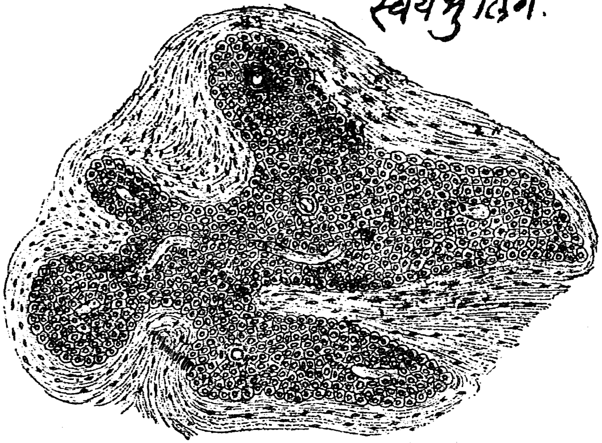

The section shows the fibrous covering of the nodule, the blood-vessels within it, and the epithelial cells of which it is constituted.

चित्र नंबर १

The Glomus Coccygeum

The Glomus Coccygeum (Coccygeal Body) is placed in front of, or immediately below the tip of the Coccyx, It is about 2-5 M. M. in diameter and is irregularly oval in shape, sevaral smaller nodules are found round or near the main mass. (See Gray's Anatomy old copy Figure 1116 page 1208) दुसरा अमरिकन anatomist अपने ग्रंथ में लिखते हैं।

The coccygeal Body (Gland of Laschka) Glomus Coccygeum has no known function, but is probably connected with that stage of development in which the tail was a prominent factor. It is found in front of the tip of the Coccyx. This gland is not uncommonly the seat of neoplastic growth at times malignant in character. The gland has capsul from which fibres connective tissue invade the substance of the organ to divide masses of epithelial cells. Numerous arterial branches remify through the structure.

Page 510

The Endocrine Glands

Anatomy and Physiology

by

Jessie Feiring Williams. M.D.

इस स्वयंभू लिंगका स्थान मैंने निश्चित बताया है।

ऊपर दिये हुए प्रमाणसे पाठकोंको ज्ञात होगा कि कुण्डलिनी क्या चीज है। इस विषयमें और एक ठोस प्रमाण दिया जाता है। "योनिस्थानकमंघ्रिमूलघटितं कृत्वा दृढं विन्यसेन्मेंढ्रे पादमथैकमेव हृदये कृत्वा हनुं सुस्थिरम्। स्थाणुः संयामितेन्द्रियोऽचल दृशा पश्येत्भ्रुवोरन्तरं। ह्येतन्मोक्ष कपाट भेदजनकं सिद्धासनं प्रोच्यते ॥११॥ गोरक्ष पद्धति पृष्ठ २०।" अर्थ सर्वोत्कृष्ट दो आसनोंमेंसे प्रथम सिद्धासनकी विधिमें कहते हैं कि गुदा और लिंगके बीचमें योनि (कुण्डालिनीका) स्थान है इसको वामपादकी एड़ीसे दृढ़ पीडन (दबाव) करे। दाहिने पैरकी एड़ी लिंगके ऊपर लगाकर दबावें दोनों पैरोंकी एड़ीयां नीचे ऊपर बराबर हो जाती हैं तथा दोनों पैरोंकी अंगुष्ठ जंघा और गुल्फोंके बीच नीचे छिप जाते हैं। इनके दबावसे योनिस्थानके तले ऊपरके दो इंद्रिय गुदा उपस्थ रुक जाते हैं। तदनन्तर हृदयके चार अंगुल ऊपर चिबुक (ठोडी) स्थिर करें और समस्त इंद्रियोंसे मनको हटाकर एकाग्र चित्त करें तथा दोनों नेत्रोंसे अचल दृष्टि कर भ्रूमध्यमें देखता रहे।

इस मोक्षरुपी द्वार खोलनेपर बताया हुआ मोक्ष मार्ग दिखाता है। यह द्वार कुण्डालिनीसे रुका हुआ है। सुषुम्णाद्वार उसे खोलकर मोक्ष मार्गके (सुषुम्णाके) द्वारा मोक्षस्थान सहस्रदलकमल कर्णिकांतर्गत परमात्मामें पहुँचानेके यत्न करता है यह सिद्धासन है। गोरक्ष पद्धति श्लोक २१ वा पृष्ठ १०। सिद्धासनसे एक बात सिद्ध होती है कि कुण्डालिनीका निश्चित स्थान इस आसनमें वाम पादकी एड़ीसे योनि स्थान पीड़ीत करना है, तात्पर्य यह है कि कुण्डलिनीको जगानेकी रीति इस प्रमाणसे ज्ञात होगी और दूसरा प्रमाण भी देखिए—षट्चक्र निरूपण श्लोकमें कहा है। तन्मध्ये ब्रम्ह नाडी हरमुख कुहरात आदि

भ्रूमध्यदृष्टी—शनि

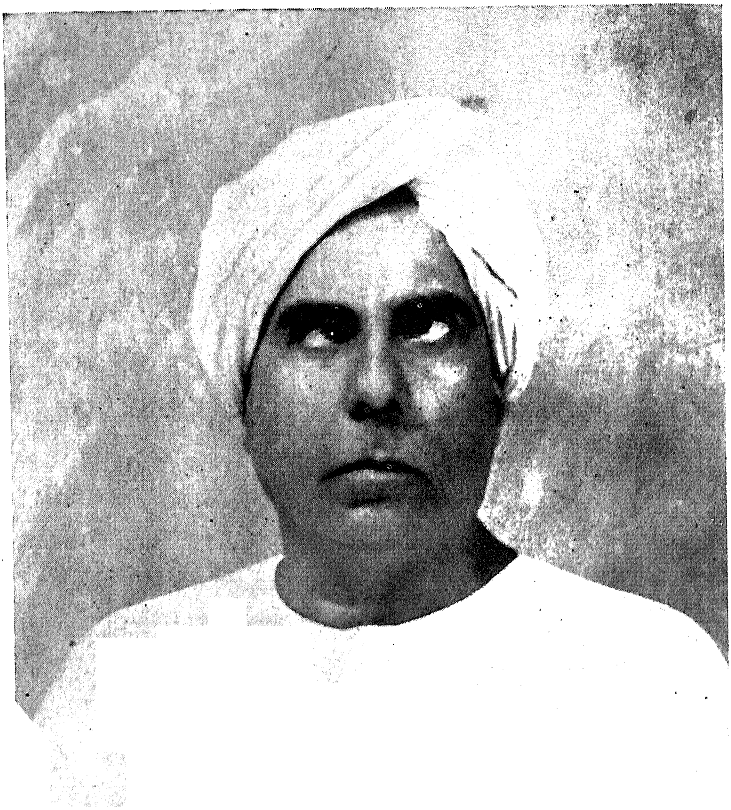

चित्र नंबर १०

ब्रम्हद्वार—शनि

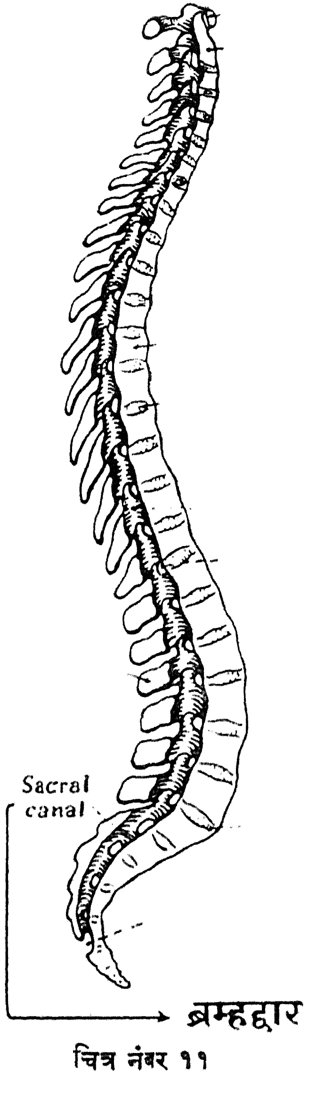

चित्र नंबर ११

देवान्त संस्थाः ॥ ब्रम्हद्वार मुखंमुखेन मधुर संछादयन्ति स्वयम् । इस श्लोकमें "हरमुख कुहर" ऐसा शब्द है इसका अर्थ क्या होता है तो कुण्डालिनीको ऊपर सहस्रार चक्रमें चढनेके लिये जो रास्ता है। उस रस्तेको दरवाजा होता है, इसको अंग्रजी अनाटामिस्ट Sacral canal कहते हैं । यह मेरूदंड के नीचे और Tip of the coccyx के उपर है । The Spinal cord ends Blindly in the Filum Terminale, and is apparently closed there. The Sushumna is said to be closed at it base called the gate of Brahman (Brahmadwara) until, by Yoga Kundalini, makes its way through it. चित्र देखिये ।

(It is called in Anatomy Sacral Canal)

इस प्रमाणसे भी ज्ञात होता है कि कुण्डालिनीका मूलाधारके नीचे वास्तव्य है । ऊपर दिए हुए अनेकों प्रमाण तथा मेरी ओरसे भी दिए गए प्रमाणोंसे पाठक इस विषयको भली भाँति समझ सकेंगे ।

कुण्डालिनी क्या चीज है यह निश्चित करना शेष रहा है। इसके विषयमें भी बहुतसे मतभेद पाये जाते हैं। मत १— यह कुण्डालिनी केवल तेज मात्र है । इस विषयका एक प्रमाण सुनिए—

तडित्कोटि ज्योतिर्द्युतिदलित षड् ग्रंथिगहनं । प्रविष्टं स्वाधारं पुनरपि सुधावृष्टि वपुषां । किमप्यष्ट त्रिशंत्किरण सकलीभूत मनिशं । भजे धामं श्यामंकुच भरनतं बर्बरकचम ॥ ८ ॥ चतुष्पत्रान्तः षड्दलपुट भगान्त स्त्रिवलय । स्फुर द्विद्युद्वन्हि द्युमणि नियताभ द्युतियुते ।

षडश्रं भित्वाऽद्वौदशदल मथद्वादशदलं । कलाश्रंचव्यश्रंगतवातिनमस्ते गिरिसुते ॥९॥ देवी पंचस्तवी । इस श्लोकका आधार लेकर कतिपय थिऑसॉफिस्ट लोगोंने झुठे ग्रंथ लिखे हैं उन लोगोंको योगशास्त्र बिलकूल नहीं समझा है और न समझ सकेगा । देखिये C. W. Leadbeater. G. C. Arundale ये कैसे भूलमे पडे है । Aurther Avelon afterwards sir john Woodraff Calcutta High court justice इन्होंने Serpent Power नामक ग्रंथ लिखा है उनको भी यही शंका थी कि मूलाधार चक्रके नीचे कुंडलीनी है । इस विषयमें मैंने एक डॉक्टर महाशयसे पूछा था। I am told that recent microscopic investigations by Dr. Cunningham have disclosed the existance of highly sensitive gray matter in the Filum Terminale, which was hitherto thought to be mere fibrous cord." Page 107, The-Centres of Lotuses. Serpent Power by Aurther Avelon. उसका सारांश यहां दिया जाता है ।

स्वामी शिवानन्द हृषीकेश (हरिद्वार) अपने Kundalini yog नामक ग्रंथमें Filum Terminal यह नाड़ी कुंडलिनी होती है यह लिखा है । फिर स्वामीजीने ऐसा भी लिखा है कि मानवी शरीरमें जो षड्चक्र है यह सब चक्र लिंग शरीरमें है न कि स्थूल शरीरमें । मैं इस मतसे सहमत नहीं, मेरे विचारसे स्वामीजीकी यहाँ बड़ी भूल हुयी है । इस सारे विवेचनसे आपको ज्ञात होगा कि कुण्डलिनी क्या चीज है । कुंडलिनी इतनी विचित्र और अगम्य क्यों ? इस बारेमें मैं इतनाही कहता हूँ कि जब यह कुंडलिनी रीढकी हड्डीके अंदर है तबतक यह चित्रिणी नाड़ी

कहलाती है और रीढकी हड्डीके बाहार आकर स्वयंभू लिंगको वेष्टित होती है तब इसे कण्डालिनी कहते हैं। जब यह नाडी सिद्धासनसे और प्राणवायुसे नीचे दबानेसे और अपानवायुको ऊर्ध्व गती देनेसे जगाई जाती है तभी इस नाडीमेंसे "सूर्य कोटिःसम प्रभाः" ऐसा असामान्य तेज बाहर निकलता है और यह तेज प्रथम मूलाधार चक्रमें प्रवेश करता है। इस मूलाधार चक्रमें ही कंद है। इस कंदपर यह शक्ति प्रथम आती है। इस कंदके बारेमें भी मत-भेद पाया जाता है। इसपर भी विचार करना आवश्यक है। शिवस्वरो-दय इस ग्रंथमें नाभिके नीचे जो कंद माना गया है इस मतको आयुर्वेदीय ग्रंथकार "सुश्रुत और वाग्भट" अपने सार्थ सुश्रुत संहिता और सार्थ वाग्भट ग्रंथमें "नाभिस्थान चार अंगुल विस्तार रहनेवाला कंद है ऐसा कहते हैं। फिर योगतत्वामृतमें पाया जाता है "ऊर्ध्वं मेंढ्रादधोनाभेः कन्दयोनि खगाण्डवत्। तत्र नाड्यः समुत्पन्ना सहस्राणां द्विसप्तति॥ कंदस्थानं मनुष्याणां देह मध्याहन्नवांगुलम्। चतुरंगुल विस्तार मायामंच तथा विधम्। अंडाकृति वदाकारं भूषितंच त्वगादिभिः॥ मेंढ्रके ऊपर और नाभीके नीचे बस्तीमें। (यह भाग नाभिस्थानके नीचे और लिंगके ऊपरके शरीरका भाग इसको बस्ती कहते हैं।) मुरगी के अण्डे समान कंद होता है। इस प्रमाणसे विरुद्ध षट्चक्र निरूपण में लिखा है गुदात्तु द्व्यंगुलादूर्ध्वं मेंढ्रात्तुद्व्यंगुलादधः इस कंदका स्थान गुदाके ऊपर २ अंगुल और मेंढ्रके नीचे २ अंगुल है इससे यह समझमें आता है की यह कंद योनिस्थानमें है। मेरे मतसे यह बराबर है कारण "अंग्रजी अनाटामिस्ट लिखते हैं" The fibres of the sympathetic form NETWORKS FORM WHICH PROCEEDS THE DISTRIBUTION TO VISC-

ERA " (देखिये Sympathetic plexus का चित्र) उपर्युक्त विवेचनसे आपको ज्ञात होगा कि कुण्डलिनी मूलाधारके नीचे है। यह नाडी होती है और इस नाडीसे भयंकर तेजस्वी तेज निकलता है। यह दोनों मिलके कुण्डलिनी होती है। कुण्डलिनी सुषुम्ना मार्ग Canalis centralis मेरुदंडके मध्यमें जो विवर है उस मार्गको सूषुम्ना मार्ग कहते हैं।

THE CENTRAL CANAL OF THE MEDULLA SPINALIS

The Central canal traverses the entire length of the medulla spinalis. The gray substance in front of the canalis named the anterior gray commissure; that behind it; the posterior grey commissure. The anterior grey commissure is thin, and incontact anteriory with the anterior white commisure; it contains a pair of longitudinal veins, one on either side of the middle line. The posterior gray commissure reaches from the central canal to the posterior median septum; is thinnest in the thoracic region, and thikest in the conus medullaris. The central canal is continued upwards through the lower parts of the medulla oblongata and opens into the fourth ventrical of the brain; below it reaches for a short distance (5-6 c. m.) into the filum terminale. In the lower part of the conus medullaris

मूलाधार चक्र—बुध

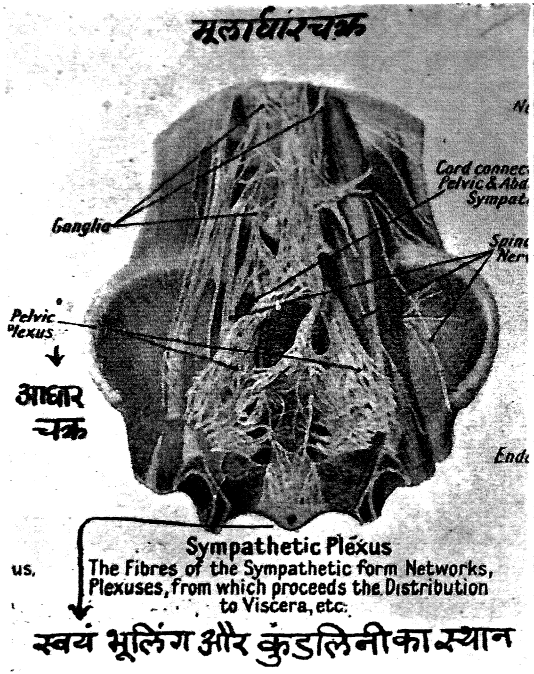

चित्र नंबर १३

कुंडलिनीका मार्ग या विवर नेपच्यून

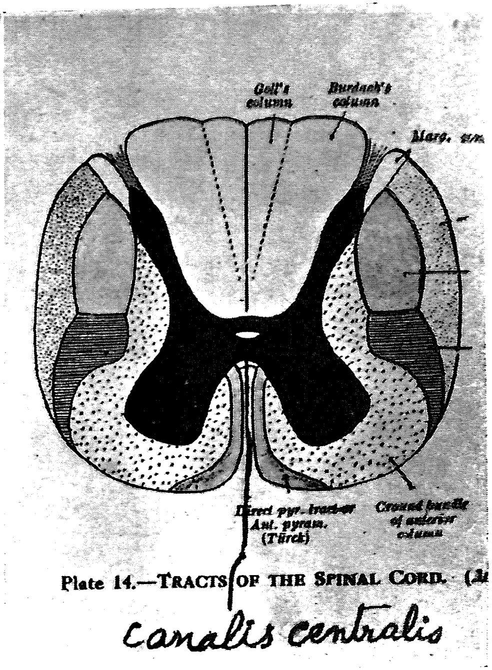

चित्र नंबर १२

it exhibits a fusiform diletation, the terminal ventricle; this has a verticle measurement of from 8 to 10 m. m. is triangular on cross section with its base directed forwards and tends to undergo obliteration after the age of forty years.

Throughout the cervical and thoracic regions the central canal is situated in the anterior third of the medulla spinalis in the lumbar enlargement it is near the middle; and in the conus medullaris it approaches the posterior surface. It is filled with cerebrospinal fluid and lived by ciliatul, columnar epithelium, which is encircled by a band of gelatinous substance, the substantia gelatinosa centralis. This gelatinous substance consists mainly of neuroglia but contains. a few nerve-cells and nerve fibres: it is traversed by processes from the deep ends of the cells which line the central canal (Gray's Anatomy page 750)

This filament is the atrophied remnent of the lower part of the embryonic spinal cord. It extends from the end of the spinal cord viz, 1st

or 2nd lumber vertebra, to the back of the coccyx. In the upper part of its extent, the filum terminale consists of a central canal...............

Anatomy of the Brain and Spinal Cord
by
J. Ryland, Whiteker.
B. A, M. B.
Pages 6, 9, 15.

कुण्डलिनी मेरूदंडमेंसे ब्रम्हरन्ध्रमें चढ़ती है और षड्चक्रोंका भेदन करती है। इस जगहपर एक शंका उपस्थित होती है कि जब कुण्डलिनी मेरूदंडमेंसे ऊपर चढ़ती है तो बाहरके चक्रोंका भेदन कैसे होता है। इसका स्पष्टीकरण ऐसा है कि षड्चक्रोंमेंसे कुछ नाड़ियाँ निकलकर मेरूदंडको लिपटी हुयी हैं और मेरूदंडमेंसे कुछ नाड़ियाँ निकलकर षड्चक्रोंमें जाकर मिली हैं। अंग्रेजी अनाटमीमें इन नाड़ियोंका नाम Spinal Ganglia लिखा है। Spinal Ganglia को कुंडलिनी धक्का मारती है इस क्रियासे सब चक्र खुलकर शुद्ध होते हैं। इस प्रकार परमेश्वरी ज्ञान देनेवाली नाड़ीका विवेचन इस अष्टमस्थानमें करना है। इस भावमें मूलाधार चक्रको देखना लगता है।

मूलाधार चक्र

Pelvic Plexus. बुध

रक्तवर्ण, भगाकृति; तीन आवर्त, चतर्दल, दलोंके अंग्रेजीनाम—Pelvic plexus, 2nd-The middle Haemorrhoidal Ple-

xus, 3-The Vesical Plexus, 4th-The Prostatic Plexus. ४ मातृका वँ शँ षँ सँ, सरस्वति द्विरण्डनामक सिद्धलिंग देवतागणेश, शक्तिडाकिनी, शक्तिरूप एकवक्त्रा, चार हाथोंवाली, सुवर्णवर्ण, यंत्र पृथ्वी तत्वका और चतुष्कोण है, यंत्रकावर्ण-पीत, बीज लँ, बीजकावाहन-ऐरावत हस्ती, जपसंख्या६००, स्थान-गुद और लिंगके बीचमें योनिस्थानमें, भूलोक, गुण-गन्ध (देव-ब्रह्मा वैश्वानर) ज्ञानेंद्रिय-नासिका, कर्मेंद्रिय स्थान-योनि-The yoni that is in the centre of this chakra is called kama and it is beloved and worshipped by sidhas. ब्रह्मग्रंथी, परावाणी, लँ कारबीज पृथ्वी, कार्य-पृथ्वी संकलीकरण गंधवाह, देवता ब्रह्मा, अष्टकोणशूल, दो नाडियाँ,-इल्वला और कालधामिनी, बस्तीकर्म, कुण्डलिनीके बीचमें महाप्रकृति, अपानवायु-यंत्रेकावर्ण गुदद्वार-Ejection of urinal Falces. सहवायू कूर्म-पलक खोलना और बन्द करना। इस चक्रपर निजानंदको देखना है। सप्तज्ञानकी भूमिका शुभेच्छा नामक होती है। शुभेच्छा किसे कहते हैं "नित्यानित्य वस्तु विवेकादिपुरःसराफलपर्यवसायिनी मोक्षेच्छा" इसीको शुभेच्छा कहते हैं। इस चक्रपर यह भूमिका देखना है। इस चक्रपर मेरे मतसे बुध ग्रहका अमल होता है और जर्मन महात्मा गिखतेलके मतसे इसपर चंद्रमाका अमल होता है ?? The Adhara, the Sacro-coccygeal Plexus, with four branches, nine Angulis (about six inches and a half) below the solar plexus. (Kanda, brahmagranthi); the source of a massive pleasurable aesthetia, voluminous organic sensations of repose, an inch and half above it, and the same distance below. The membrum viril

(mehana) is a minor centre called Agnishikha.
इस स्थानमें समाधिकी और मृत्युकी अवस्था भी देखनी है। समाधि और मृत्यु इन दोनोंमें बहुत फर्क है। मृत्युमें ज्ञान और चेतना नहीं परंतु समाधिमें ये दोनों मौजूद हैं। फिर शरीरकी अवस्था दोनोंमें समान रहती है। इस भावमें योगीयोंकी मृत्यु किस प्रकारसे होगी ? योगी योग बलसे देहत्याग करेगा या रोग बलसे ? अपनी इच्छासे त्याग करेगा या मृत्यूकी इच्छासे ? योगीके देह त्यागते समय प्राण ब्रह्मरन्ध्रसे जायेगा या अन्य मार्गसे ? योगी लोगोंका आयुष्य कितना है ? आदि ये सारी बातें देखना है। जिन योगी लोगोंने अपनी इच्छासे देह छोड़ दिया है उनके नाम–स्वामी रामतीर्थ आपने जल समाधी ली, योगीश्वर पव्हरीबाबाने इच्छासे अग्निकाष्ठ भक्षण किया, मेरे गुरुदेव ब्रह्मीभूत ब्रह्मचैतन्य गोंदावलेकर महाराज, श्रीमत् ब्रह्मीभूत योगीश्वर विद्यानन्द सरस्वती महाराज बेलापूरकर, (नगरजिला) ब्रह्मीभूत टेंबे स्वामी आदि योगीश्वरोंने अपनी इच्छासे जीतेजी समाधी लेकर देह छोड़ दिया। श्रीमंत कै. नारायण महाराज केडगांवकर इनकी मृत्यु रोगबलसे हुई। योगीकी कुंडली अर्थात् जन्मपत्री देखकर उनकी आयुर्मर्यादा बतलाना सामान्य ज्योतिषियोंकी शक्तिके और ज्योतिष शास्त्रके बाहर है। क्योंकि पूर्णावस्थाको पहुंचे हुए योगी पुरुष योगबलसे अपनी आयुर्मर्यादा बढ़ा सकते हैं। कारण योगी अपने योगबलसे अपना प्राण ब्रह्मांडमें रखकर मृत्युको धाका देते हैं; मतलब यह है कि मृत्यु इनके स्वाधीन है।

योगिओंको चाहिए कि वह अपने रहनेके लिए आश्रम कुटी, या मठ नहीं बांधना चाहिए। जिस प्रकार बिच्छु घरके कोनेमें रहता है वैसेही योगी

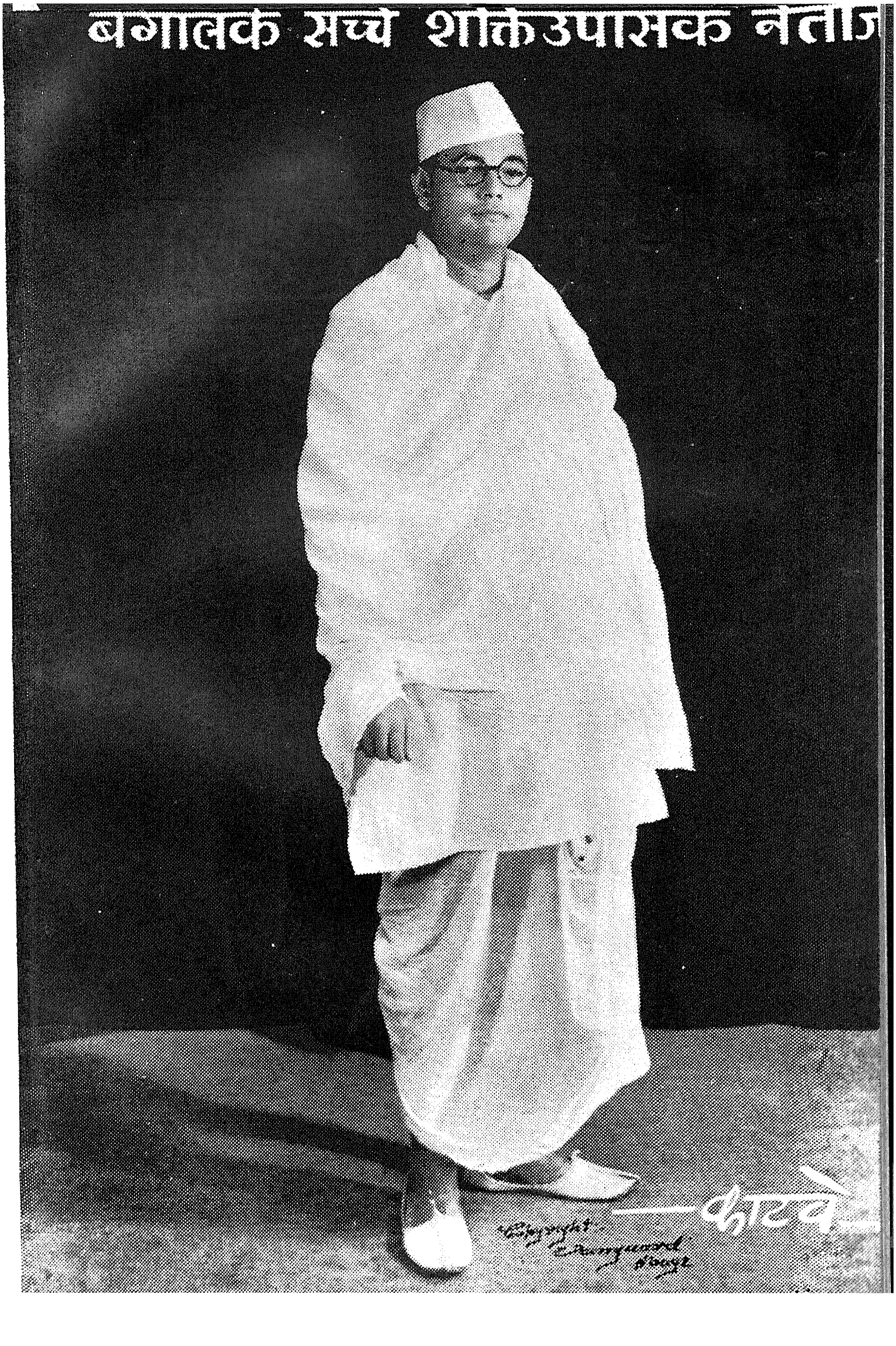
बगालक सच्चे शक्तिउपासक नेताज

जंगलमें निसर्ग निर्मित का या गिरिकन्दरमें रहना चाहिये। किंतु हठ योग प्रदीपिकामें मठ बांधनेके लिये मच्छिन्द्रनाथने अनुज्ञा दी है। निम्न श्लोक देखिए, मठ लक्षण—सुराज्ये धार्मिके देशे सुभिक्षे निरुपद्रवे। धनुःप्रमाणपर्यंतं शिलाग्निजलवर्जिते। एकान्ते मठिकामध्ये स्थातव्यं हठयोगिनः॥ अल्पद्वारमरन्ध्र गर्त्त विवरं नात्युच्च नीचायतं॥ सम्यक् गोमय सांद्र लिप्त ममलं निःशेष जन्तुज्झितम्। बाह्ये मण्डपकूपवेदि रुचिरं प्राकार संवेष्टितं। प्रोक्तं योग मठस्यलक्षणमिदं सिद्धैर्हठाभ्यासिभिः॥ एवं विधे मठे स्थित्वा सर्वचिन्ता विवर्जितः। गुरूपदिष्ट मार्गेण योगमेव समभ्यसेत। भगवत् गीताके ६ वें अध्यायमें भगवान कहते हैं "शुचौदेशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः। नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिन कुशोत्तरम्॥ इस प्रकारसे मठके लक्षण कहे गये हैं। यह सब किस लिए? मेरी रायमें अपना अभ्यास पूर्ण करनेके लिये है। योगीको मठकी जरूरत नहीं है।

इस भावमें और कई बातें देखना है। क्रियायोग, हठयोग, कूहू-नाड़ी, शंखिनी नाड़ी, जलबस्ती, महामुद्रा, सिद्धासन, मूलबंध, अश्विनी-मुद्रा, शक्तिचालन मुद्रा, शवासन, भुजंगासन और परकायाप्रवेश विद्या आदि विषयों पर विचार करना है।

गर्भके आठवे माह पर लग्न स्वामीका प्रभाव रहता है। इस माहमें गर्भको पूर्व जन्मका स्मरण होता है।

इस भाव पर भगवान शंकरजीका अमल है।

बंगालके एक सच्चे शाक्त उपासक नेताजी

महान क्रान्तिकारी स्वर्गीय मौलाना मोहम्मद बरकत उल्लाहकी मौत हो गई किन्तु उनकी आजादीकी भावना अमर है और वह सदा अमर रहेगी। सच्ची क्रान्तियोंका अन्तर्राष्ट्रीय रूप होता है। कोई

क्रान्ति एक देश या एक भोगोलिक क्षेत्रमें सीमित नहीं रहती बल्कि वह तमाम देशोंको प्रभावित करती है। इस लिये किसी भी देशके क्रान्तिकारी शहीदको सारी दुनियाके आजादी-पसन्द लोग अपना शहीद मानते हैं और इसीलिये उससे प्रेम करते हैं, उसकी इज्जत करते हैं और श्रद्धाके साथ उसकी याद करते हैं। ये शहीद आजादीके उस राज—मार्गको निर्माण करते हैं जिसपर देर—सबेर दुनियाकी सभी कौमोंको चलना है। अगर ये शहीद न होते तो दुनिया एक अँधेरी जगह बन जाती।

यह सच है कि एक महान् क्रान्तिकारी की मृत्यु होगई। किन्तु यह भी सच है की क्रान्ति जीवित है और सदाके लिये जीवित रहेगी।

देखिये

स्वर्गीय मौलाना मोहम्मद् बरकत उल्लाहका जीवन वृतांत

देशदूत—रविवार ता. १३ जनवरी १९४६

नेताजी

जन्म तारीख २३-१-१८९७ दिन उषःकालमें ४ बजके २० मिनिट, जन्मस्थल—कटक, ओरीसा। अक्षांश २०-३०, रेखांश ८६-० सूर्योदयसे शनिवार चालू होता है।

लग्न धनु, धनुलग्नका नववाँ अंश उदित होता हैं। धनस्थानमें रवि राहु बुध; तृतियस्थानमें शुक्र, षष्ठस्थानमें स्तंभीत मंगल नेपच्यून, अष्टमस्थानमें केतू, भाग्यस्थानमें वक्री गुरु, दशमस्थानमें चंद्र, व्यय स्थानमें शनि, वक्री होनेवाला हर्षल।

लग्नकुंडली

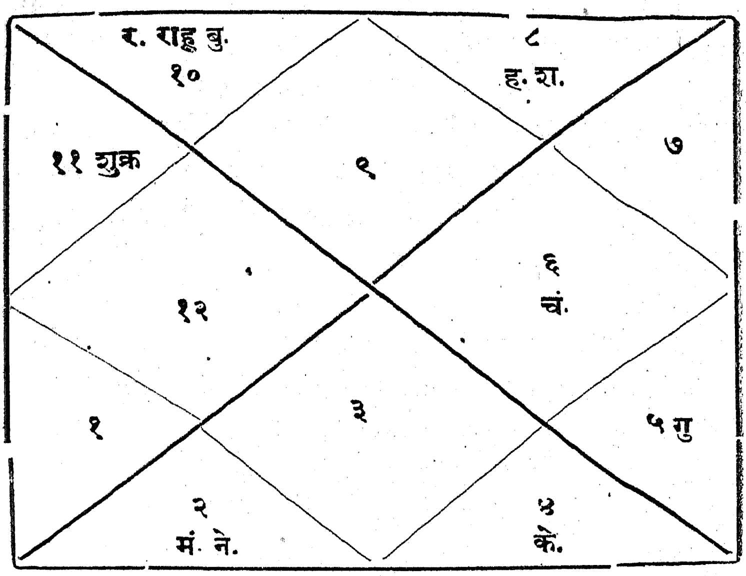

हजारों बरसोंसे बंगालमें शक्तिपूजा चल रही है। जबतक यह सच्ची शक्तिपूजा वास्तविक चलती थी तबतक बंगाल स्वतंत्र था। उसकी ओर कोई वक्रदृष्टीसे न देख सकता था। यहाँ स्वाभाविकही प्रश्न उत्पन्न होता है कि सच्ची शक्तिपूजा क्या है और किस प्रकारकी होती है। शक्तिके दो अर्थ हैं। एक अर्थ शक्ति " बल " और दूसरा योगशास्त्रानुसार अर्थ कुंडलिनी है। बंगालपर मुसलमानोंका आक्रमण होनेके पहले पहल बंगाल वाममार्गीय था। वाममार्ग याने कुंडलिनीको जगानेका कार्य है। यह सब वाममार्गीय तंत्र और यामल ग्रंथ देखनेसे मालूम पड़ता है। इन ग्रंथोंमें शक्ति नाम कुंडलिनीका है। शक्तिनाम काली है। " उमाकात्यायनी गौरी काली

हैमवतिश्वरी " इत्यमरः । काली नाम शिव पत्नि पार्वतीका है और योगशास्त्रमें काली नाम कुंडलिनीका है । इससे एक बात सिद्ध हो गयी कि बंगाल पहले पहल ईसा की बारहवी शताब्दीके पहले योगमार्गीय था बारहवी शताब्दीसे योगमार्ग भूल कर एक पत्थरकी चार हाथोंवाली, गलेमें नररुंड पहनी हुई, हाथमें हथियार, नग्न, भयानक उग्र और डर पैदा करने वाली ऐसी एक भयानक स्त्री मूर्ति बनाकर इन लोगोंने उसका नाम रक्खा काली । इस पत्थरकी काली पुजा सुरू हुयी और उस मूर्तिके सामने अजापुत्र याने बकरेको बली देते और उसका मटण बनाके खाते और ऊपरसे मद्य पीते बस यह हुयी काली पूजा । हालमें बंगालमें इसी प्रकारकी दुर्गा पूजा चल रही है, यह झूटी पूजा है । यह सच्ची काली पूजा नहीं है बल्की यह पूरा अधःपतन है। इसाकी पंद्रहवी शताब्दीमें सच्ची काली पूजा महाप्रभु भगवान गौरांग उर्फ निमाई और निताई इन्होंने किया। पंद्रहवी शताब्दीसे अबतक कतिपय सच्चे शाक्ति पूजक होगये । उनमेंसे बंगालकी वीररमणी राणी भवानी होगई । इसके बाद भगवान रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानंद हो गये । सन १९०८ से फिर सच्चे काली उपासक पैदा हो रहे हैं। इनमें बाबू अरविंद घोष प्रधान हैं । महान् क्रान्तिकारी तथा महान् महात्मा ये दोनों सच्चे शाक्ति उपासक होते हैं । सन १९०८ सालसे जिन्होंने स्वातंत्र्य युद्धमें अपने शरीरका त्याग किये कोई निर्वासित होगये यह सब सच्चे शाक्ति उपासक होते हैं । हालमें चरम और परम महानक्रान्तिकारी सुभाषचंद्र बोस यही हैं । इन्होंने इस सारे संसारभर अपना नाम कमाया और अपने नेताजी उपपद लगा लिया। भारतवर्षको स्वतंत्र करनेके लिये अपना सर्वस्व अर्पण किया और निर्वासित हो गये । मान लिजीये की नेताजी क्रान्तिकारी शहीद न बनते और महान साधु महात्मा बनते तो ?

यमस्थान या प्रथमस्थान

इनका जन्म "धनु" लग्नपर हुआ है। इस लग्न पर "साधुमहात्मा क्रान्तिकारी, ज्योतिषी, कवी, उपन्यासकार, कायदे आझाम, हायकोर्ट जज्ज, तत्वज्ञ, संन्यासी, कॉलेजमें पढानेवाले प्रोफेसर, टीचर्स और Researchers ऐसे लोग पैदा होते हैं। नेताजी ये Evolved Type के हैं, ये Type का स्वभाव स्वातंत्र्यवादी इनमें स्वतंत्रता की लालसा इतनी प्रबल रहती है कि परतन्त्रतासे भिक्षान्न देही पसन्द करते हैं।

Sagittarius is the nineth sign and the nine muses of the Greeks are so many modes of mind-the higher mind which manifest as genious and transmutes consciousness from the abstract mental state to the menifested physical brain or which bridges over the gulf between life in the body and life out of the body. Hence this is the sign of Prophet. Sagittarius denotes an openminded honest systimatic and sympathetic and generous disposition. The fate is dualistic and usually divided into two extremes of fortunes and misfortunes. The native is highly impressionable the fond of liberty and independence. He is often reckless and careless about his own body wealth, wife and children.

When fully developed he is rebellious, anarchist, philosophical, a lover of law and order and more intuitive than imitative.

The third decanate of Sagittarius rising awakens the half of the duel sign Sagittarius and quickens the intuitive and inspirational nature of the sign giving the ability to prophesy and foresee the future.

आप परोपकारी, निस्वार्थी, अव्याभिचारी, प्रेमी, दयालू, ज्ञानी, दूसरेके लिये कष्ट उठानेवाले, विश्वबंधुत्वका भाव रखनेवाले, परमेश्वरी मार्गपर चलनेवाले, लोगोंपर प्रेमसे अधिकार चलानेवाले, न्यायान्याय पारङ्गत होते हैं। आपमें सब सद्गुणोंका समुच्चय पाया जाता है। नेताजीमें "अनासक्तता" गुणधर्म अधिक पाया जाता है। महात्मा साधु सत्पुरुष और क्रान्तिकारी इन दोनोंका स्वभाव समान रहता है। इनके Daily life में एक आदत रहती है वह नीचे देता हूं।

Sagittarius rising there is tendency to rapid walking and considerable physical strength evidenced by a Firm hand clasp. The head is held high and the gaze is sincere candid and independent. Sagittarius like to sit comfortably with an arm falling over each arm of the chair.

इनको कहीं भी नींद आती है। सोनेके लिये गद्दीकी जरूरत नहीं लगती। ये लोग Easychair पर नींद लेते हैं। केवल इनको शिराणा (Pillows) अधिक लगता है। इनकी नींद कुत्तेके समान बड़ीही सावध रहती है। लग्नेशगुरु भाग्यस्थानमें है। लग्नेशे नवमे पुंसां भाग्यवान जनवल्लभः। विष्णुभक्तो पटुर्वाग्मी पुत्रदार धनैर्युतः ॥ मूर्तिपतियदिनवमे-तदाभवेत प्रचुर बांधव : सुकृतः। समचित्तश्च सुशीलः सुकृतिख्यातस्तु ते रवीः ॥ इसी योगका फल बाबू सुभाषचंद्रको मिला है। इनका जितना

विदेशोंमें मान सन्मान हुवा है उतना केवल पं. नेहरूजी कोही मिला है। इसी प्रकार आखीर अन्दमान निकोबार के जनताके अधिपती बन गए। इस धनु लग्नमें और एक प्रमाण मिलता है वह प्रमाण यह है कि ये लोग स्वयंभू होते हैं। Born not made योगशास्त्रके अष्टांगयोगमें पहली First Step "यम" करके है। इसमें "अहिंसासत्यमास्तेय ब्रम्हचर्य परिग्रह:" इतने गुणधर्म हैं। यह सब गुणधर्म नेताजीके अंगमें पूर्ण रूपमें वास करते हैं। ब्रम्हचर्य तो है फिर अपरिग्रह १९२० सालमें I. C. S. हो के आये। सरकार इन्हें उस समय बड़ा अधिकारपद देना चाहती थी परंतु इन्होंने स्वीकार नहीं किया।

नियमस्थान या धनस्थान—इस स्थानमें मकर राशि उदित है। इस राशिका अधिपति शनि व्यय स्थानमें है। इसका फल यह है कि पूर्वार्जित इस्टेट नहीं रहती। यदि रही भी तो उन्हें भोगनेके लिये नहीं मिलती। धनेशो व्ययगे मानी साहसी धनवर्जिता। विक्रमीन्नृपमेधावी जेष्ठ पुत्रं सुखं नहीं ॥ विदेशगो, बलवान् संग्रामिक: ख्यातोनरो भवेज्जात: ॥ इस स्थानमें अष्टांग योग साधनमें दुसरी सीढी "नियम" है। इस नियमका पालन नेताजी भली प्रकार करते थे। इन्होंने जो कुछ संपत्ति कमायी है वह "षट् साधन संपत्ति" है। इस संपत्तिके विषयमें आद्य आचार्यजीने अपने तत्वबोधमें लिखा है कि वह शम, दम, उपरती तितिक्षा, श्रद्धा, समाधान" मय है। गहराईसे देखा जाय तो यह संपत्ति इनके पास बहुत है और इसी संपत्तिमें ये अच्छी स्थितिमें मृत्यु तक रहेंगे।

इस स्थानमें रवि राहू और बुध है। रविका फलादेश स्वतंत्र रहकर आजीविका चलाना, किसीका न सुनना, स्वेच्छासे चलना, योग्य अभिमानी रहना, दुसरेपर प्रेमसे अधिकार चलाना " आझाद सरकारम सब

जातियोंके लोग थे, उसमें भेद नहीं रखा था" यह अनुभव हो गया। अपने खाने पीने और कपड़े की कभी चिंता नहीं की? चालू परिस्थितीसे झगड़ा करते जाना इत्यादि, राहुका फल Penny wise pound foolish ऐसा चालचलन न रखनेवाला, उचित मार्गसे चलनेवाला, निर्व्यसनी, हातमें धन बहुत आता जाता है किन्तु संग्रह नहीं होता। अनाथ लोगोंपर दयार्द्र दृष्टीसे देखना, वाणीमें तेज बहुत रहनेसे लोग दब जाते हैं। इस स्थानमें बुध है। इसका फल—विद्या पूर्ण होती है किंतु रुकावटसे। अधिकारी वाणी, निर्भिड़, बुद्धिमान् और लेखक होते हैं।

आसनस्थान या तृतियस्थान—इस स्थानमें कुंभ राशि उदित है इस राशिका अधिपति शनि व्यय स्थानमें है। इस योगका फल ऐसा है कि उनके व्यवसायमें इनको भाई बहन मदद न करेंगे; भाई बहनका बहुत नाम लौकिक होगा। हाथसे पराक्रम खूब होगा; इस स्थानमें शुक्र है यह ऐसा फल देता है कि बहिनें There are six sisters altogether षट् भगिनी भार्गवे—यह शुक्र छ बहिनें देता है।

गुरु भाग्य स्थानमें रहनेसे ८ भाई होते हैं। इनमेंसे १९३० में एक भाईका देहावसान हो चुका उनका नाम सतिशचंद्र था। उस समय राहूकी दशा थी। लग्नमें शनी और सप्तमस्थानमें गुरुका भ्रमण चल रहा था। राहूका भ्रमण पंचम स्थानमेंसे चल रहा था, इस भाईका देहावसानका काल बराबर मिल गया। दूसरी बहीन प्रमिलाका देहावसान सन १९३५ सालमें हो चुका इस समय दोनों भाई बहिनोंके स्थानमेंसे पापग्रह भ्रमण कर रहे थे। जब नेताजीके भाई और बहनका देहावसान हुआ तब बाबू साहेबकी कुंडलीमें तृतिय स्थानमेंसे पापग्रहका

भ्रमण हो रहा था तथा गुरुकी महादशा भी चल रही थी। इस समय शनि कुंभ राशिमें, गुरु तूला राशिमें और राहू लग्न स्थानमें भ्रमण कर रहे थे यह भी बराबर मिल गया। आझाद हिन्द फौजके जरिये नेताजीने दुनियाको अपने पराक्रमसे पूर्ण परिचित करा दिया है और दुनियामें इसीलिए वे काफ़ी मशहूर भी हो गए हैं। उपासना नैतिकतासे धैर्यपूर्वक निभानेकोही हम पराक्रम समझते हैं।

इस स्थानमें शुक्र शनिकी राशिमें है। यह नीचे दिया हुआ फल देता है। १. विवाह कर लेनेकी इच्छा नहीं होती, २ विवाह होनेके लिये बहुतसी बाधाएँ आती हैं। ३ विवाह यदि हुआ हो स्त्री सौख्य पूरा नहीं मिलता। ४ पति पत्नीमें सुखका संबंध नहीं रहता। ५ दो तीन विवाह होते हैं। ६ स्त्री अन्य धर्मियोंकी मिलती है। ७ उमरसे बड़ी और गंभीरता रखनेवाली मिलती है। ८ विवाहके पूर्व विधवा विवाह कर लेते हैं। ९ विवाहके पश्चात् आर्थिक तंगी निर्माण होती है। इस स्थानमें पराक्रम देखा जाता है।

प्राणायामस्थान या चतुर्थस्थान–इस स्थानमें मीनराशि उदित है। इस राशिका अधिपती गुरु भाग्य स्थानमें है। नवमगे सुखपेबहु भाग्यवान् पितृधनार्थ सुहृन्मनुजाधिपः। भवति तीर्थकरो व्रतवान् क्षमी सुनयनः परदेशसुखीनरः॥ इनके व्यवहारसे घरानेका नाम इस संसारमें गूँज रहा है और भाई बहिन आदि सब प्रेम करते हैं। वह गुरु वक्री होनेसे स्वकष्टार्जित नहीं होगा और पिताका सौख्य माताके तरह नहीं मिलेगा, थोडा मिलेगा। इनके पिता श्री. ता. ३–१२–१९३४ को स्वर्गवासी होगये। इस समय धनस्थानमेंसे रवि राहू और बुध इन तीनों ग्रहोंपरसे शनि राहूका भ्रमण चल रहा था। कुटुंबस्थाने यह घरका मालिकका

स्थान है और रवि पितृकारक और बुध पितृस्थानाधिपति होते हैं। इसी कारण पिताश्रीका देहावसान होगया और माताजी पीछे रह गयी। प्राणवायु इनके स्वाधान है।

प्रत्याहारस्थान या पंचमस्थान—इस स्थानमें मेष राशि उदित है। इसका आधिपति मंगल षष्ठस्थानमें है। पंचमेश मंगल, षष्ठस्थानमें वृषभ-राशिमें नेपच्यूनके साथ ही बैठा है इस कारण ये भगवती कालीके उपासक बने, ये भगवान महावीरजीके उपासक होनेवाले थे बादमें इस उपासनामें बदल हुआ। इनके हृदयमें माया मोह बिलकूल नहीं है।

"वे शक्तिके साधक थे और जब कभी उनपर आपत्ति आती थी या कोई नया कार्य आरंभ करते थे तो वे जगद्जननी मातादुर्गाकी अर्चना अवश्य करते थे। जेलसे जब सरकारने छोड़ दिया तो उन्होंने फिर माताकी अर्चना आरंभ कर दी।"

आझाद हिंद फौज पृष्ठ ७१
लेखकः— रामशंकर त्रिपाठी, प्रकाशकः—लोकमान्य
कार्यालय १६० हॅरीसनरोड कलकत्ता।

यह योग यही बतलाता है कि शिक्षण पूर्ण होनेके लिए बहुतसी बाधाएँ आती हैं। फिर गुरु भाग्यस्थानमें रहनेसे शिक्षाक्रम पूर्ण होता है। सुभाषबाबू सन १९१३ सालमें Matric हुये। इस समय गुरु लग्नमें था। सन १९१५ में Inter पास हुये इस समय गुरु कुंभ राशिमें था। १९१८ सालमें B.A. पास होगये। इस समय गुरु वृषभ राशीमें था और राहू लग्नमें था क्योंकि मंगलपरसे गुरुका भ्रमण चल रहा था। सन १९२० सालमें I. C. S पास होगये इस समय गुरु कर्कमें, शनि सिंह राशीमें और राहू तूला राशिमें भ्रमण कर रहे थे। शनि और गुरु ये दोनों भी राजकीय राशिमें थे इस कारण

I. C. S पास होगये । इस समय राहूकी महादशा थी सब बराबर मिला । पंचमेश मंगल, नेपच्युन षष्ठस्थानमें रहकर शनि और हर्शलको प्रतियोग करता है. इसलिए इनको संतान नहीं है (विवाह ही नहीं तब संतान कैसी हो सकती है।)

धारणास्थान या चमत्कारस्थान—इस स्थानमें वृषभ राशि उदित है। इसका अधिपति शुक्र तृतिय स्थानमें है। ये योग यह बतलाता है कि इनकी सब धारणा राष्ट्र कल्याणके लिये चल रही है। इसीलिये सरकारसे लढ़ रहे हैं। इस जगहपर मंगल और नेपच्यून है। षष्ठस्थान ये बड़ा मिस्टिक हाऊस है। मिस्टिक हाऊसमें नेपच्यून यह बड़ाही मिस्टिक ग्रह मंगलके साथ बैठा है। इस योगका फल ता. १५-या-२१-१-४१ के दिन बंधनमेंसे अदृश्य होकर झियाउद्दिन पठाण बनकर पेशावर काबुल मार्गसे जर्मनीमें जा पहुंचे। नेपच्युन ग्रह Criminal investigation Department पर अमल करता है। गुन्हेगारीकी तलाश करनेके- लिये वेषांतर करना पड़ता है। नेपच्यून वेषांतर कराता है। इस समय गुरु-शनि मेषराशिमें, राहु नेपच्यूनकी युति कन्याराशि स्थित चंद्रमापर भ्रमण करते रहे हैं। इस जगहपर राहू नेपच्यून भी चंद्रपर भ्रमण करते थे यह अनुभव मिल गया ? सन १९२५ मंडालेमें तबियत खराब हो गयी। इस समय गुरु मकरराशिमें रविपर भ्रमण करता रहा। राहू अष्टमस्थानमें शनि लाभ स्थानमेंसे भ्रमणकर रहा था। जब रविपरसे गुरुका भ्रमण होता है तब तबियत अच्छी नहीं रहती। सन १९३५ मार्चमें पेटके दर्दपर आपरेशन किया गया। मंगल दशमस्थानमें चंद्रपर, शनि कुंभराशिमें, राहू मकरमें ऐसे ग्रह थे। यह भी ठीक ठीक मिला। षष्ठस्थानके मंगल नेपच्यून ऐसे रोगोंको निर्माण करते है की बड़े बड़े डॉक्टर और वैद्य इनसे चिकित्सा नहीं हो सकती।

अन्ततक प्रकृति ऐसीही रहेगी। इनकी धारणाशक्ति प्रबल रहनेसे ध्यानमें अच्छा लाभ उठा रहे हैं।

ध्यानस्थान या सप्तमस्थान–इस स्थानमें मिथुन राशि उदित है। इसका स्वामी बुध धनस्थानमें रवि राहूसे युक्त है। इस कुंडलीमें आजन्म विवाह न होनेके ग्रह योग हैं वे नीचे दिए जाते हैं। १ सप्तमेश बुध धनस्थानमें राहू रविसे युक्त है। २ शुक्र तृतिय स्थानमें है। ३ व्ययस्थानमें शनि हर्शल है। ४ शुक्रके सामने वक्री गुरु हैं। ५ धनस्थानमें रवि और राहू ये पापग्रह हैं। इतने ग्रहयोग विवाह सौख्य नहीं देंगे। इनका ध्यान स्त्री नहीं बल्कि स्वराज्य मिलाना और हिंदुस्थानको आजादी प्रदान करना यह ध्यान है।

समाधिस्थान या मृत्युस्थान–इस स्थानमें कर्कराशि उदित है। इसका अधिपति चंद्र दशमस्थानमें है। मृत्यु अपघातमें कभी भी न होगा मृत्युयोग शांततासे समाधानीसे और राष्ट्रकार्य करते करते होगा। इस जगहपर एक आशंका निर्माण होती है कि ता. १६ आगष्ट १९४५ के दिन नेताजी हवाई जहाजमें बैठकर रंगूनसे बँकाकको जा रहे थे उस समय विमानको अपघात हो गया और नीचे गिर पड़ा। उसमें नेताजी की मृत्यु हो गयी। इस समयका ग्रहयोग नीचे दिया गया है। गुरु नेपच्यून कन्याराशीमें जन्मस्थ चंद्रपरसे भ्रमण कर रहेथे। हर्शल षष्ठस्थानमें शनि शुक्र और राहू मिथुन राशिमें, मगल वृषभ राशिमें और चंद्रमा वृश्चिक राशिमें ऐसे ग्रहयोग थे। इस समय लग्नेश गुरुकी दशा चल रही थी। इस ग्रहयोगसे विचार किया जाय तो मेरे विचारानुसार निश्चित स्वरुपमें मृत्यु नहीं हुई है। वे जीवित हैं यह मेरा आत्मविश्वास है। इधर और एक शंका निर्माण होती है कि उस दिन नेताजी उस हवाई जहाजमें थे या नहीं? इसका उत्तर ज्योतिष शास्त्रसे कहा जाता है कि लग्नेश और रवि ये दोनों शरीरके मालिक होते हैं। ये दोनों ग्रह

शनि राहू मंगल हर्षलसे अलग थे और चंद्रमा वृश्चिक स्थिर राशिमें था अतएव उस दिन वे उस हवाई जहाजमें नहीं थे। यह बात स्पष्ट तया मालूम होती है। सुभाषबाबूको यह मालूम था कि मुझे अपयश मिल रहा है, मैं अब अंग्रेजोंके हाथों पकड़ा जा सकता हूँ इसीलिए वे किसी पनडुब्बीमें बैठकर कहीं अदृश्य स्थानपर चले गये। तात्पर्य यह है कि उस दिन चन्द्र व्ययस्थानमें और वृश्चिक जल राशिमें था। व्ययस्थान महासागरका कारक है। इसे सिद्ध करनेके लिये एक दूसरा प्रमाण भी सुनिए—इस शरीरका मालिक रवि कई घंटोंके बाद अष्टम स्थानमेंसे भाग्य स्थानमें चला जाता है। ता. ५-९-१९४५ के दिन रवि जन्मस्थ गुरुको मिलता है। इससे यह सिद्ध होता है कि नेताजी जल मार्गसे होकर किसी महान् साधू महात्माके आश्रयमें पहुँच चुके हैं। वह स्थान इतना निर्भर है कि जहाँपर दुनियाके किसी भी व्यक्तिके जरिये उनके जीवितको धोखा नहीं पहुँच सकता।

हमारे प्रधान मंत्री पं. जवाहरलाल नेहरुने कई दिनोंके पूर्व रेडियो पर एक वक्तव्य दिया था कि हवाई जहाजके नष्ट होनेपर नेताजीका देहान्त हो गया है। किन्तु भारतके कोनेकोनेसे अखबारवाले सुभाषबाबू के जीवित रहनेकी, अमूक तारीखको प्रगट होनेकी तथा अमूक स्थानपर प्रगट हो जानेकी खबर प्रकाशित किया करते हैं। बहुतसे विद्वान इस प्रश्नको हल करनेमें जुटे हुए है किन्तु विषय दिनोदिन वादग्रस्त होता जा रहा है।

अबतक जितनीभी खबरें उनके विषयमें प्रकाशित हुयी हैं उनपर सहसा विश्वास नहीं किया जा सकता। ज्योतिषके गहरे अध्ययनके बाद नेताजीके प्रकट होनेका काल हमने इस प्रकार निश्चित किया है

" धनु राशिमें गुरु, सिंह राशिमें शनि और मीन राशिमें राहू, हर्षल मिथुन राशिमें और नेपच्यून कन्या राशिमें। इस प्रकारका संयुक्त काल स. १९४९ के सितंबर अक्टूबर मासमें आता है। मेरे अनुभवानुसार मृत्युकालमें ग्रह किस प्रकार आते हैं। इसे भी सुनिए–(१) शनि और राहू इनका गोचर भ्रमण धन, चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम, दशम और व्ययस्थानमेंसे चलता है। (२) ये जब भ्रमण करते हैं तब जन्मकालके रवि और चंद्र ये दोनों शनिसे बिघडने लगते हैं। (३) गुरु रविके साथ साडेसाती करना चाहिए या रविके केंद्रसे भ्रमण करना चाहिए (४) अथवा गुरुसे चंद्रका साडेसाती रहनी चाहिये। ५ धनेश और सप्तमेश इन परसे शनिका भ्रमण शुरू रहना चाहिए। ६ यदि ऊपरके ग्रहयोग चालू रहते हैं उस समय धन, चतुर्थ, षष्ठ, सप्तम और अष्टम स्थानके राश्याधिपतीकी दशांतर दशा चलना जरूर है। उपर दिये हुए ग्रहयोगोंपर मानव प्राणीकी मृत्यु निश्चित होती है। देखियें लेखकका "शनिविचार" पृष्ठ ७०। उपर दिये हुये मृत्यु कालीन ग्रह योगमेंसे अपघातके दिन, मृत्युके लिये योग्य ऐसा एक भी ग्रह योग नहीं था। सबब मृत्यु होना सर्वथैव असंभवनीय बात है इसी लिये वे जीवित हैं यह निश्चित्।

ग्रह योगोंका उपर्युक्त विचार करनेपर यह सिद्ध होता है कि नेताजी जिवित हैं। आजकी राजनैतिक हलचलोंका भी गहराईसे अध्ययन किया जाय तो तिसरा महायुद्ध अत्यन्त निकट आयासा जान पडता है। इसी कारण रूस तथा इंग्लेंडके युद्धकालमें नेताजी प्रगट हो सकते हैं।

अब नेताजीके आयुष्य मानपर विचार करेंगे—शनि व्ययस्थानमें वृश्चिक स्थिर राशिमें है। और यह ग्रह प्रत्यक्ष मृत्यु देनेवाला ग्रह है। अतएव इनकी मृत्यु धीरेसे अर्थात् वृद्धावस्थामें होगी। १९६७ इ. में इनकी

मृत्यु है। उस समय निम्न लिखित ग्रहयोग मिलते हैं। शनि और राहू मीन राशिमें, गुरु कर्क राशिमें रविके सामने, हर्शल दशम स्थानमें और नेपच्यून वृश्चिक राशिमें उस समय शनिकी दशा चलती है। इनकी मृत्यु रुग्णावस्थामें नहीं स्वेच्छासे होगी।

ज्ञानस्थान या नवमस्थान—इस स्थानमें सिंहराशि उदित है। इस राशिका अधिपति रवि धनस्थानमें है "भाग्येशो सहजे वित्त सदा-भाग्यानुचिंतनः। धनवान गुणवान कामी पंडितोजनवल्लभः॥ हिंदुस्थान का स्वातंत्र्यभाग्य कब खुलेगा इसकी नेताजी दिनरात चिन्ता करते थे। उन्होंने स्वतःके भाग्यकी कभी भी चिन्ता नहीं की। इस योग पर मनुष्य लोकप्रिय होता है। इस स्थानपर गुरु है यह गुरु कॉलेजके बड़ी २ परिक्षा पास कराता है। सन १९२० सालमें केंब्रीज विश्वविद्यालयकी B. A. परीक्षामें भली प्रकार पास होगये उस समय गुरु कर्क राशिमें था। सन १९-५-१९२१ में कै. बाबू सी. आर. दासने राष्ट्रीय कॉलेज शुरू किया उस कॉलेजके नेताजी प्रिन्सिपल थे। इस समय गुरु सिंह राशिमें, राहू तूल राशिमें था। यह गुरु Politics, Economics Philosophy, Sanskrit यह विषय बताता है। कॉलेजमें B. A. में इन विषयोंमेंसे एकादा विषयमें उत्तीर्ण हुए हैं ऐसा मेरा ख्याल है। यदि गुरु अध्यात्मिक मार्ग बतलाता है इसलिये १९१५ सालमें गुरुके लिए कुछ काल तक घूमने गये फिर भी गुरु नहीं मिले। इस समय गुरु कुंभ और मीन राशिमें और शनि मिथुन राशिमें तथा राहू मकर राशिमें था। ये योग सतगुरु नहीं देते। इसके बाद पुनः वापीस आये कारण इस कालमें दशा अंतर दशा अनुकूल नहीं थी। जब धनु राशिमें गुरु, शनि सिंह राशिमें और राहू मीनमें आजाय तब सद्‌गुरु मिलेंगे। नेताजी के सिरपर प्रत्यक्ष भगवान् महावीरजी और भगवती

काली इन दोनों देवताओंका वरदहस्त पडकर सद्गुरुकी कृपा होनेवाली है। इस प्रकार ये बडे भाग्यशाली पुरुष हैं। उस समय गुरु दशामें राहू अंतरदशा रहेगी। यह गुरु सिंह राशिके २० वे अंश degree में है। इसका वर्णन सेफारिअलने दिया है उसे यहाँ उद्धृत करते हैं। प्रथम २० अंशमें जो दृश्यका दर्शन हुवा है वह यहहै "A crescent moon joined to a shining star" इसका अर्थ यह है "It denotes that the native will have many changes in life and will eventually become eminent through his association with some person of high rank and merit. The native will be gifted with a powerful imagination much versatility and keen intuition. He will travel to distant countries, and will become eminent for his own mental brilliancy, apart from his associations which however will be the means of his success. It is a degree of Distinction." यह अर्थ नेताजीको कितना बराबर लगता है यह विचार करना योग्य है।

कर्मस्थान या पितृस्थान—इस स्थानमें कन्या राशि उदित है इस राशिका अधिपति बुध धनस्थानमें है। धनस्थानेचकर्मेशोनरेंद्रमान्यो भवेच्चनरपालः। सौम्यग्रहेच मातुः पितुश्च परिपालक पुरुषः॥ इस स्थानमें चंद्र है। मातृसौख्य अधिक मिला। माताजीका देहावसान सन १९४३ में हुआ। इस समय गुरु और राहू कर्क राशिमें थे और शनि षष्ठ स्थानमें तथा मंगल नेपच्यूनँ परसे जारहा था। यहांतक सारी बातें बराबर मिलती हैं। विस्तृत विचार करना आवश्यक है। इस स्थानमें चंद्र

स्वतःके लिए कुछ भी न करते हुए लोक सेवा करनेके लिए उद्युक्त करता है। जयदेव कवि (ज्योतिषी) अपने ग्रंथमें कहते हैं "कि लक्ष्मी सुकीर्तिः कृत कार्य सिद्धिर्भूपेष्टताशौर्य मिहास्तिखेन्दौ" ॥ यह चंद्र संग्राहक और स्वयंशासित वृत्ति रखता है, फिर यह चंद्रमा इनको नेस्तनाबूत करनेके लिए कारण हुआ इस कारण चंद्र अष्टमेश होता है।

वासनास्थान या लाभस्थान—इस स्थानमें तूलराशि उदित है, इस राशिका अधिपती शुक्र तृतिय स्थानमें है। इनका देहावसान होतेतक हिंदकी स्वातंत्र्यकी वासना रहेगी। इनके रक्तके हरएक कण और हरएक रोम गर्जना करते रहेंगे कि मैं हिंदुस्थानको स्वतंत्र करूंगा और भारतवर्ष स्वतंत्र होगा। नेताजी अपने लिये विरक्त थे अपने जीवनमें कभी लाभ नहीं उठाया।

मोक्षस्थान या कीर्तिस्थान—इस स्थानमें वृश्चिक राशि उदित है। इस राशिका अधिपति मंगल षष्ठस्थानमें है। यह योग ये बतलाता है कि जीवन भर बड़े प्रबल शत्रुओंसे लढ़ना है। नेताजी जीवनभर लढ़ते रहे थे सबको मालूम है। इस स्थानमें शनि है यह शनि कीर्ति देता है वैसे ही निर्वासित होना पड़ता है। दीर्घकालीन सजा भोगना लगता है। किसी भी एक विषयमें अग्रस्थान पाते हैं। बुद्धि बड़ी तेज रहती है और विद्वान होते हैं। कायदे पंडित, बैरिस्टर, वकील और राजनैतिक षडयंत्र चलाने वाले होते हैं। व्ययस्थानके शनिका ऐसा गुण धर्म है कि इनको मौका मिल जाय तो बड़ी बड़ी संस्थाए स्थापन करते और चलाते है। ये लोग घरबारको देखते नहीं। यह शनि परदेशको ले जाता है अंतमें इनको मोक्ष देता है. नेताजीने सन १९२१ में राष्ट्रिय सैनिक दल स्थापित किया था उस

समय शनि कन्या राशिमें था, इस कार्यमें बंगाल सरकारनें छः मासकी सजा दी। सन १९२२ आक्टोबरमें जेलसे मुक्त हो गये। इस समय शनि कन्या राशिमे गुरु सिंह राशिमें और राहू तुल राशिमें था यह बराबर मिल गया क्योंकि शनि जन्मस्थ चंद्रपरसे जा रहा था। इसी ग्रहयोगपर "यंग बेंगाल पार्टी" की स्थापना हुयी। इस बारेमें बंगाल सरकारने ता. २५-१०-१९२४ के दिन बेमुद्दत बिना चौकशी अटकमें रखा। इस समय शनि तुल राशिमें राहू कर्क राशिमें और गुरु वृश्चिक राशिमें था यह बराबर मिला। इस सजामें इनको हिंदुस्थानमें न रखते हुवे यहांसे उठा ले गये और ब्रम्हदेशकी मंडाले जेलमें रखा गया। किन्तु पुन:१६-५-२७ को उन्हें मुक्त कर दिया। इस समय शनि वृश्चिक राशिमें, गुरु मीन राशिमें और राहू मिथुन राशिमें था। यह बराबर मिला। ऊपर दिये हुए ग्रहयोगपर "युवक संघ" और "हिंदी स्वातंत्र्य संघ" इन दो संघकी स्थापना की गयी। सन १९३० जनवरीमें नेताजी और श्री. श्रीनिवास अय्यंगार महोदय इन्होंने इंडिपेण्डन्स लीग की स्थापना की। इस समय शनि धनुराशिमें, गुरु वृषभराशिमें और राहू मेष राशिमें थे। ता. २६जनवरी १९३० के दिन "प्रथम स्वातंत्र्य दिन" मनाया गया। इस समय शनि धनु राशिमें, गुरु वृषभ राशिमें और राहू मेष राशिमें थे यह सब बराबर मिल गये। स्वातंत्र्यदिन २६ जनवरीको मनाया गया अतएव नेताजीको एक सालकी सजा बंगाल सरकारने दी। इस समय ग्रह योग उपर्युक्त थे। लाहोरमें ता. ३१-१२-१९३१ के दिन "स्वातंत्र्य दिनका स्मृतिदिन "मनानेके लिये नेताजीके नेतृत्वमें एक बड़ा जुलुस निकाला गया। उस जुलुसपर पुलीसोंने लाठीमार किया, इस लाठीमारमें नेताजीको बहुतसी चोटें लगी। इस समय रवि शनियुक्त धनु राशिमें, गुरु सिंह राशिमें, राहू मीन राशिमें और मंगलके पीछे

शनि इस प्रकारके ग्रहयोग थे। कलकत्तेमें जनवरी १९३२ में राजबंदी दिन मनाया गया और एक विराट सभाका आयोजन हुआ। इस जमाव-पर पुलीसने लाठीमार चलायी उस समय भी नेताजीको चोट लगी। इस समय शनि मंगल युति मकर राशिमें, गुरुकर्क राशिमें थे। इसी ग्रहयोग पर ता.२६-१-१९३१ के दिन "स्वातंत्र्य दिन स्मृति" का बड़ा जुलुस निकाला गया था और उस पर पुलीसोंने लाठीचार्ज किया। इस विषयमें नेताजीको छः मासकी सश्रम सजा दी गई। वे दिसम्बर १९३१ में पुनामें गये। इस अवसर पर शनि धनु राशिमें, गुरु सिंह राशिमें और राहू मीन राशिमें थे। इस प्रकारके ग्रहयोगोंके कारण नेताजीको कल्याण स्टेशनपर हिरासतमें ले लिया गया। सन १८१८ की ३ री कलमके अनुसार छानबीन किये बिनाही कारावासमें रख दिया गया। कुछही दिनोंके बाद उनके पेटमें दर्द होना शुरू हुआ और क्षयरोगकी झलक स्पष्ट दीखने लगी। इसी अर्सेमें २० तारीखको शिवनी जेलसे जबलपुर जेलमें पहुँचाये गये। ता. २३-२-३३ को सरकारने बाबू सुभाषचन्द्रजी को यह आज्ञा दी कि वे स्वास्थ सुधारके लिए युरोप चले जाय। उसी दिन नेताजी बंबईसे युरोप चले गए। इस समय शनि मकरमें, राहू और गुरु कुंभ राशिमें थे। यह भी बराबर मिलता है। ता० ३-५-१९३४ में नेताजीने व्हीएन्नामें "इंडो-युरोपियन सोसायटी" की स्थापना की। उस समय गुरुकन्या राशिमें, शनि कुंभ राशिमें और राहू मकर राशिमें इस प्रकारके ग्रह थे। यह भी ठीक ठीक मिलता है। इ. स. १९३६ में नेताजी आयर्लंड गये और वहाँपर डी. वेलेरासे मुलाकात की। इस समय मंगल कुंभ राशिमें, गुरु वृश्चिकमें और राहू धनु राशिमें था। यह भी ठकि मिलता है। ८-३-१९३५ को नेताजी युरोपसे बंबई लौटे उसी समय पुनः सरकारने इन्हें हिरासतमें ले लिया। इसबार

उन्हें १ सालतक जेलमें रखा गया। इस समय राहू गुरु धनु राशिमें और शनि कुंभ राशिमें था। पुनः बीमारियोंका प्रकोप बढ़ा। इसी कारण सरकारको बिनाशर्त उन्हें मुक्त कर देना पड़ा।

इस समय गुरु मकर राशिमें; शनि कुंभ राशिमें और राहू वृश्चिक राशिमें इस प्रकार ग्रहयोग थे यह भी बराबर मिलता है। सन १९३८ के दिसम्बर मासमें बाबू सुभाषचंद्रजी हरिपुरा काँग्रेसके अध्यक्ष चुने गये। इस समय शनि मीन राशिमें, गुरु कुंभ राशिमें और राहू तूल राशिमें था यह भी ठीक मिलता है। १९३९ में त्रिपुरा काँग्रेसके अध्यक्ष पदके लिए पुनः आप हटसे खड़े हुए यहाँ भी आपकी विजय हुयी। यहाँ शनि मेष, गुरु मंगल मीन राशिमें और राहू तूल राशिमें था यह भी बराबर मिलता है। उपर्युक्त ग्रहयोगोंपर आपने Forward Block की स्थापना की और महाराष्ट्रमें संचार करने लगे। १९४० में आप बंगाल असेम्बलीके सदस्य चुनकर आये इस समय शनि मेष राशिमें, राहू कन्यामें और गुरु मीनमें थे। यह भी ठीक ठीक मिलता है। इस साल हॉलवेलकी पत्थरकी मूर्ति उठानेके लिए एक बड़ा आन्दोलन चालू किया गया, मूर्ति वहाँसे हटाई गयी। इसी अर्सेमें फॉरवर्ड ब्लॉकके विषयमें आक्षेपार्ह लेख प्रकाशित करनेके संबंधमें सरकारने इन्हें कैद किया। इस समय शनि गुरु मेष राशिमें और राहू कन्यामें था। इस समय इनकी तबियत ठीक नहीं थी अतएव जेलसे छोड़कर उनके मकानपरही कड़े पहरेमें रख दिया गया। १५-१-४१ को मौलवीका भेष धारणकर बंगाल छोडकर काबूल मार्गसे जर्मनी जा पहुँचे। इस समय राहू चंद्रको ग्रास रहा था। पिछे नेपच्यून लग रहा था। ये ग्रह दशम स्थानमें जन्मस्थ चंद्रको दोनों भी ग्रास रहे थे इसी कारण नेताजी वेषांतर करके जा सके। यहाँ यह देखनेकी बात है कि सब कितना बराबर मिलता है।

सन १९४२ सालमें जर्मनीमें आझाद हिंद फौजकी स्थापना की। इस समय शनि वृषभराशिमें था, ३० जून १९४३ में बर्लिनसे जापानमें आये और नेतृत्वपद स्वीकार कर लिया। इस समय गुरु राहू कर्क राशिमें थे, यह गुरु राहूका फल मिल गया। ता. ४ जुलाई १९४३ में आझाद हिंद सरकारकी स्थापना की गयी। इस समय गुरुराहू कर्कमें, शनि वृषभमें, नेपच्यून कन्यामें, हर्षल वृषभमें, मंगल मेषमें, ऐसे ग्रहयोग थे। इन सब ग्रहोंको देखते हुए यह जान पड़ता है कि सब ग्रह प्रतिकूल थे। इसी ग्रहयोग पर ता. ५ जुलाई १९४३ के दिन " चलो दिल्ली " की घोषणाकी। ता. २५-८-१९४३ के दिन आझाद हिंद सेनाका नेतृत्व अपने हाथमें लिये और सेनापति बन गये। इस समय राहू गुरु कर्क राशि में, शनि मिथुन राशिमें, नेपच्यून कन्यामें, हर्षल और मंगल वृषभमें ऐसे ग्रह थे यह भी बराबर मिलता है। ता. २१-१०-१९४३ के दिन आझाद हिंद सरकारकी कायदेके अनुसार स्थापन की गयी और ता. २५-१०-४३ के दिन आझाद हिंद सरकारके मंत्रीमंडलने ब्रिटन अमरीकाके साथ युद्ध पुकारा इस समय वृषभ राशिमें मंगल, मिथुन राशिमें शनि, कर्क राशिमें राहू और गुरु सिंह राशिमें थे। इसमें मंगल शनि और राहू ये अनुकूल नहीं थे। उस दिन चंद्रमा अनुकुल नहीं था। इस लिये इनको आगे अपयश मिला। ता. २३-१-१९४४ में सिंगापूरमें नेताजी की सुवर्ण तुला हुयी, आपने तुलाका दान आझाद हिंद फौजको दिया। यह समारंभ बड़े उत्साहसे और पूर्ण भक्तिसे हुआ। इस समय लग्नेश गुरु भाग्य स्थानमें वक्री था। राहू जन्मस्थ राहूके सामने। शनि जन्मस्थ शनिके सामने और नेपच्यून मंगल परसे जा रहा था। मंगल अपने जन्मस्थ मंगलपर आगया था। प्रिय पाठकगण नेताजीके

ग्रह कितने ठीक मिलते हैं और इसीलिए उनकी कुण्डलीके अन्य लग्नोंपर इतना मान सम्मान होना संभव है क्या ?

आझाद हिंद फौज पृष्ठ ७९
लेखक:—रामशंकर त्रिपाठी
प्रकाशक:—लोकमान्य कार्यालय
१६० हॅरीसन रोड, कलकत्ता ।

सन १९४४ से इनका मणिपूर, विष्णुपूर और इंफलमें इनको परास्त होना पड़ा। अन्तमें ता. २१-८-१९४४ से सैन्यकी सब हल चल बंद हो गयी। इस समयमें सिंहराशिमें गुरु शुक्र बुध और रवि थे, शनि मिथुन मे, राहू कर्क में थे और कन्यामें मंगल था। यह ग्रहयोग ता. १६ आगष्टके १९४५ को नेताजी रंगूनसे बैंकॉकको जानेके लिये निकले। ता. १८-८-१९४५ को विमानको अपघात हुआ। और नेताजीका मृत्यु हो गया। बस सब मामला खतम। इसीका विवरण पिछें दिया गया है। इनकी मृत्यु हुई है या नहीं इस बातको तो भगवान महावीरजी जाने या नेताजी जाने अथवा पंडित नेहरुजी जाने।

अब ग्रह योगका विचार करेंगे

महान क्रान्तिकारी और महान महात्मा यह दोनों भी कर्क, वृश्चिक, धनु और मीन लग्न पर पैदा होते हैं। फिर क्रान्तिकारी और महात्मा इन दोनोंमें किंचित् फर्क रहता है। क्रान्तिकारी लोग ऊपर दिये हुए लग्न पर पैदा होते हैं उनके कुंडलीमें शनि मंगलकी युति, प्रतियुति और मंगलके व्यय स्थानमें शनि और मंगलके चतुर्थ और दशम स्थानमें शनि ऐसे योग रहते हैं और महात्मा लोगके कुंडलीमें यह योग नहीं रहते इतना फरक है।

अब नेताजिके कुंडलीमें यह योग है। शनि व्ययस्थानमें और मंगल षष्ठ स्थानमें है ये यह बताता है।

This combination is excellent for those who have to undergo hardship or danger. The martial influence is as it were tempered and more adaptable ordered and controlled while the Saturnian energised and made more enterprising and courageous. Such people have as a rule small regard for personal comfort or even safety and may be excellent explorers, rulers of savage tribes of men needing firm control. It denotes orderly and courageous action endurance and some practical ability. it tends to hardship self-abnegation and a disciplined life. A powerfull and in some cases dangerous combination. It other influences agree there may be a distinct danger of unusual physical suffering. It occurs in the nativities of several victims. Blows. cuts. and stabs sometimes occur often as the result of falls.

The two so-called malefic planets Saturn and Mars is generally a very evil position but as the true astrology teaches that there is no real evil but only that which is relative; it is within your Power to make this a good position and this

you may do by allowing your ambition to conquer your senses but beware of escape from one danger to fall into another; for the mind is much more dangerous to cope with than the senses. It will give you a strong and powerful will and a fearlessness that will be favourable if selfishness is kept out of it. You will be able to hold very unique and also responsible posts where skill and courage are necessary but do not become over ambitious. This aspect will cause you to be ambitious and make you persevering and eager to excel in whatevar enterprise you undertake. You are brave courageous and fearless with regard to danger and you not only possess of Force character but tactfulness also. There is much of the hero spirit in you and you love to be at the head of men and you would make a very capable leader.

व्ययस्थानमें राष्ट्रका राजनैतिक आन्दोलन देखना लगता है। इसलिये इस स्थानका शनि यह पूर्णतया बताता है और षष्ठ स्थान यह बताता है कि राष्ट्रके शत्रू इसी कारण मंगल यहाँ रहनेसे यह बताता है कि इनको राष्ट्रके शत्रूके साथ झगड़ना पड़ता है। यह योग बताता है कि निर्वासित होना, हमेशा जेलमें रहना, खून, विषप्रयोग, आत्महत्या करना और सरकारी पैसा या रिश्वत लेनेके दोषारोपनपर सजा मिलती है। इस योगमें मनुष्य बहुत जलदी उपर चढ़ता है। He comes as

soon as possible in the public eye । इस योगमें शरीर कष्ट बहुत होता है ।

योग २ रा—मंगल नेपच्यून युति षष्ठस्थानमें है—ये योग यह बतलाता है कि ये लोग बागी होते हैं । Anarchist होते हैं । स्त्री और बालबच्चोंका सौख्य नहीं देता, विदेश घुमाता है । स्वप्नमें देवता दर्शन होता है । वेषांतर करना पड़ता है, पेटके दर्द होते हैं । अतएव डॉक्टर वैद्य लोगोंको Diagnosis करनेपर बड़ी तकलीफ होती है ।

योग ३ रा—शुक्र तृतिय स्थानमें और गुरु भाग्य स्थानमें हैं। इस योगका फल यह है कि वेदान्ती होते हैं । इस योगमें स्त्री बालबच्चोंका सौख्य नहीं मिलता । शुक्रके सामनेसे गुरु वक्री होता है । इसका फल यह है कि पूर्वायुष्यमें गुरु नहीं मिलेगा । वृद्धावस्थामें गुरु मिलता है । सबब यह है कि मस्तकमें एक काम वासना और दुसरा ज्ञान यह दोनों भी चलते हैं । इसमें काम वासना मस्तकमेंसे हट जाना चाहिए तब गुरुकी कृपा होती है । गुरु लग्नेश होकर शुक्रके सामने वक्री होनेके कारण स्त्रीके मुखके सामनेसे अपना मुँह घुमा लिया । योग शास्त्रके अनुसार देखा जाय तो उनके शरीरमें तीन चक्र प्रबल हैं । एक मणिपुरचक्र और दूसरा आज्ञाचक्र और तीसरा Pineal Gland किंतु गुरु कृपासे सब चक्र खुल जायेंगे । नेताजीके कुंडलीपरसे देखा जाय तो यह मालूम होता है कि ये बड़े महात्मा होने योग्य हैं लेकिन भवितव्यता अलग थी । हमारे एक महाराष्ट्रीय कवीने कहा है ।

देशभक्तां प्रासाद् बंदिशाला ।
श्रृंखलांच्या गुंफिल्या पुष्पमाला ॥
चिता सिंहासन शूलराजदंड ।
मृत्यु दैवत दे अमरता उदंड ॥१॥

नहींतो ! ऐसा क्यों न होता—
पर्ण कुटिका प्रासाद योगियाना ।
अन्न वस्त्रे ना घेति कष्ट नाना ॥
भूमि सिंहासन करीं योग दंड ।
मृत्यु दैवत दे अमरता उदंड ॥२॥

आज भारतके कोने कोनेमें नेताजीकी कुण्डलियाँ तैयार हो रही हैं। कई ज्योतिषी मेष लग्न, वृषभ लग्न, तूल लग्न मीन लग्न और कई कुंभ लग्न बतलाते हैं। हमारे विचारसे ये सब मनचाहा करना चाहते हैं। जब नेताजी नागपुर पधारे थे तब हमने उनसे उनकी जन्म तारीख और जन्मकाल (Time) का पत्ता पूछा था तब आपने जन्म तारीख और जन्म काल उपर्युक्तही बतलाया था। उनके कथनपर हमने यह कुंडली तैयार की है अतएव अन्य सारी कुंडलीयोंको हम असत्य मानते हैं।

नेताजी ये महा पुरुष हैं। भारतके राजनैतिक इतिहासमें इनका नाम बडेही गौरवसे सुवर्णाक्षरोंमें लिखा जायगा। इनकी कीर्ति अमर रहेगी।

॥ इत्यलम् ॥

नवमभाव—इस भावमें धनु राशिका उदय होता है। जिसपर गुरुका प्रभाव है। इस भावके भावकारक ग्रह गुरु और रवि माने गये हैं। लग्नसे लेकर अष्टमभाव तक योगी योगाभ्यास करके यदि कुंडालिनीको ब्रह्मरंध्रमें लावे तो क्या उसका कार्य पूर्ण हो जाता है? नहीं। कबीर-दासजीने कहा है—"कुंडालिनीको खूब चढावे ब्रम्हरंध्रमें लावे, सोहि कच्चा बे कच्चा नहीं गुरूका बच्चा" यद्यपि कुंडलिनी ब्रह्मरंध्रमें स्थिर करनेमें योगी सफल हो जाँय तो फिर भी उसे आत्मज्ञान प्राप्त नहीं हो

सकता। कुंडलिनीको ब्रम्हरंध्रमें लानेसे नादब्रम्हकी प्राप्ति होती है; किन्तु "मैं स्वयं ब्रम्ह हूँ" यह ज्ञान प्राप्त नहीं होता। परमार्थमार्गका मुख्य उद्देश यही है कि आत्मज्ञानकी प्राप्ति करना। चारों वेदोंमें "अयमात्माब्रह्म", 'प्रज्ञानमानन्दंब्रह्म' 'ॐ तत्सत्' 'अहं ब्रह्मास्मि' यही कहा गया है।

आत्मज्ञान प्राप्त करना इसका अर्थ ही यह है कि "इस सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और लय करनेवाला मैं ही हूँ" इस बातका ज्ञान होना। उसी तरह मैं कौन हूँ? कहाँसे आया हूँ? मेरा कर्तव्य क्या है? मुझे किस ओर जाना है? आदि के बारेमें पहले ही ज्ञान प्राप्त कर शब्दरहित ब्रम्हके ऊपर उठनाही आत्मज्ञान प्राप्त करना है। इस नवमभावमें इसी आत्मज्ञानका विचार किया जाता है। आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिये सद्गुरू की आवश्यकता होती है। गुरू की व्याख्या हम पिछले परिच्छेदोंमें कर चुके हैं। आजकल कई भोंदू गुरु पाये जाते हैं। वे तो स्वयंही कुछ नहीं जानते, फिर शिष्योंको किस प्रकारसे भवसागर के पार ले जा सकते हैं? इसी लिये इस स्थानमें किस प्रकार का गुरु करना चाहिये? ज्ञानयोग, दीक्षा, पंथ, वज्रासन, स्वस्तिकासन, धनुष्यान वीरासन गरूडासन, उष्ट्रासन, तीर्थयात्रा, उपदेश करना, सत्संग बनाना, अच्छे शिष्य बनाना, धर्म प्रचार करना, अध्ययन व अध्यापन करना, आदि बातोंका इस भावमें विचार किया जाता है।

गर्भके नववें माह पर चन्द्रका प्रभाव होता है। इस माहमें पूर्व जन्मके कर्मोंका स्मरण हो जाता है। इस भावका अधिपति भगवान दत्तात्रय है।

दशमभाव—इस भावमें मकर राशिका उदय होता है और इस राशिपर शनिका प्रभाव होता है। इसके भावकारका ग्रह रवि, गुरु शनि और बुध ये चार ग्रह माने गये हैं। नवमस्थानमें यदि योगी आत्मज्ञान प्राप्त करनेमें सफल होता है, तो वह किसी गिरिगव्हरमें स्वस्थ पड़ा रहता है। जब तक योगी पुरुष विदेही स्थिति प्राप्त नहीं कर लेते तब तक उन्हें कर्म करने ही पड़ते हैं। भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—"तयोस्तु कर्मसंन्यासात् कर्मयोगो विशिष्यते।" अर्थात्—उन दोनोंमें भी कर्मोंका संन्यास और निष्काम कर्मयोग साधनमें सुगम होनेसे श्रेष्ठ है। एवंज्ञात्वाकृतं कर्म पूर्वैरपिमुमुक्षुभिः। कुरुकर्मैवतस्मात्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम्॥" अर्थात् पहले होनेवाले मुमुक्षु पुरुषोंद्वारा भी इस प्रकार जानकर ही कर्म किया गया है, इससे तू भी पूर्वजों द्वारा सदासे किये हुए कर्मको ही कर"। ज्ञानी पुरुष कर्म तो करते हैं किन्तु उनसे अलिप्त रहते हैं। इसीलिये इस भावमें कर्मयोग का विचार करना चाहिये। योगीका पूर्वजन्म संन्यासयोग, बाह्यकर्म, वैराग्य, संतोष, आकाश-धारणा, मुद्रामें विपरीत कर्णी, उत्कटासन, वृक्षासन, मकरासन, धैर्य आस्तिक, बुद्धि, मायामोहपटल आदि बातोंका विचार इस स्थानमें करना पड़ता है। इहा मूत्रार्थ फलभोग विरागः

गर्भ की प्रसूति इसी माहमें होती है। इस माहपर रविका प्रभाव होता है। स्वामी विवेकानन्द; स्वामी रामतीर्थ, स्वामी श्रद्धानन्द और आद्य आचार्य श्री शंकराचार्य आदि महापुरुष कर्मयोगी थे जिन्होने ज्ञानोत्तर कर्म करनेके पश्चात् समाधि ली थी। महामना श्रद्धेय पण्डित मालवीयजी इस युगके कर्मयोगी थे। इस स्थानके अधिपति भगवान श्रीकृष्ण हैं।

लाभभाव—इस भावमें कुंभराशिका उदय होता है और इस

राशि पर शनिका प्रभाव होता है। इसका भावकारक ग्रह शुक्र माना गया है। योगीको कर्म योगका आचरण करते हुए व लोगोंको सदुपदेश देते हुए एवं धर्मका प्रसार करते हुए राजयोगका अभ्यास करना पड़ता है। राजयोगका अर्थ होता है सहज समाधि लगानेका अभ्यास बिना कष्टसे साध्य करना; अर्थात् दूसरे शब्दोंमें राजयोगका, कर्मयोग का आचरण करते करते योगबलद्वारा ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। जैसे लोगोंने मठ बांधकर देना, द्रव्य देना व सर्व प्रकारके योगक्षेम चलाना। इसको ज्योतिषशास्त्रमें राजयोग कहते हैं। इस भावमें वासना-क्षय, लोभ, यशस्विनी आदिका विचार करना पड़ता है। इस भावका अधिपति देवी लक्ष्मीजी है।

व्ययभाव—इस भावमें मीनराशिका उदय होता है जिसपर गुरुका प्रभाव होता है। इस भावका भावकारक ग्रह शनि माना गया है। मैंने मीन राशिका अधिपतित्व राहूको दिया है। प्रस्तुत (लेखकका "ग्रहण विचार" देखिए) योगी योगाभ्यास करते करते जब सब प्रकार की वासनाओंका त्याग करते हैं तब उनकी शरीर पर तनिक भी आसक्ति नहीं रहती। वे विदेही स्थितिको प्राप्त होते हैं अर्थात् शरीर रहते हुए शरीरके विषयमें किसी प्रकारकी सुधबुध नहीं रह जाती। उदाहरणार्थ जहाँ बैठ गये वहीं बैठ रहे, खाना खाया तो खाया नहीं तो नहीं खाया। जन्मजात पागल (Born Mad) और विदेही योगी इनमें अन्तर यही है कि जन्मजात पागल अज्ञानी होते हैं और विदेही योगी ज्ञानी। इस भावमें कोई भी योगी पुरुष विदेही स्थितिको प्राप्त होगा अथवा नहीं, लययोग, भक्तियोग, निर्गुण साक्षात्कार, ईश्वर प्रणिधान, मुमुक्षुत्व, इडा नाड़ी, चन्द्रामृत, पाशिनी मुद्रा, नभोमुद्रा, मत्स्यासन आदिका विचार किया जाता है। राजा जनक विदेही योगी हो गये हैं। इस भावके अधिपति भगवान् महावीरजी हैं।

परिच्छेद १५ वाँ

द्वादश भावस्थित ग्रहोंका फलादेश

प्राचीन कालसे भारतवर्षमें जितने भी साधु सत्पुरुष हो गए हैं वे सब कर्क, वृश्चिक, धनु और मीन इन चार लग्नोंमेंसे किसी एक लग्नके पाये जाते हैं। उपर्युक्त चार लग्नोंके आतिरिक्त जो भी सत्पुरुष मिलते हैं उन्हें अपवाद समझना चाहिए। अतएव उपर्युक्त केवल चार लग्नोंको लक्ष करते हुए द्वादश भावस्थित ग्रहोंका फल आगे दिया जाता है। इन चार लग्नोंके अतिरिक्त दूसरे लग्नवाले साधुपुरुषोंके विषयमें भी यह फलादेश न्यूनाधिक प्रमाणमें लगानेमें कोई खास हरकत नहीं है।

प्रथम स्थान (लग्न)

इस स्थानमें कर्क अथवा वृश्चिक राशिमें रवि हो तो स्वभाव अभिमानी, पूर्वायुष्य अर्थात् ५२ वर्षतक निर्लोभी, मायारहित और निष्प्रेम रहता है। ५२ वर्षके बाद स्वभाव लोभी और क्रोधी बनता है। केवल धन एकत्रित करने की इच्छा होती है और तदनुसारही उनसे कार्य भी होते हैं। किन्तु इनके क्रोधी स्वभावका दूसरोंपर कुछ भी असर नहीं होता। अधिक शिष्य बनानेकी इनकी इच्छा नहीं होती। जीवनमें उन्हें एकाध शिष्य तो अवश्य बनाना पड़ता है। वह शिष्य बिलकूल निष्क्रिय होता है। ये लोग आत्मविश्वासी, दृढनिश्चयी, मित-भाषी और उदार होते हैं। इनमें दैवी चमत्कार बतलानेकी इच्छा प्रबल होती है। इसके विरुद्ध लग्नमें धनु अथवा मीन राशिमें रवि हो तो

स्वभाव निर्लोभी, प्रेमी, उदार, क्रोध रहित तथा सामान्य लोगोंको उपदेश देनेकी प्रबल इच्छावाला होता है। इस प्रकारके महानुभाव अपने मत प्रचारके लिए शिष्योंकी वृद्धि करते हैं। इस प्रकार पंथ निर्माण कर अपना उद्दिष्ट कार्य सिद्ध करते हैं। इनमें स्वाभिमान होता है किन्तु व्यर्थ स्वाभिमान नहीं। इनके मनमें दैवी चमत्कार बतलानेकी इच्छा नहीं होती। हमेशा ऊँचे विचार तथा सादगीसे रहना यह इनकी विशेषता है। Plain living and high thinking यह कहावत उन्हें ठीक लगती है। मायासे और मोह ये परे होते हैं। ज्ञानवान होते हुए भी इनका व्यवहार अज्ञानियोंकासा होता है। अर्थात् अपने ज्ञानकी रोचकतासे प्रदर्शन करनेकी इनमें प्रवृत्ति नहीं होती। हमेशा जागृत रहकर न्याय और अन्याय की छानबीन किया करते हैं। ये हमेशा प्रसन्नवदन रहते हैं और इसीलिए इनके पीछे लोगोंकी भीड़ लगी रहती है।

इनके ज्ञान तथा स्वभावके कारण मोहित होकर लोग इनके पीछे पड़े रहते हैं। इनकी आज्ञाका लोग सदैव स्वेच्छासे पालन करते हैं। मीन लग्नवाले लोगोंमें प्रेम और भक्तिका अधिक प्रमाण रहता है। अतएव इन्हें शीघ्रही विदेही स्थिति प्राप्त हो जाती है। धनु लग्नवाले लोग हमेशा जागृत रहते हैं। धनु लग्नवाले लोगोंको: मान-अपमान सर्दी-गर्मी तथा सुख-दुःख आदि समान होते हैं। "अभयं सत्व संशुद्धीर्ज्ञान योग व्यवस्थिति। दानंदमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥ तेजः क्षमा धृति शौचम् अद्रोहोनाति मानिता। इस प्रकारका स्वभाव होता है।

लग्नमें चन्द्र रहा तो—स्वभाव बड़ाही प्रेमी, लोगोंको प्रेमसे वश करनेमें तत्पर, कभी २ कुछ अंश तक लोभी तथा सात्विक होता है। कर्क और वृश्चिक लग्नवालोंके बारेमें उच्च पदसे नीचे गिरनेका योग रहता

है। पूर्व जन्ममें इन लोगों द्वारा कुछ तपश्चर्या की होती है और इस जन्ममें उनका स्वभाव ऐष आरामी, शांत खापीकर मजा करनेवाला होता है; और इसी लिए इनका अन्त २ में अधःपतन (Downfall) होता है। धनु और मीन लग्नवाले शान्त, परिश्रमी, एकान्त प्रिय, स्त्रियोंसे दूर रहनेवाले तथा किसीसे लेनदेन न रखनेवाले होते हैं।

लग्नमें मंगल रहा तो—ये लोग योगीश्वर होते हैं। मंगल कर्क अथवा वृश्चिक लग्नमें हो तो स्वभाव बहुत क्रोधी और शाप देनेकी इच्छा वाला होता है। प्राचीन कालीन शाप देनेवाले ऋषि मुनि मंगलके अमलवाले थे। इन लोगोंकी वृत्ति उन्मत्त रहती है। इनका स्वभाव राजगुरु बनने योग्य होता है। बड़ेही उदार तथा त्यागी होते हैं। किसी भी वस्तुका अधिक संग्रह करनेकी प्रवृत्ति नहीं होती। शिष्य न बनाना, मठादिकी स्थापना न करना, सदा इधर उधर घूमते रहना आदि इनमें अधिक प्रमाणमें पाया जाता है।

लग्नमें बुध रहा तो—स्वभाव शान्त चित्त, हरदम भक्तिमें लीन, सदा आनंदी, किसी भी कामको सोचकर करनेकी वृत्ति, सामान्य लोगोंको वेदान्तपर उपदेश देनेकी इच्छा तथा बड़े २ ग्रंथ लिखनेकी प्रवृत्ति इनमें अधिक प्रमाणमें पायी जाती है।

लग्नमें गुरु रहा तो—कर्क और वृश्चिक लग्नवालोंकी इच्छा हमेशा शिष्योंकी संख्यामें वृद्धि करनेकी होती है। पंथोंका निर्माण तथा उपदेश देनेकी इच्छा भी इनमें अधिक होती है। इन लग्नवाले महात्मा किंचित अहंकारी किन्तु शान्त स्वभाववाले होते हैं। धनु और मीन लग्न वाले ज्ञानी, तेजस्वी और शान्त चित्त वाले होते हैं। यह लोग 'अभयं-सत्वसंशुद्धिर्ज्ञान योग व्यवस्थिति। दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप

आर्जवम् । इस प्रकारके गुणोंसे युक्त मिलते हैं । गुरुपदेश देना, लोगोंपर प्रेम करना यह इनका मुख्य कर्तव्य होता है । कर्क, वृश्चिक और धनु लग्नवाले विशेषतः लोकोपयोगी काम अधिक करते हैं । कर्क वृश्चिकवाले लोग अधिकतर घूमते रहते हैं । किन्तु धनु और मीन लग्नवाले लोग स्थिर रहकर काम करते रहते हैं । धनु और मीन लग्नवाले नित्य आनंदी माया मोहसे रहित, अहिंसा और सत्य स्वभाववाले होते हैं ।

लग्नमें शुक्र रहा तो—कर्क और वृश्चिक लग्न वालोंके कुंडलीमें शुक्र लग्नमें हो और शुक्रके समीप रवि ग्रह न हो तो पूर्वायुष्यमें ये लोग साधु महात्माके नामसे प्रसिद्ध हो जाते हैं । किन्तु उत्तरायुष्य में मोहमें पड़कर स्त्री लंपट तथा द्रव्य लोभी हो जाते हैं । इनकी उपासना समाधि लेनेतक चलती है । किन्तु वही शुक्र धनु और मीन लग्नमें हो तो माया, मोह, स्त्री अथवा द्रव्यको वाशिभूत न होते हुए ये लोग पूर्ण ब्रम्हचर्य व्रतका पालन करते है । इनकी वृत्ति हमेशा आनंदी होती है । प्रेमी मधुरभाषी आर परोपकारी इनकी विशेषता है ।

लग्नमें शनि रहा तो—कर्क और वृश्चिक लग्नवाले लोग कभी कभी दुसरोंमें नहीं मिलते । पूर्वायुष्यमें छोटीसी लंगोटी लगाकर रहते हैं, भिक्षा माँगकर जमीनपर सोते हैं, दूसरोंको स्वतःके ज्ञानका पता न चले इसलिए ये बड़ेही गंदी अवस्थामें रहते हैं । कभी कभी जंगलोंमें जाकर गुफाओंमें रहते हैं । उत्तरायुष्यमें दुनिया अपनी भूलको स्वीकार करती है और इन्हें ज्ञानी समझने लगती है । ज्ञानी होकर भी पागलोंकासा व्यवहार करते हैं । इस प्रकार इनकी दैनंदिनी क्रिया विचित्रही रहती है । धनु और मीन लग्नमें शनि रहा तो इनकी वृत्ति बालकोचित होती है । हमेशा आस्थिर अर्थात इधर उधर घुम रहते हैं ।

लग्नमें राहू रहा तो—जिन लोगोंके लग्न स्थानमें राहू, कर्क अथवा वृश्चिक राशिमे है वे लोग सिद्धि सामर्थ्य प्राप्त कर अपनी शक्ति लोगोंके समक्ष बतलाते रहते हैं और इस प्रकार वे स्वतःकी प्रसिद्धि किया करते हैं। सिद्धि प्राप्त करनेका इनका उद्देश केवल ख्याति प्राप्त करनाही होता है। यही राहू, धन और मीन राशिमें हो तो पिशाच्य-वृत्ति उत्पन्न करता है।

शनि और राहू ये दोनों ग्रह पूर्ण वैराग्य उत्पन्न करते हैं। माया और मोहको नष्ट करते हैं। इस प्रकारके साधु महात्माओंसे राष्ट्र तथा समाजको कुछ भी लाभ नहीं होता। केवल एक शिष्य बनाकर ये लोग अपने उद्धारार्थ चल बसते हैं।

लग्नमें नेपच्यून रहा तो—इस योगके लोग ज्ञानी होते हैं। तथा भक्ति-उपासनाका प्रचार करते हैं। कभी २ दुसरोंके स्वप्नमें जाकर दृष्टांत देते हैं। विश्वबंधुत्वका भाव, प्रेमी और देवतादर्शन रूप होते हैं। अंतर्ज्ञान प्रदान करनेवाले तथा दूसरोंके मनोविकारोंको शीघ्र समझनेवाले होते हैं।

हर्शेल ग्रह लग्न स्थानमें रहा तो क्या फल मिलता है इस विषयमें मेरा निजी कुछ भी अनुभव नहीं है अतएव इस ग्रहका फलादेश बतलानेमें मैं असमर्थ हूँ।

जब शनि, राहू, मंगल, रवि और नेपच्यून इन ग्रहोंका अधिक असर होता है और शेष ग्रह निष्फल होते हैं तब मनुष्य महात्मा बनकर संसारसे विरक्त होकर चारों ओर भ्रमण किया करता है। संसारिक कामनाओंपर विजय पाकर शरीरवासनारहित हो जाते हैं। इन्हें आत्म साक्षात्कार होता है और ये स्वयं पूर्ण परब्रह्म हो जाते हैं। जिनका लग्न

कर्क और वृश्चिक है, वे योगाभ्यासी होते हैं और जिनका लग्न धनु और मीन है उन्होंने पूर्व जन्ममें योगाभ्यासके द्वारा ज्ञानसंपादन किया हुआ होता है। फिर भी इस जन्ममें उन्हें ज्ञान प्राप्तिके लिए गुरुकी आवश्यकता होती ही है।

लग्नमें रवि मंगल हो तो शरीरकी तन्दुरुस्ती सूचित करता है। किन्तु शनि और राहू लग्नमें हो तो पूर्व जन्मके शेष कष्ट इस जन्ममें बुढापेकी अवस्थामें भोगने पड़ते हैं। इनका वृद्धापकाल कष्टमयी होता है

कुछ मनुष्य अपने पूर्व जन्मके पुण्यकर्मोंके फलानुसार इस जन्ममें भी श्रेष्ठ साधु महात्माके नामसे ख्याति प्राप्त करते हैं। इस ख्यातिको "अनेकजन्म संसिद्धः" कहा जा सकता है। दूसरे इस प्रकारके साधु महात्मा भी होते हैं जोकि इसी जन्ममें अपने प्रयत्नोंके बलपर प्रख्याति हो जाते हैं। किन्तु इनके विषयमें संपूर्णतः ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता कि इनका स्वभाव अन्ततक एकसा पवित्रही रहता है। इनकी प्रवृति संसारमें किस समय आसक्त हो जायगी इसका यह नहीं कहा जा सकता। पहले प्रकारके सन्त पूर्वपुण्योंके प्रबलताके कारण कभी भी पथभ्रष्ट होकर संसारमें नहीं फँसते। पहले प्रकारके सन्तोंमें गोस्वामी तुलसीदासजी, कबीरदास, स्वामी रामदास, ज्ञानेश्वर, नामदेव, तुकाराम, एकनाथ, श्रीमत् ब्रह्मचैतन्य गोंदावलेकर महाराज, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद तथा काशीके स्वामी त्रैलंग आदि हैं।

इस प्रकार शनि और राहूका ज्ञान और भक्तिपर अमल होता है और रवि मंगलका शरीरपर असर पड़ता है। जो पूर्व जन्मार्जित पुण्योंके बलपर साधु होते हैं उनकी कुंडलीमें धन स्थान अर्थात् द्वितीय स्थान, पंचमस्थान, दशम और व्यय अर्थात् बारहवें स्थानमें पाप ग्रह रहते हैं।

जिनका कर्क अथवा वृश्चिक लग्न रहता है वे लोग कुछ पूर्व जन्मोंके और कुछ इस जन्मके सुकर्मोंके बलपर महात्मा बन जाते हैं। परंतु धनु और मीन लग्नवाले अपने पर्वकृत सुकर्मोंके बलपर महात्मा बनकर पूर्णत्वको प्राप्त करते हैं। गोस्वामी तुलसीदासजी तथा भगवान रामकृष्ण परहंस, स्वामी रामतीर्थ भक्तियोगी तथा ज्ञानयोगी थे। इनका लग्न मीन था। स्वामी विवेकानंद, ब्रह्मचैतन्य महाराज गोंदावलेकर धनु लग्नके ज्ञानी थे। इस प्रकार लग्न स्थानका विवेचन पूर्ण हुआ। लग्नमें धनु और मीन राशिमे रवि मंगल शनि राहू रहा तो सहस्रार और आज्ञाचक्र प्रबल रहते हैं। शेष राशिमें नहीं।

नियम स्थान (धन स्थान)

जिसप्रकार संसारी लोगोंके विषयमें इस स्थानसे संपत्ति, कुटुम्बकी व्यवस्थाका बोध होता है; इसी प्रकार साधुमहात्माओंका परिवार तथा सम्पत्तिका ज्ञान भी इसी स्थानसे हो सकता है।

कर्क और वृश्चिक लग्नवालोंकी कुंडलीमें धन स्थानमें सिंह या धनु राशि आवेगी। अगर इन दो राशियोंमें इस स्थानमें रवि हो तो पूर्वायुष्यमें तपश्चर्यासे कुछ षटसाधन सम्पत्ति प्राप्त करनेका योग होता है। उत्तरायुष्यमें ये लोग मठ बांधकर रहते हैं और उपार्जित धन अर्थात् षट्साधन सम्पत्ति खो देते हैं इस प्रकार ये लोग ज्ञानी होते हैं। यह धन ग्रहण करना अनुचित है, जानते हुए भी लोभवश धन ग्रहण कर लेते हैं। धनका उपभोग प्रारम्भ होतेही उनकी दैवी सम्पत्तिका नाश हो जाता है। सिद्ध वाणीके कारण लोग इनके पीछे २ घूमते रहते हैं। “ नारायण तेरा भला करेगा ? नारायण तुझको आनन्द करेगा !! इत्यादि आशिर्वाद देते हैं। आधिभौतिक तथा आधिदैविक

तापसे पीडित जनताके रोग हरण करते हैं। लड़के देते हैं, नौकरी दिल वाते हैं अथवा धन देते हैं। इस प्रकारका इनका व्यवहार कुछ समयतक जनतामें चलनेके पश्चात इनके पास भी धन संग्रह बढ़ने लगता है और कुछही दिनोंके बाद इनका राजसी ठाटबाट तथा खाना पीना जारी हो जाता है। यहाँ इनका राजयोग शुरु हो जाता है। जैसे२ इनके पास धनका संग्रह बढने लगता है वैसे २ इनका पूर्वार्जित दैवी धन संग्रह अर्थात् षट्साधन सम्पत्ति नष्ट होने लगती है। वाणी सिद्धि भी धीरे२ चल बसती है और शनैः शनैः अधःपतन होने लगता है। परंतु यही रवि, मेष और मकर राशिमें हो तो ये लोग अपनी षटसाधन सम्पत्ति का खूब जतन करते हैं। वाणी सिद्धिका खूब सोचकर और कंजूसीसे उपयोग करते हैं। यतयो भोग संग्रहात अर्थात् भोग करतेही यतियोंका नाश होता है इस सिद्धान्तको उपर्युक्त लोग भली प्रकार जानते हैं। और सांसारिक धनसे अलिप्त रहते हैं। इनकी आत्मा बड़ाही प्रबल और तेजस्वी होती है। धन स्थानमें मंगळ ग्रह हो तो ऊपर निर्दिष्ट किया हुआ फल मिलता है। इसी प्रकार मेष और मकर राशिके शनि राहू इस स्थानमें रहे तो वे साधु पुरुष बड़ीही सावधानीसे व्यवहार करते हैं। पूर्व-कर्मानुसार विपुल धन प्राप्त होनेपर भी गुरुके बतलाये हुए भक्ति मार्ग परही नित्य चला करते हैं। त्यागी वृत्तिसे रहकर अपनी दैवी सम्पत्ति की रक्षा करते हैं। कभी २ इन लोगोंमें प्रापंचिक भी मिलते हैं जिन्हें बालबच्चे आदि सभी सांसारिक चीजें प्राप्त रहती हैं, किन्तु इनका मूल ध्येय कदापि छूट नहीं पाता। अपनी सिद्धिवाणीका भूलकर भी उपयोग नहीं करते केवल भक्तिमार्गका उपदेश करते रहते हैं। कर्क और वृश्चिक लग्नके महात्माओंकी कुंडलीमें धन स्थानसे रवि, मंगळ, शनि और राहू रहा तो वे नियमोंका पालन नहीं करते। धनु और मीन लग्नवाले महा-

त्माओंकी कुंडलीमें धन स्थानमें अर्थात् मकर और मेषके रवि, मंगल, शनि और राहू हो तो बहुत ऊपर तक बढ़ जानेके कारण नियमोंका पालन करने की आवश्यकता नहीं समझते और इस प्रकार समझते हुए भी वे नियमोंका परिपालन नहीं करते।

धन स्थानसे विशुद्ध चक्रका योग भी देखा जाता है। धनु और मीन लग्नवालोंके धनस्थानमें रवि मंगल होनेसे विशुद्ध चक्र बड़ा प्रबल रहता है अतएव इनकी वाणी बहुतही मोहक होती है। शनि अथवा राहू रहा तो विशुद्ध चक्र थोड़ासा नरम गरम रहता है।

आसन मुद्रा स्थान (तृतीय स्थान)

इस स्थानमें आसन और मुद्राका ज्ञान होता है। कन्या अथवा मकर राशिका रवि या मंगल इस स्थानमें हो तो आसन और मुद्रा सहज प्राप्य हैं। परंतु शनि अथवा राहूके रहते हुए थोड़ा परिश्रम और विलम्बसे साध्य होनेका योग है। इन्हें किंचित अहंकार होता है। आयुके ४० सालतक तीर्थोंमें भ्रमण करते रहते हैं। ४० वर्षके बाद एक स्थानपर स्थिर होकर रहते हैं। दूसरे साधु महात्माओंसे अधिक मिलना जुलना इन्हें पसन्द नहीं आता। दूसरोंसे अधिक बातचित करना भी इन्हें नहीं सुहाता। जन समुदाय पीछे पड़ा रहता है किन्तु इस प्रकारके महात्मा किसीपर उपकार करना नहीं जानते। स्वतःका उद्धार करनेके बाद इस संसारसे चल बसते हैं। कुंभ अथवा वृषभ राशि इस स्थानमें होतो ये लोग पूर्व जन्मके योगाभ्यासी अर्थात Born योगाभ्यासी रहते हैं। इस जन्ममें आसन मुद्रा वगैरह करनेकी आवश्यकता नहीं होती। ये लोग स्वयंभू और पूर्ण होते हैं। दुसरोंपर बड़ाही गहरा प्रभाव पड़ता है। हमेशा दुसरोंको मदद पहुँचाते हैं। दान

देना, प्राप्त करते करते प्रवचन करना यह इनका मुख्य काम है। धनु लग्नवाले लोग स्थायी कार्य करते हैं। किन्तु दुसरे लग्नवाले साधुओंका कार्य केवल उनके जीवन भरही रहता है। उनके शरीर छोड़नेपर उनका समूचा कार्य भी नष्ट हो जाता है। प्रवास अधिक करते है।

प्राणायाम (चतुर्थ स्थान)

इस चतुर्थ स्थानसे प्राणायामका बोध होता है। तूल या कुंभ राशिका रवि, मंगल इस स्थानमें हो तो ये महात्माकी कठीन तपस्या और पंचाग्नि साधन करते हैं। इनको प्राणायाम साध्य करनेमें बड़ी तकलीफ होती है। कारण इनके प्राणायाममें कुंभक साधन करनेमें देरी लगती है। गुरु जितना बतलावेगा उतनाही ये लोग करते रहते हैं। वृद्धापकाल बड़ाही आनंदमय बीतता है। किन्तु इस स्थानमें शनि और राहू रहे तो प्राणायाम शीघ्र साध्य होता है। पूर्वायुष्यमें केवल कौपीन धारण किए हुए विचरते रहते हैं। किन्तु उत्तरायुष्यमें मठ स्थापन करके एकही स्थानपर रहा करते हैं। इनके बहुतसे शिष्य होते हैं। ऐश्वर्यभोग प्रारंभ होतेही द्रव्य मोह उत्पन्न हो जाता है। अतएव वृद्धावस्थामें वासनामें लिप्त हो जाते हैं और इसीलिए इनकी मृत्यु शांतिपूर्वक नहीं होती। मृत्युकालका ज्ञान भी इनके पास नहीं रह पाता। इस प्रकार ये अज्ञानावस्थाको प्राप्त हो जाते हैं।

इसी स्थानमें अगर मीन अथवा मिथुन राशिका रवि मंगल हो तो प्रखर ज्ञानी और तेजस्वी रहते हैं। मठ न बांधना, स्थिर न रहना, वैराग्यपूर्ण विचरते रहना, मोहके वश न होना तथा अनासक्त रहना इत्यादी इनके स्वभावके प्रमुख अंग होते हैं। इनका वृद्धापकाल शान्तिमय व्यतीत होता है। इन्हें अपने मृत्युकालका ज्ञान होता है। जब इनका

मृत्युकाल समीप आ पहुँचता है तब ये दूसरोंको सूचित कर देनेके पश्चात बड़ीही शान्तिके साथ जिवन्त समाधि ले लेते हैं। इस स्थानमें शनि रवि मंगल रहा तो अनाहत चक्र प्रबल रहता है। शेष ग्रहोंसे निर्बल रहता है।

प्रत्याहार और शिष्यस्थान (पंचयसान)

इस स्थानमें प्रत्याहार और शिष्य बनानेके योगका बोध होता है। इस स्थानमें रवि, मंगल, शनि अथवा राहू इनमेंसे कोई भी एक ग्रह हो तो पूर्व जन्मसेही प्रत्याहार पूर्ण होकर आता है। कारण वे लोग मूलतः माया मोह रहीत होते हैं सांसारिक व्यक्तिको कुंडलीमें पंचम स्थानमें ये ग्रह रहे तो स्वभाव बड़ाही दुष्ट और निष्प्रेम होता है। किन्तु साधु महात्माओंके विषयमें इसका मतलब इस नाशवन्त जगतपर प्रेम न करना तथा स्वतःके शरीरपर भी प्रेम न करना होता है और इसीसे ये लोग माया मोह रहित होते हैं। इनका एकाध शिष्य होता है। कर्क वृश्चिक लग्नवाले महात्मा अपने शिष्योंसे भी प्रेम नहीं करते। परंतु धनु और मीन लग्नवाले साधु अपने शिष्योंपर बहुतही प्रेम करते हैं। उपर्युक्त महात्मा अपने शिष्योंसे पुत्रवत् प्रेम करते हैं। पंचम स्थानमें गुरुका निवास अधिक शिष्योंका होना बतलाता है। ऐसे महात्मा मठ और पंथकी स्थापना करते हैं।

धारणा स्थान (षष्ठ स्थान)

इस स्थानसे धारणाका योग देखा जाता है। मेष अथवा धनु राशिका रवि अथवा मंगलका इस स्थानमें होना उत्तम धारणा और स्थिर चित्तका होना यह लक्षण बतलाते हैं। शनि अथवा राहूके होनेका मतलब यह है कि धारणा थोड़े समयके बाद नष्ट हो जायगी।

मंगल यह ग्रह अभ्यासका कारक होनेसे राहूके युतिमें रहा तो अभ्यास गलत होता है। "अयुक्ताभ्यास योगेन सर्व रोग समुद्भवः॥"

शनि रवि अलग रहे तो योगाभ्यास पूर्ण होता है। अगर इन दो ग्रहोंसे चन्द्रकी युति हो तो पूर्वायुष्यमें तनिक शारीरिक बीमारी भोगनी पड़ती है। युवावस्थामें ये लोग कुछ नहीं कर सकते। वृद्धावस्थामें बवासीर, खांशी, दमा आदि रोगोंसे पीडीत रहते हैं। कहीं २ तो दुष्ट रोगकी बीमारी भी देखनेमें आयी है। वृषभ राशिका शनि योगअभ्यास पूर्ण होने नहीं देता। मंगल, रवि और राहू यह ग्रह योगअभ्यास पूर्ण करने देते हैं। सिंह राशि इस स्थानमें हो तो कोई भी ग्रह योगअभ्यास करने देता है। परंतु राहूका एक विचित्र फल यहाँपर मिलता है वह यह कि बहुतसे प्रकारके विचित्र स्वप्न हमेशा पड़ते रहते हैं। इस स्थानमें पापग्रह रहनेसे मणिपूर (Solar plexus) चक्र बड़ा प्रबल रहता है। शुभ ग्रहोंसे नहीं।

ध्यान स्थान (सप्तम स्थान)

धारणाके बहुत कालतक रहनेको ध्यान कहते हैं। ध्यान दो प्रकारके होते हैं। पहला निर्गुण परब्रम्हका और दूसरा कुछ सगुण देवताओंका ध्यान। शनि और रवि ये ग्रह निर्गुण उपासनाका ध्यान बतलाते हैं और मंगल सगुण मूर्तिका ध्यान बतलाता है। राहू पहले निर्गुण उपासनाका ध्यान करते २ सगुण मूर्तिकी भक्ति करनेमें रूपान्तर होना, बतलाता है। इसलिए मकर और वृषभ राशिमें मंगल तथा राहू रहा तो सगुण मूर्तिका ध्यान बहुत अच्छा होता है। शनि रवि रहे तो यह सगूण ध्यान पूर्ण नहीं हो पाता। मिथुन और कन्या राशिमें शनि राहूका होना निर्गुण ध्यानका बहुत अच्छा होना बतलाते

हैं। रवि मंगल रहे तो सगुण मूर्तिका ध्यान अच्छा नहीं होता। इस स्थानपर गुरु शुक्र चंद्र रहनेसे स्वाधिष्ठान चक्र ऐहिक दृष्टिसे प्रबल रहता है और पापग्रहोंसें परामार्थिक दृष्टीसे यह चक्र प्रबल होता है।

समाधि स्थान (अष्टमस्थान)

इस स्थानसे समाधि अवस्थाका विचार किया जाता है। समाधि दो प्रकारकी होती है। प्रथम प्रकारकी निर्विकल्प समाधि कहलाती है तथा दूसरी प्रकारकी समाधिको सविकल्प समाधि कहते हैं। रवि और मंगल सविकल्प समाधि बतलाते हैं। शनि और राहू निर्विकल्प समाधि बतलाते हैं। मिथून और कुंभ राशि इस स्थानमें हो तो सविकल्प समाधि और कर्क अथवा तुला राशिका होना निर्विकल्प समाधिका योग दर्शाता है। रवि अथवा मंगल ग्रह मिथुन अथवा कुंभ राशिमें रहनेसे सविकल्प समाधि अच्छी लगती है। परन्तु इन ग्रहोंका कर्क अथवा तुला राशिमें होना सविकल्प समाधि अच्छी न लगनेका योग सूचित करता है। किन्तु शनि और राहूके विषयमें केवल यह नियम है कि निर्विकल्प समाधि किसी भी राशिमें होते हुए भी भली प्रकार लगा सकते हैं। रवि मंगल, शनि और राहू यह चार ग्रह इस स्थानमें रहनेसे अपनी मृत्युका ज्ञान प्राप्त करा देते हैं। कई महात्मागण भूमिमें जिवन्त समाधि लेते हैं। कई अग्निकाष्ट भक्षण करके समाधि लेते हैं। और कई जल समाधि लिया करते हैं। जो योगाभ्यासी महात्मा होते हैं उनकी आयु मर्यादाका निर्णय ज्योतिष शास्त्र कदापि निश्चित नहीं कर सकता कारण योगाभ्यासी महात्माकी मृत्यु उनके स्वाधीन तथा स्वेच्छापर निर्भर करती है। इस स्थान पर शनि राहू रवि मंगल रहा तो मूलाधार बड़ा प्रबल रहता है। शुभ ग्रहोंसे कम ताकद्वान होता है। पापग्रहोंसे कुण्ड-

लिनी बड़ी तेज होती है। शुभ ग्रहोंसे उतनी तेजस्वी नहीं होती। इसी कारणसे कई महात्मा बड़े तेजस्वी और अधिक ज्ञानी तथा कई महात्मा कम तेजस्वी होते हैं।

सद्गुरु या ज्ञान स्थान (नवम स्थान)

योगाभ्यास पूर्ण होनेके बाद इस स्थानसे जो ज्ञान प्राप्त होता है अर्थात् जो ज्ञान आत्मज्ञानके नामसे जाना जाता है उस ज्ञानका और गुरुका बोध होता है। इस स्थानमें गुरु और राहू न हो तो शेष सब ग्रह निष्फल हो जाते हैं। भाग्येश जिस राशी स्थानमें हो उस राशिके दिशा से आध्यात्मिक गुरु मिलते हैं। गुरु मेष सिंह धनु पूर्वदिशा, वृषभ कन्या मकर दक्षिण और मिथुन तूलकुंभ पश्चिम, कर्क वृश्चिक और मीन राशि का उत्तर दिशाका गुरु कर्मवान् और ज्ञानवान मिला देता है। वे तत्वज्ञानी होते हैं। स्वतःको गुरुत्व प्राप्त करा देते हैं। बहुतसे शिष्य बनाते हैं। पंथकी स्थापना करके उसे आगे चलाना, ज्ञान और दान देना वगैरा काम करते हैं। अगर इस स्थानमें राहु रहा तो महाबीर की भक्तिकी आवश्यकता पड़ती है। सिंह राशिमें गुरु रहा तो ज्ञानी गुरु मिलता है। वह पूर्व दिशाका होना चाहिए। नीचे अलग २ सभी ग्रहोंकी भक्ति उपास्य देवता दिये जाते हैं—

रवि, चंद्र }—भगवान शंकरकी उपासना करना चाहिए।

मंगल, बुध }—पुरुष राशिका मंगल हो तो भगवान् गणेश और स्त्री राशि का मंगल हो तो देवी माताजी।

गुरु—दत्तात्रय.

शुक्र—पुरुष राशिमें शुक्र हो तो श्रीकृष्ण और विष्णु भगवान। स्त्री राशिमें शुक्र होनेसे काली, चण्डी, चामुण्डा तथा दुर्गा वगैरा की उपासना करनी चाहिए।

शनि—राम उपासना
राहू—मारुती की उपासना } निर्गुण ब्रह्मकी उपासना

शनि मंगल युति, मंगलके पीछे शनि अथवा शनि मंगल प्रतियोग—श्रीराम और मारुती की उपासना करना चाहिए।

शनि राहू—मारुती की उपासना।

पूर्व जन्ममें श्री भगवान् शंकरजीकी भक्ति किया हो तो इस जन्ममें भगवान् श्रीराम की भक्ति करना होगा। यदि पूर्व जन्ममें भगवान श्रीराम की भक्ति की गयी हो तो इस जन्ममें श्री शङ्करजीकी भक्ति करनी पड़ती है। पूर्व जन्ममें यदि भगवान विष्णुकी भक्ति की गयी हो तो इस जन्ममें गुरु दत्तात्रय की भक्ति करनी होगी।

कर्म स्थान (दशम स्थान)

ज्ञानवान होनेके बाद महात्मा लोग कौनसा क्रियाकर्म करते हैं यह इस स्थानसे जाना जाता है। इस स्थानमें शनि, राहू और गुरु इन तीन ग्रहोंका केवल फल मिलता है। कन्या अथवा मेषका शनि दूसरोंको ज्ञान देना और शिष्य सम्प्रदाय बढ़ाकर अपने मतका प्रचार करना इत्यादि काम करता है मठादि की स्थापना नहीं करते। इनका दूसरोंपर खूब प्रभाव पड़ता है। ये लोग पूर्ण विरागी माया—मोह रहित निर्गुण उपासक होते हैं। सिंहका शनि जिन महात्माओंकी कुंडलीमें दशम स्थानमें है वे महात्मा ज्ञान प्राप्त होनेपर किसी प्रकारका भी कार्य

न करते हुए केवल बैठे २ रहकर आरामसे जीवन व्यतीत करते हैं। इनमें जनताको चमत्कार बतलानेकी आदत दृढ़ हो जाती है। धनु राशिका शनि महात्माओंको भक्ति मार्गमें लीन कर विदेही स्थितीमें ले आता है। इनके कभी २ एक अथवा दो शिष्य होते हैं। चारों राशियोंमें राहू रहा तो फल एकसाही मिलता है। स्वतः ज्ञानी बननेके पश्चात जनताकी सेवा करना, इसेही अपना धर्म समझना, मोह वश न होना इत्यादि इनके प्रमुख लक्षण हैं। इस चारों राशियोंमें गुरु होनेसे महात्मा लोग "नारायण तेरा भला करेगा" इत्यादि आशिर्वाद देकर लोगोंसे बहुतसा धन एकत्रित करके मजेसे खाते बैठते हैं। इनके हाथों कोई भी स्थायी कर्म नहीं हो पाता। इनका कोई भी शिष्य नहीं होता अतएव समाधि लेनेके बाद मठकी गद्दीके हकदारोंमें झगड़े खड़े होते हैं।

राजयोग स्थान (लाभ स्थान)

इस स्थानमें राजयोगका ज्ञान होता है। राजयोग दो प्रकारके होते हैं। सद्यपरिस्थितिसे अच्छी परिस्थितिमें पहुँचना यह पहला प्रकार है; दूसरा प्रकार "क्षये संकल्प जालस्य जीवो ब्रह्मत्व माप्नुयात" के अनुसार मनको धीरेधीरे मायावी संसारसे पृथक करके वैराग्य उत्पन्न होनेके पश्चात् सभी प्रकारकी कल्पनाका लोप हो जाता है। इस स्थान पर वृषभ, कन्या, तूल और मकरका शनि हो तो पूर्वायुष्यमें दूसरे प्रकारका राजयोग देता है और उत्तरायुष्यमें प्रथम प्रकारका राजयोग देता है। किन्तु इन सारी अवस्थाओंमें भी मन पूर्ण वैराग्ययुक्त रहता है। राहू और गुरु इन चारों राशियोंमें रहनेसे महात्मा लोग उक्त परिस्थितिमें आ जानेका योग है।

भक्ति या विदेही स्थान (व्यय स्थान)

भक्तियोगका ज्ञान इस स्थानसे होता है। इस स्थानमें चारोंमेंसे किसी भी राशिमें शनि रहा तो प्रथम ज्ञान और बादमें भक्तिका पट खुल जाता है। राहू और मंगलकी जोड़ी रही तो सामर्थ्य वैभव और भक्तिके योग रहते हैं। इस स्थानमें गुरुका फल नहीं मिलता। इस स्थानमें पाप-ग्रह होना आवश्यक है। कारण, पापग्रह होनेसे मोक्ष मिलता है। शुभ ग्रह मोक्ष नहीं देते। इस स्थानका स्वामी भगवान महावीरजी है।

आजतक आर्यावर्तमें बहुतसे भक्तियोगी महात्मा हो गये हैं। उनमेंसे भगवान् हनुमानजी सर्व श्रेष्ठ भक्तियोगी रहे हैं। इसीलिए इनका नाम सदाके लिए अमर हो गया है और देवत्वको प्राप्त हो गये हैं। यहाँ यह शंका होती है कि हनुमानजीके गुरु कौन थे? अध्यात्म रामायण, वाल्मिकी रामायण तथा तुलसीकृत रामायणमें इस विषयकी ओर बिलकूल ध्यान नहीं दिया गया है। विज्ञ पाठकोंसे नम्र निवेदन है कि वे मेरी शंकाका निवारण करनेमें मुझे सहायता करें।

परिच्छेद सोलहवाँ

ग्रहयोग फल

महात्माओंके कुंडलीमें निम्नलिखित ग्रह मिलते हैं—

प्रथम योग—शनि और चन्द्र युति दशम स्थानमें बहुतही अच्छा फल देती हैं। इस युतिका सप्तम स्थानमें थोड़ा कम फल मिलता है। सप्तमसे कम लग्नमें और लग्नसे कम फल चतुर्थ स्थानमें मिलता है। यह युति पूर्ण वैराग्य सूचित करती है। माया मोहका पूर्ण नाश होता है। वह मनुष्य निश्चयी, निग्रही और एकाग्र चित्तवाला होता है। प्राप्त परिस्थितिमें समाधान माननेवाला दयालु तथा प्रेमी स्वभाव बनता है। माताकी मृत्यु बचपनमेंही हो जाती है। इस प्रकारकी मृत्यु न हुयी तो पिताके पश्चात माताकी मृत्यु होती है। माताकी अनुपस्थितिमें भाग्योदय होता है।

द्वितीय योग—रवि शनि युति चारों केन्द्र त्रिकोण अथवा धन स्थानमें हो तो परिणाम दीर्घायुष्य तथा आत्मा प्रबल बनती है। इस युतिका अधिक अधिकार शरीरपर होता है। स्वभाव निर्भय और तेजस्वी बनता है। यह युति ब्रह्मचारी व्रतका पालन करवाती है। शीतोष्णमें तथा मानापमानसे न घबरानेवाला स्वभाव बनता है। इस योगमें गुरु द्वारा आत्मसाक्षात्कार होकर ज्ञानयोग प्राप्त होता है। पिताकी मृत्यु बाल्यावस्थामेंही हो जाती है या पितृपश्चात् भाग्योदय होता है।

तृतीय योग—तीसरा योग अर्थात् शुक्र शनि युतिका है। इस योग में स्वजातीय युवतीसे विवाह होकर उस स्त्रीसे होनेवाली संतानसे दारिद्र्यका संचार होता है। कामकाजमें शिथिलता आकर दीवाला निकलता है। आधिदैविक और आधिभौतिक बहुतसे कष्ट उठानेसे संसारमें वैराग्य निर्माण होता है। स्त्री पुरुष दोनोंमेंसे कमसे कम एक व्यभिचारी होता है। इस योगके लोग हरदम साधु महात्मा होनेके लायक होते हैं।

उपर दिये हुये तीन योगों बिना दुसरे कोई भी ग्रहयोगमें वैराग्य निर्माण करनेका गुण धर्म नहीं है।

चतुर्थ योग–उपर दिये हुये तीन योगोंको छोड़कर एक और योग होता है वह गुरु शुक्र युतिका। इस युतीका फल ऐसा होता है कि मनुष्य अलौकिक बुद्धिमान, अध्यात्म ज्ञानी तथा वेदान्त ज्ञानी, वाद विवाद पटू, दयालू और प्रेमी होते हैं। यह ग्रहयोग बहुतसे महात्माओंके कुण्डलीमें विपुलतासे पाये जाते हैं।

परिच्छेद सतरहवाँ

पूर्व जन्म कर्म संशोधन

पूर्व जन्मके अंतमें याने मृत्यूके समय जो वासनायें या इच्छायें अतृप्त रहती हैं वह वासनायें-अथवा इच्छायें पूर्ण करनेके लिये फिरसे जीवमात्रको जन्म लेना पड़ता है। इसलिये अंतीम वासनाओंका और इच्छाओंका सूक्ष्म विचार करना याने इच्छायें तथा वासनायें कौनसी थीं और किस लिये थीं इसका विचार करना जरूरी है। सबसे प्रथम यह ध्यान रखने योग्य बात है कि मनुष्य प्राणी जो भी कर्म भोगता है वे कर्म आठ प्रकारके रहते हैं। इन आठ कर्मोंको अलग अलग ग्रहोंमें निम्न प्रकारसे विभाजित किया गया है।

कर्म प्रकार १ लाः—इसे पूर्व जन्म कर्म कहते हैं। यह कर्म जीवात्माको भोगना पड़ता है। इस कर्मपर शनिका प्रभाव रहता है।

कर्म प्रकार २ राः—इसे घराणेका कर्म कहते हैं। अंग्रजीमें इसको Hereditary Estate कहते हैं। हिंदू तत्वज्ञानके मुताबिक यह शरीर पड़दादा, दादा, पिता, पड़दादी और माता इन सबके रक्तसे बना हुवा होनेसे उन सबके कर्मोंका असर अपने शरीरपर होता है। महाभारतमें शांति पर्वमें धर्मराज भीष्म पितामहको अपनी एक शंका पूछते हैं कि हे पितामह एक आदमी बहुत पापकर्म करता है तो भी उस पापकर्मका फल उस आदमीको नहीं भोगना पड़ता ऐसा क्यों?" इस शंकाका निवारण करते हुये भीष्म पितामहने उत्तर दिया कि "हे

धर्मराज, " पापंकर्म कृतं किंचित यदि तस्मिन्न दृश्यते । नृपतेतस्य पुत्रेषु पौत्रेष्वापिच नप्तृषु ॥" याने जो आदमी पापकर्म करके भी उस पापकर्मके अनिष्ट फल भोगनेका भागी नहीं होता यह बात यद्यपि सत्य है तो भी वे खराब फल नष्ट नहीं होते और उन खराब फलोंका उसके पुत्र पौत्रादिकोंको भोगना पडता है। इस कर्मको अनुवंशिक कर्म भी कहते हैं। इस कर्म पर राहूका प्रभाव रहता है। जब कुंडलीमें राहू अनिष्ट रहता है तब घराणेमें कोई ना कोई जीव खराब काम किया हुआ रहता है। इसको Family Trait भी कह सकते हैं।

उदाहरणार्थः—महारोग, श्वेत कुष्ठ, आधा सिर दुखना वगैरे जो रोग होते हैं वह सब रोग वंश परंपरासे चले आते हैं और उनको अनुवंशिक रोग कहते हैं।

कर्म प्रकार ३ राः—इसमें उन कर्मोंका समावेश होता है जो कि पिताने किये फल लड़केको भोगना पड़ता है। इस प्रकारके कर्मोंपर रवि ग्रहका प्रभाव रहता है।

कर्म प्रकार ४ थाः—इसमें उन कर्मोंका समावेश होता है जो कि माताने किये फल लड़केको भोगना पड़ता है। इन सब कर्मोंपर चंद्रका प्रभाव होता है।

कर्म प्रकार ५ वाः—इस जन्मके पत्निके संबंधमें जो जो अच्छे या बुरे कर्म पूर्व जन्ममें अपने हाथसे हुये उन सब कर्मोंका समावेश इस प्रकारमें होता है। इन कर्मोंपर शुक्र ग्रहका प्रभाव रहता है।

कर्म प्रकार ६ वाः—इसमें अपने संततिके और अपने खुदके परस्पर हुये और होनेवाले संबंध तथा कर्मोंका समावेश किया जाता है। इन कर्मोंपर गुरु ग्रहका प्रभाव रहता है।

कर्म प्रकार ७ वा:—इसमें अपने इष्टमित्रोंके कर्मोंका समावेश किया गया है। इन संगति कर्मोंपर बुधका प्रभाव रहता है। अगर बुध अच्छा रहा तो साधु महात्माओंकी संगती होती है और उद्धार होता है। परंतु बुध खराब रहा तो नीच लोगोंकी संगती लगकर आदमी गिर जाता है और इस दुनियाके इनसानीसे उठ जाता है।

कर्म प्रकार ८ वा:—इसको भूमि कर्म कहते हैं याने जिस जिस भूमिसे अपना संबंध आता है उस उस भूमिपर हुये और होनेवाले कर्मोंका अंतर्भूत इसमें करते हैं। इन कर्मोंपर मंगल ग्रहका प्रभाव रहता है। अगर कुंडलीमें मंगल शनिसे शुभ योग करता है तो जिस मकानमें रहते हैं या जिस खेतीको बोते हैं उससे भाग्य उदय होता है। परंतु अशुभ योग रहने पर भाग्य नष्ट हो जाता है। उपर दिये हुए कर्मोंको आठ प्रकारमें विभाजन करके हरएक कर्मपर किस किस ग्रहका प्रभाव है यह बताया गया। यहाँ यह ध्यान रखने योग्य बात है की मनुष्यको इस जीवनमें इन सब कर्मोंको भोगना पड़ता है और वह भोगनेके दो मार्ग हैं। पहिला मार्ग शरीर द्वारा और दुसरा मार्ग जिवात्मा द्वारा।

पूर्व जन्मके कर्मका संशोधन करनेके पहिले यह बता देना अच्छा होगा कि जो मनुष्य पूर्व जन्मसे सच्चा साधु बनने आता है उसके कुंडलीमें शनि यह ग्रह वृषभ, कन्या या मकर इन राशियोंमेंसे कोई भी एकमें होना चाहिये। इन तीन राशियोंको उत्पात राशि कह सकते हैं। इन राशियोंकी हमेशा Destructive policy रहती है। इन राशियोंमेंसे कोई भी एक राशिमें शनि रहा तो पूर्व जन्मसेही संसार अच्छा नहीं होता। विवाह नहीं, अगर विवाह होगया तो संतती नहीं होती। विवाह होकर संतती भी होगई तो दारिद्र्य योग रहता है। शिवाय वैराग्य

उत्पन्न करना यह प्रधान धर्म होता है। परंतु कर्क, वृश्चिक अथवा मीन इन तीनों राशियोंमें कोई एकमें शनि रहा तो प्रपंच और परमार्थ दोनों भी साध्य होते हैं। ये लोक पूर्व जन्मसेही साधु बनके आते हैं। मेष, सिंह, धनु, मिथुन, तूल और कुंभ इन राशियोंमें शनि रहा तो पूर्व जन्मसे महात्मा बनकर नहीं आते किंतु इस जन्ममें महात्मा बननेका ये लोग प्रयत्न करते हैं। यह नियम कभी कभी अपवादके रुपमें देखनेमें आते हैं।

अब हम पूर्व जन्मके कर्मका संशोधन किस प्रकार करना चाहिये यह बताते हैं। इस संशोधनका नियम ऐसा है कि कुंडलीमें जिस स्थानमें जिस राशिमें शनि हो उस राशिको लग्नमें लिखकर कुंडलीको रखना चाहिये। उदाहरणार्थ नीचे हम कुंडली लिखकर उससे किस प्रकार फल बता सकते हैं यह दर्शाते हैं। जन्म शके १८१३ माघ शु॥ ७ सह अष्टमी, सूर्योदयात् इष्ट घटी ५६ ता० ६–२–१८९२ को ४ बजके २० मि. सबेरे बेलगांव (अक्षांश १५°–५२ रेखांश ७४°–५०) में हुवा, पलभा ३–२६ लग्न धनु अंश २५।

चालू जन्म कुण्डली

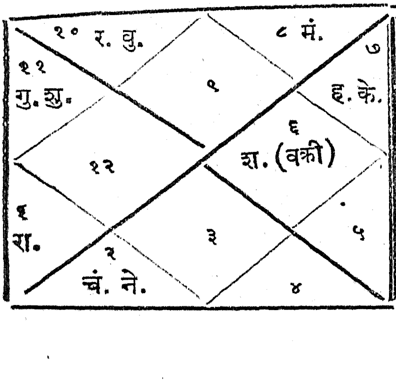

पूर्व जन्म कुण्डली

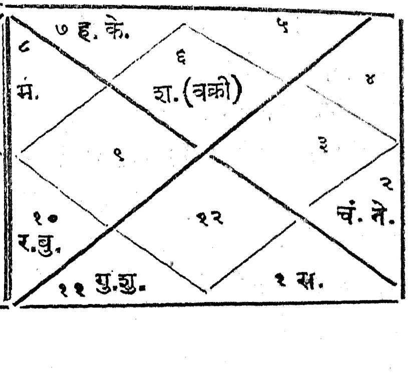

लग्नमें कन्या राशि होकर शनि वक्री है। यह शनि पंचमेश और षष्ठेश होता है। कन्या लग्नके लोग व्यापारी होते हैं। बड़े आफीसोमें कारकून या पोस्ट ऑफिसमें बडे कारकून रहते हैं। इन लोगोंका वर्णन इस प्रकार कर सकते हैं। " सुखं सुविद्या रति मंत्र सिद्धिः॥ शास्त्राणि जानाति सुकर्मकारी। रागांङ्युक्त खलूविष्णु भक्तः॥ याने ये लोग शास्त्र जाननेवाले, अच्छा कर्म करनेवाले, मंत्रसे सिद्धि प्राप्त करने वाले और विष्णुके भक्त होते हैं। शनि षष्ठेश होनेसे षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्ने वा पशुमान भवेत। धनवान गुणवान मानी साहसी पुत्र वर्जितः॥ याने यह आदमी पशुमान, धनवान, गुणवान, मानी, साहसी और पुत्र रहित होता है। इस कन्या लग्नवाले लोग अधिकारी स्वभाववाले, बहुत कामी और किसी पर भी विश्वास न रखने वाले ऐसे होते हैं। लग्नस्थानमें शनि होनेसे पिताका मृत्यु बाल्यावस्थामें होनेका योग बताता हैं। पिताके देहान्तके समय उमर २ वर्षकी थी। मैं जातसे ऋग्वेदी देशस्थ ब्राम्हण था करके बाल्यावस्था एक ब्राम्हण के घरपर बिताना पड़ा। लग्न स्थानका शनि युवावस्था तक बहुत कष्ट देता है।

२ धनस्थानः—इस स्थानमें तुला राशि उदित है। इस राशिका स्वामी शुक्र षष्ठ स्थानमें है। बापदादाओंकी संपूर्ण इस्टेट चचा तथा अन्य लोगोंने उड़ाकर खत्म करदी। इसके बाद मेरे देहान्त होने तक मैंने पैसा संग्रह नहीं किया तात्पर्य यह हुआ कि मैं इस जन्ममें दारिद्री पैदा हुआ।

३ तृतीय स्थानः—इस स्थानमें वृश्चिक राशि उदित है। इस राशिका स्वामी मंगल अपने स्वस्थानमें है। इसका परिणाम यह

हुआ कि तीन भाईयोंमेंसे बड़े भाईका देहान्त हो गया । मेरा मेरे बड़े भाईसे कभी अच्छा संबंध नहीं रहा । इस जन्ममें भी हम तीन भाई थे । मंझला भाई ब्रम्हचारी रहकर उनकी मृत्यु हो गयी। बड़ा भाई याने नंबर १ इनसे मेरा उनके मृत्यु तक कभी ठीक नहीं रहा ।

४ **चतुर्थस्थान:**—इस स्थानमें धनु राशि है । इस राशिका स्वामी गुरु ये षष्ठ स्थानमें पडा है । इस योगसे मातृसौख्य लाभको जल्दी ही वंचित होना पडा । माताका देहान्त मेरी उमरके २० वे साल में हो गयी । माताके मृत्युके बाद मुझे नाथपंथी गुसाई बनकर बनमें जाकर एक नदी किनारे रहना पड़ा ।

५ **पंचम स्थानः**—इस स्थानमें मकर राशि है और इस राशिका स्वामी शनि लग्नमें वक्री है । फल यह हुआ की मेरा शिक्षण अधूरा रह गया । जिस ब्राह्मणके घरमें मैं रहता था उसीके यहां ज्योतिष शास्त्रका थोड़ा बहुत अभ्यास किया । लग्न कन्या है । इस लग्नका गुणधर्म ज्योतिषी बननेका है । इसके अलावा इसी स्थानपर रवि तथा बुध भी हैं । इस स्थानमें बुध, षष्ठ स्थानमें शुक्र, भाग्य स्थानमें चंद्र नेपच्यून इस प्रकार ग्रहयोग होनेसे ज्योतिषका अभ्यास हुआ । विवाह न होनेसे संतती होनेका सवाल नहीं उठता । इसके बाद गुसाई बन गये किंतु कोई शिष्य नहीं बनाया ।

६ **षष्ठ स्थानः**—इस स्थानमें कुंभ राशि उदित है । इस राशिका स्वामी शनि लग्नमें है । इस स्थानमें शुक्र और गुरु ये दोनों ग्रह संपूर्ण युतिमें हैं । इस योगसे वैवाहिक जीवन नष्ट हो गया और स्त्रीको बीमार बना दिया । इस स्थानका शुक्र जादा स्त्री लंपटी होना बताता है ।

७ **सप्तमस्थानः**—यहां मीन राशी उदित है और राशिका

स्वामी गुरु षष्ठ स्थानमें है। इस गुरूके साथ शुक्र होनेसे विवाह नहीं हुवा। " जायेशे चाष्टमें षष्ठे सरोषा कामिनी भवेत्। क्रोध युक्तो भवेत् वापि न सुखं लभते क्वचित्। इस योगका परिणाम आगे सिलसिलेवार दिखाया है।

८ **मृत्युस्थान**:—इस स्थानमें मेष राशि है। इस राशिका स्वामी मंगल तृतिय स्थानमें है और इस अष्टम स्थानमें मेष इस अग्नि राशिमें राहू है। यह सब योग यह बताते हैं कि मेरा मृत्यु अपघातसे उमरके ३६ वे वर्षमें हो गया और मेरी कुछ वासनायें अपुरी रह गई।

९ **भाग्यस्थान**:—इस स्थानमें वृषभ राशि है और इस राशिका स्वामी शुक्र षष्ठ स्थानमें पडा है। इसका परिणाम " भाग्येशो मारकस्थेषुजातभाग्य निरर्थकं। भाग्येशे मातुलेरिःफे भाग्यहीनो भवेद् ध्रुवम॥ इस श्लोकमें कहे अनुसार पूर्ण मिला। मेरे हातसे न पूर्ण प्रपंच हुआ और न परमार्थ हुवा। याने मतलब यह हुआ की मैं भाग्यहीन हो गया। इस नवम स्थानपर चंद्र और नेपच्यून भी हैं। यह युति ज्योतिर्षीयोंका भविष्य वेत्ता बनाती है। ईश्वरकी भक्ति कराती है और साक्षात्कार भी होता है। थोड़ा थोड़ा योगाभ्यास भी शुरू था।

१० **कर्मस्थान**—इस स्थानमें मिथुन राशि है। मिथुन राशिका स्वामी बुध पंचम स्थानमें है। इस योगके कारण अध्ययन और अध्यापनका कार्य हुआ। ज्योतिष शास्त्रका अध्ययन चल रहा था परंतु इसी वक्त मेरे गुरूकी मृत्यु होनेसे मुझे मठाधिकारी बनना पड़ा।

११ **लाभस्थान**:—इस स्थानमें कर्क राशिका स्वामी चंद्र भाग्य स्थानमें है। इस योगसे यह मालूम पड़ता है की जोतिषशास्त्रका पूरा

ज्ञान मिलाकर उस शास्त्रमें पुरे संसारमें नाम प्रतिष्ठीत होनेकी इच्छा अपूरी रह गई।

१२ व्ययस्थान:—इस स्थानमें सिंह राशिका स्वामी रवि पंचम स्थानमें है। इसका परिणाम याने मरनेके पहिले में जिस स्त्री व्यसनमें पड़ा था वह व्यसन मृत्यू तक नहीं छुटा और लोक विरोधक बना। मठ खाली हो गया।

योग विचार

अब इस पूर्व जन्मके कुंडलीमें जो ग्रहोंके योग हुये हैं वह नीचे देता हूं।

योग १ ला:—शनि बुध और चंद्र ये तीनों ग्रह नवपंचम योग करते हैं। इस योगका फल बुद्धिमें शुद्धता और पवित्रता, दृढ निश्चयी, न्याय और अन्यायकी बराबर छान बिन करना और उसे ठीक समझना। हरएक बातके अंततक जाकर उसके सूक्ष्म भागोंको जाननेकी कोशीश करना।

योग २ रा:—मेरा आयुष्य जो इतना खराब हो गया उसका कारण निचे लिखा हुआ योग है। चंद्र नेपच्यून भाग्य स्थानमें और मंगल तृतीय स्थानमें है। जब मेरी उपासना जोरोंसे चल रही थी और मैं योगाभ्यास कर रहा था तब याने मेरे उमरके वर्ष २८ के करीब आगे दिया हुआ किस्सा हो गया। एक पड़ोसी गांवकी पतिव्रता युवति मेरे स्थापन किये हुए भगवान महावीरजीके दर्शन और पूजाके लिये रोज आया करती थी। एक दिन मठमें कोई नहीं था यह मौका पाकर मैंने उस स्त्रीपर जुलूम बलात्कार किया और उसे भोग लिया। दुर्दैववश उसी

वक्त एक अन्य स्त्री आई और उसने यह सब तमाशा देखा और गांवमें जाकर पूर्ण वृतांत उस पतिव्रता युवतिके पतिको सुना दिया। परंतु उस गांवके कोई भी आदमीमें मुझे शासन करने की ताकद न थी। गाँववाले मुझसे डरते थे; इसी कारण वे मेरा कुछ भी न बिगाड़ सके। हाँ इतना जरूर हुआ कि उस स्त्रीके पतिने अपनी स्त्रीको घरसे बाहर निकाल दिया। जब मुझे वह बात मालूम हुई तो मैंने उस स्त्रीको अपने मठमें लाकर रख लिया। मेरी कामेच्छा पूर्ण करनेमें वह इन्कार किया करती थी। इससे चिढ़कर मैं उसे मारता पीटता था और दो तीन दिन तक खाने पीनेके लिये कुछ भी न दिया करता था। इन यन्त्र-णाओंसे पीड़ित होकर बेचारी मुझे रोज शाप दिया करती—" अगले जन्ममें मैं तुम्हारी पत्नी बनकर आऊंगी और इसका बदला चुकाऊंगी। तुम्हें भी इसी तरह खानेको कुछ भी न मिलेगा और न स्त्री सुख ही प्राप्त होगा। एक दिन लड़कीके माबापको इस बातका पता चल गया। वे लोग मेरे पास आकर मुझसे लड़की वापस ले जानेके लिये कहने लगे। मैं चुपचाप लड़कीको अपने गाँवमें ले आया व वहाँ उसको अपने अधीन रखा। परन्तु वहाँ भी लड़कीके माबाप पता लगाते हुए आ पहुंचे और गाँवके पटेल की सहायतासे लड़कीको वापस ले गये पर साथही यह कहते गये कि वे लड़कीका बदला अवश्य ही चुकावेंगे।

चन्द्र मंगल युति और प्रतियोगमें बलात्कार संभाव्य है।

३ रा योग—धनेश शुक्र और सप्तमेश गुरु—ये दोनों पापी ग्रह छठवें स्थानमें पडे हैं जो कि अशुभ फल देनेवाला स्थान है। यही कारण है कि मेरा विवाह न हो सका और फलतः मुझे स्त्रीसुख नहीं मिला। ये युति संन्यासी और वेदान्तियों की ही है। इस प्रकारसे मैंने

पूर्व जन्ममें अगले जन्मके लिये निम्नलिखित संचित कर्म किया (१) दो आदमियोंकी दुश्मनी मोल ली (२) एक साध्वी स्त्रीका शाप (३) उपासना और योग मार्गका त्याग ।

यहाँ तक मैंने पूर्व जन्मका वृतान्त कन्या लग्नसे शनि कुंडली से बतलाया । अब यह देखना है कि इस जन्मकी कुंडलीसे पूर्वजन्म जन्मकी कुंडली किस तरह मिलती जुलती हैं । इस जन्ममें मेरा जन्म लग्न धनु है; पिछले जन्मका लग्न कन्या । कन्या लग्न ज्योतिषियोंका है और धनु लग्नवाले जन्म जात ज्योतिषी (Born astrologers) होते हैं । इन दोनों लग्नोंमें समान गुणधर्म मौजूद हैं । कन्या लग्नके लोग जिस प्रकारसे आजन्म अविवाहित रह सकते हैं उसी तरह धनुलग्नके लोग भी अविवाहित रह सकते हैं । मेरा विवाह हुआ था किन्तु मेरी स्त्रीका स्वर्गवास शीघ्र ही हुआ । इसके बाद मैंने दूसरी शादी नहीं की । कन्या लग्न उपासनावादी है किन्तु धनु लग्न ज्ञानवादी । इस प्रकार दोनोंमें समान गुणधर्म वर्तमान होनेके कारण धनुलग्नका स्वभाव पूरी तरहसे मुझमें उतर आया है ।

धनस्थानः—इस स्थानका अधिपति शनि वक्री होकर दशम स्थानमें है । पूर्वजन्ममें धनसंग्रह करने की कोशीस ही नहीं की थी फिर इस जन्ममें पैसा कहाँसे प्राप्त होगा ? इस स्थानमें रवि बुध ये दोनों ग्रह आर्थिक कठनाईयोंको दर्शाते हैं । पूर्व जन्ममें ज्योतिष शास्त्र का अध्ययन करने की कोशिश की उसका फल इस जन्ममें प्राप्त हुआ । यही कारण है बचपन से ही ज्योतिषशास्त्र की ओर मेरा ध्यान लग गया है और इसी शास्त्रका मैंने परिश्रमपूर्वक अध्ययन किया । इस योगके प्रभावसे कौटुम्बिक सुख कम प्राप्त होता है और वाणीमें सच्चापन आता है ।

तृतीयस्थान—पूर्वजन्म कुण्डलीमें इस स्थानमें मंगल और भाग्यस्थानमें चन्द्र नेष्टच्यून है। पूर्वजन्ममें हम तीन भाई थे। उनमेंसे सबसे बड़े की मृत्यु हुई। बड़े भाईमें और मुझमें मेलजोल बिलकुल ही न था। इस जन्मकी कुण्डलीमें तृतीय स्थानमें गुरु शुक्र हैं और शनि वक्री है। इस जन्ममें भी हम तीन भाई थे उनमेंसे मुझसे बड़े भाई की मृत्यु हो गई। सबसे बड़े भाईकी मृत्यु २ सितम्बर १९२२ को हुई दोनों भाईयोंमें अनबन बनी रहती थी।

चतुर्थ स्थानः—पूर्वजन्मकी कुंडलीमें इस स्थानमें धनुराशि है और उसका अधिपति गुरु छठवें स्थानमें है जिसका नतीजा यह हुआ कि मातृसुख नहीं मिला। इस जन्मकी कुंडलीमें इस स्थानमें मीन राशि उदित है और भावेश गुरु तृतीय स्थानमें याने दुःस्थानमें है जिसका फल यह हुआ कि इस जन्ममें मातृसुख अत्यल्प प्रमाणमें प्राप्त हुआ क्योंकि मा मेरी उम्रके ४२ वें सालमें स्वर्गलोक चल बसी। पिछले जन्ममें जायदाद नहीं बनाई और इस जन्ममें भी मैं जायदाद न बना सका।

पंचमस्थानः—पिछले जन्ममें इस स्थानमें मकर राशि उदित है और शनि वक्री लग्नमें है एवं इस जन्ममें इस स्थानमें मेष राशि उदित है और भावेश मंगल व्ययस्थानमें है। इसी कारण सन्तान नहीं हुई। किन्तु पिछले जन्ममें लग्नेश बुध पंचम स्थानमें और पंचमेश शनि लग्न में है। इस जन्ममें पंचम स्थानमें राहू होनेके कारण ग्रन्थका निर्माण मेरे हाथोंसे हो सका। पंचम स्थानके राहूके प्रभावसे ही चिकित्सा बुद्धि प्राप्त हुई।

षष्ठस्थानः—पिछले जन्ममें इस स्थानमें गुरु शुक्र होनेके कारण एक स्त्री कई लोगोंकी दुश्मनी मोल लेनेका कारण हुई। क्योंकि

सप्तमेश भाग्येश छटवे स्थानमें थे। इस जन्ममें ये ही गुरु और शुक्र तृतीय स्थानमें होनेके कारण विवाह होनेके बाद जिन्दगी दर्द भरी कहानी हो गई क्योंकि स्त्रीके साथ जीवन सुखमें न बीत सका।

सप्तम स्थानः—पिछले जन्ममें सप्तमेश छठवें स्थानमें होनेके कारण किसी भी प्रकारका उद्योग धन्धा मुझसे न हो सका। इस जन्म में भी यही हाल रहा है। पूर्व जन्ममें जिस स्त्रीके साथ मेरा दुर्व्यवहार हुआ था वही स्त्री इस जन्ममें मेरी पत्नी होकर आई। यह स्त्री भी जल्दही स्वर्गलोक चल बसी।

अष्टम स्थानः—पिछले जन्ममें अष्टमेश तृतिय स्थानमें और अष्टम स्थानमें राहू होनेके कारण केवल ३६ वर्षकी आयु मिली थी। इस जन्ममें चन्द्र षष्ठ स्थानमें उच्चका होनेके कारण आयुकी मर्यादा अधिक वर्षकी होगी और मृत्यु उच्च अवस्थामें होनी चाहिये। किन्तु वृषभ यह जंगली राशि होनेके कारण मृत्यु जंगलमें होनी चाहिये।

नवमस्थान—पिछले जन्ममें इस स्थानमें चन्द्र और नेपच्यून की युति है जिसमें यह पता चलता है कि हम पूर्वजन्ममें नाथपंथीय हनुमानजीकी उपासना किया करते थे। इस जन्ममें यह युति छटवें स्थानमें होनेके कारण उपासना की ओर प्रवृत्ति नहीं है; हाँ ईश्वरके बारे में स्वप्नमें आभास जरूर मिलता है। इस जन्ममें तीर्थ यात्रा बहुत कुछ कर चुका हूँ।

दशमस्थानः—पिछले जन्ममें दशमेश पंचम स्थानमें है इस लिये ज्योतिष-शास्त्रमें पारङ्गत होनेकी कोशिश की थी। इस जन्ममें धनस्थानमें रवि बुध आनेके कारण ज्योतिष शास्त्र विषयक २४ ग्रन्थ अभीतक मैंने लिखे हैं और अभी बहुत कुछ लिखना बाकी है। इस योग

का फल याने पितृ सुख उम्रके ४१ वर्ष तक प्राप्त हुआ है। किन्तु उनसे अबतक न बनी रही क्योंकि इस जन्ममें दशम स्थानमें शनि है। दशम स्थानमें शनि होनेके कारण क्या फल प्राप्त होते हैं इस विषयमें चमत्कार चिंतामणीकार लिखते हैं—" अजातस्य माताः पिता बाहूरेव "। मुझे माताका दुध न मिल सका इस लिये मेरा पालन पोषण बकरीके दुध पर हुआ है।

लाभस्थानः—पिछले जन्ममें लाभेश चन्द्र भाग्यमें होनेके कारण ईश्वर प्राप्तिके मार्गसे कोई लाभ न हो सका। इस जन्ममें लाभेश शुक्र तृतिय स्थानमें होनेके कारण हानि हुई है, लाभ नहीं।

व्ययस्थानः—पिछले जन्ममें व्ययेश पंचम स्थानमें है। इस जन्ममें पंचम स्थानमें राहू होनेके कारण बुढापेमें ईश्वर प्राप्तिके मार्गसे कुछ लाभ अवश्य होना चाहिये। पिछले जन्ममें जेलमें नहीं गया था किन्तु इस जन्ममें मंगल व्ययस्थानमें होनेके कारण जेलमें जाना पड़ा।

योग विचार

इस जन्ममें निम्नलिखित ग्रहयोग पाये जाते हैं:—

१ ला महत्वका योग—पंचम स्थानमें राहू, व्यय स्थानमें मंगल, दशम स्थानमें शनि और छठवें स्थानमें चन्द्र नेपच्यून। इस योगके कारण किसी भी प्रकारका धन्धा न हो सका। पूर्वजन्ममें किसी एक स्त्रीपर बलात्कार करनेसे और उसके अभिशापके कारण स्त्रीसुख बिल्कुल ही प्राप्त नहीं हुआ। अन्नवस्त्रके लिये मुहताज रहना पड़ता है। किन्तु इसी योगके कारण ज्योतिष शास्त्रपर ग्रन्थ लिखकर हिन्दुस्थानमें

नाम होना चाहिये। इसी तरह ईश्वर प्राप्तिको पानेके लिये हर प्रकारके प्रयत्न चालू रहना चाहिये।

Rising sign Sagittarius is in 25 th degree-" A man in a balloon with the dark clouds beneath him " Denotes an experimentalist, an investigator of impounderables one whose life will abound with trials but success will ultimately crown his labour.

Sun in Capricorn 24th degree" A man struggling in a lake only the head out sometimes the head appears to sink under but it rises again and again until at last a lifebuoy is thrown to him by a person witnessing his position finally he is saved " Denotes one who will always be in trouble through debt always involved. always on the verge of bankruptcy finally by some unlooked for and unexpected " God-Send " he or she delivered

Mercury is in 5th degree-" A very small unpretentious window in the wall of a massive tower " Denotes one whose native powers and mental resources are so great and abundant that the native will be independent of his external aids and will feel ever happy amid the offspring of his own genious. Further such persons will never seek display; these are creators not imitators.

Moon is in 2nd degree of Taurus " A large figure 2 comes before my vision " Denotes that he born under this degree will live alone.

Mars is in 15th degree of Scorpio " Around temple with pointed roof " Denotes a person partial to the outward observances of religious rites; very superstitious regarding its mysteries.

Jupiter & Venus are in 30th degree of Aquarius- " A sceptre surrounded by a crown " Denotes one who will rise to distinction and offices of great powers and influence. He will display capacity for government ana rulership and however humble his origin; will speedily attain to a foremost position in his own sphere and may successfully attempt even greater heights than many of his predecessors and contemporaries. In mind he will show himself to be rigid strict upright and unbending in his intery. His affections although by no means warm are yet sincere and constant and his ambitions are compassed by the one word Authority.

Saturn is in 12 th degree of Virgo-" Several figures of eight in a row thus: 8 8 8 8 8 8 8 8" Thus you see the square of eight. " Denotes a man or woman of mystery; a lover of mystical, a student of mystical,a secretive person, a profound

understanding he will leave for himself a name in history.

Rahu is in 30 degree of Aries " A horseman armed as if for battle is watching the waning moon " It denotes a person of an independent domineering nature who will be forsaken by his friends and colleagues on that account and whose fortunes will be severely hurt by a female. Serving himself alone he will not receive assistance " The dog and his bone are best left alone " It is the degree of Isolation.

Neptune is in 11 degree of Taurus-" A man seated on thrown holding a sceptre crowned and with signs of wealth arround him " Denotes one who if born wealthy will attain eminence by means of his care in the affairs of life, if born poor he will acquire both wealth and fame The position will be due to his shrewdness rather than his integrity for the chief characteristic here is Watchfulness "

उपर दिया हुआ प्रत्येक ग्रहोंके अंशोंका वर्णन और उसका फलादेश है। मेरेको अंशतः लगते हैं।

Alan Leo नामक एक सुप्रसिद्ध ज्योतिष ग्रन्थकार लिखते हैं की धनु लग्नका तीसरा द्रेष्काण जन्मजात ज्योतिषियों (Born As-

trologers) का निर्माण करता है। मेरी कुंडलीमें धनु लग्नका तीसरा द्रेष्काण है।

C. E. O. Carter लिखते हैं कि जिनकी कुंडलीमें चन्द्र नेपच्यूनकी युति होती है वे जन्मजात ज्योतिषी होते हैं और उसे स्त्रीसुख प्राप्त नहीं होता। मेरी कुंडलीमें षष्ठस्थानमें चंद्र नेपच्यूनकी युति है।

रतलामके सुप्रसिद्ध ज्योतिषी स्वर्गवासी महादेवजी पाठक इन्होंने अपने जातक ग्रन्थमें 'ज्योतिर्विद् निपुणता योग' दिया है जिसमें उन्होंने लिखा है—"जिनकी कुंडलीमें धन और तृतीय स्थानमें रवि, बुध और शुक्र इनका योग हो तो वे ज्योतिषियोंमें श्रेष्ठ होते हैं।

शनिके दशम स्थानमें होनेसे भी ज्योतिषी होते हैं।

इस प्रकारसे मैंने खुदकी कुंडली लेकर पूर्वजन्मके बारेमें किस प्रकार अन्वेषण करना चाहिये यह स्पष्ट किया है। इसका कारण यह है कि किसी भी राष्ट्रके महान क्रांतिकारक नेता लोग और महान साधु, सत्पुरुष महात्मा पुरुष, एकही ग्रह योगमें जन्म लेकर इस अवनतिऊ पर आते हैं।

यह पूर्व जन्म कथन Dreams स्वप्न, भावना, क्रिया (Daily life) और वासना इस Natural instinct मार्गसे पृच्छकका समाधान कर सकता है।

परिच्छेद १८ वाँ

महात्माओंके कुंडलियोंका विवेचन

बाबू अरविंद घोष (योगी)

जन्म तारीख १५-८-१८७२ सबेरे ५ बजे, जन्मस्थळ कलकत्तेके नजदीक।

जन्म कुंडली

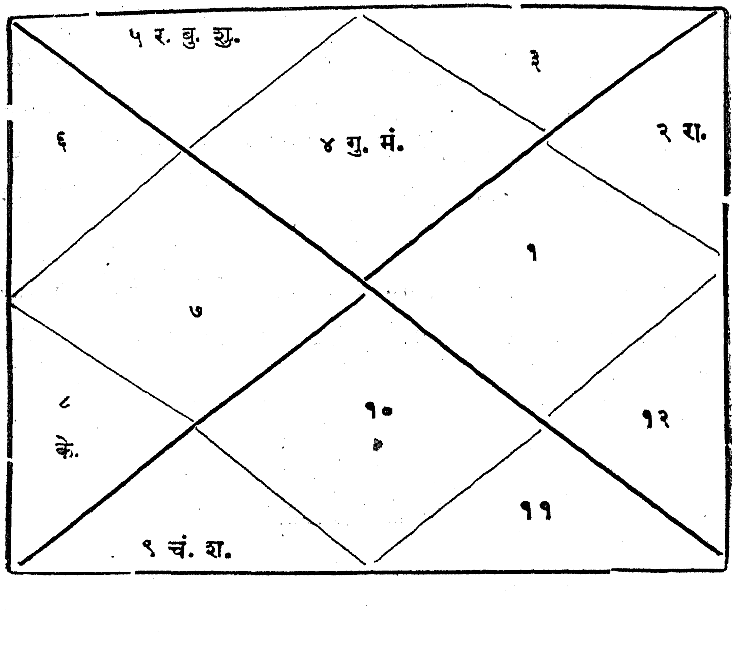

कर्क लग्न योगियोंका लग्न है। इनके लग्नमें कर्कका उच्च गुरु और नीच मंगल है। " जन्म लग्ने गुरुश्चैवरामचन्द्रवनागतः " यह कर्कके गुरुका वर्णन है। इस नियमके अनुसार इन्हें भी जीवनके आन्तिम दिनोंमें पाँडेचरीके जंगलोंमें बसना पड़ा और इनका मंगल नीच होनेके कारण सारे हिन्दुस्थानमें इनका नाम गुँजने लगा। धनस्थानमें स्वराशिमें रवि है और उसके साथही बुध व शुक्र भी है। इन्होंने प्रचुर लेखन कार्य किया है। अंग्रेजीमें इन्होंने वेदान्तपर बहुतही अच्छे ग्रन्थ लिखे हैं। ये योगी होते हुए राजयोगी हैं। रवि बुध और शुक्र ये तीनों ग्रह यह दर्शाते हैं कि आज नियम और व्रतोंका कड़ा पालन करते हैं। सालमें आप सिर्फ दोही दिन लोगोंको दर्शन देते हैं। छठवें स्थानमें शनि व चन्द्र है। यह योग सरकारी नौकरीमें बांधनेवाला था किन्तु दैवयोगसे ये पाँडेचरीमें आत्मबंधनमें ही रहे। लग्नमेंका मंगल ये हठयोगी होना चाहिये ऐसा बतलाता है लेकिन इन्होंने किससे दीक्षा ली, योगाभ्यासका गुरु कौन, अभ्यास पूरा होनेके उपरान्त आत्म-दर्शन हुआ या नहीं आदिका वृतान्त प्रसिद्ध न होनेके कारण इस विषयमें कुछ लिखना असंभव है। ये योगी हैं ऐसी सारे हिन्दुस्थानमें ख्याति है। इनके कुंडलीमें एक भी ग्रहयोग पंचम, दशम और व्यय इन स्थानोंमें न होनेके कारण पूर्णावस्थाको पहुँच न सके होंगे ऐसी मेरी समझ है।

स्वर्गीय श्रीमन्त नारायण महाराज केडगाँवकर

जिला—पूना (राजयोगी) शके १८०५ कार्तिक ३० बृहस्पतवार सूर्योदयके समय।

जन्म तारीख–२९-११-१८८२, जन्मस्थल–विजापूर जिलेमें बागलकोट.

जन्मकुंडली

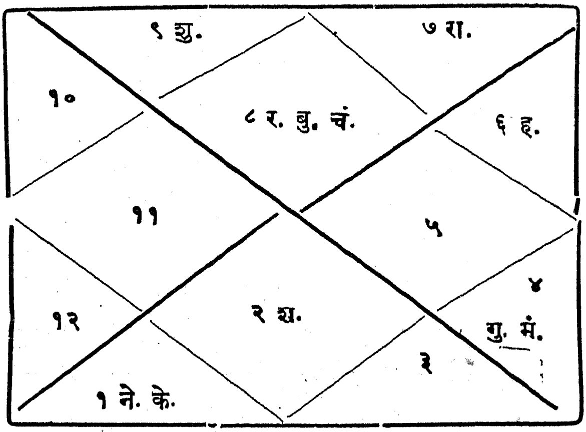

इनका जन्म वृश्चिक लग्नमें हुआ है। वृश्चिक लग्न हठयोगी होने का लग्न होता है। लग्नमें ही रवि चंद्र हैं। ये वृश्चिक लग्नको राजयोग देते हैं, उसी तरह भाग्यमेंके गुरु मंगल भी राजयोग देते हैं। यह राजयोग-कारक योग नवपंचम स्थानसे लग्न व नवमस्थानसे हुआ है। इससे एकही बात स्पष्ट दिखाई देती है कि पूर्व जन्ममें योगाभ्यास करते समय बीचमेंही अष्टसिद्धियाँ आ उपस्थित हुई। उनमेंसे एक क्षुद्र सिद्धी लेकर वापस लौटे इसलिये प्रस्तुत जन्ममें उन्होंने राजाके समान ऐश्वर्य का उपभोग लिया है। रविचन्द्रके सामने शनि होनेके कारण बचपन

मेंहीं मां बाप इन्हें छोड़कर परलोकको सिधारे। ये कुछ दिनतक गाणगापूरमें श्रीदत्त महाराजकी सेवा करते रहे किन्तु बादमें आगे चलकर सन १९०५ के करीब पूना जिलेमें केडगाँव नामक गाँवमें एक बेटके पास जाकर बसे।

सन १९०५ के करीब अहमदनगर जिलेमें प्रवरानदीके किनारे बेलापूर नामक एक गाँव है। इसी गाँवके जंगलमें ब्रह्मीभूत विद्यानंद सरस्वती बेलापूरकर नामक एक महान विभूति रहा करती थी। ये महाज्ञानी, हट्टेकट्टे, ऊंचेपूरे, अति तेजस्वी, (इनके समान तेजस्वी पुरुष फिरसे कभी आजतक देखनेमें नहीं आया है) वर्ण पूर्णपके हुए कागजी नीम्बू के समान। इनके विषयमें ध्यानमें रखने योग्य खास बात यह है कि इनके शरीरसे नैसर्गिक सुगंध फैलता था। (सौगंधो योगिनो हे जायते बिन्दुधारणात् '—हठयोगप्रदीपिका ') इनका शिष्य सम्प्रदाय नेपाल तक फैला हुआ था। अपने समाधिस्थ होनेके समय (सन१९०५ के करीब) इन्होंने अपने शिष्यजनोंको "तुम लोग बेटमें जाकर बसो" ऐसा आदेश दिया। इसी समयसे इनका नाम गुंजने लगा। महाराष्ट्रमें इनका शिष्यवर्ग काफी बड़ा है। लोगोंको दीक्षा देना और भक्तिका मार्ग बतलाना अथवा लोगोंके कुछ पूछनेपर "नारायण तुम्हारा कल्याण करे" ऐसा आशीर्वाद देना यही इनका कार्यक्रम था। धन स्थानमें शुक्र होनेके कारण इन्होंने प्रचुर धन कमाया; बड़ी बड़ी अट्टालिकाएँ खड़ी कीं और कई लोगोंके भोजनका प्रबन्ध किया है। साथ ही दत्त महाराजका एक अति सुन्दर और विशाल मन्दिर बांधा है। धनुराशिका शुक्र वैवाहिक सुख नहीं देता। सप्तम स्थानमें वृषभ इस उत्पात राशिमें वक्री शनि होनेके कारण और राहू व्ययस्थानमें होनेके

कारण ये आजन्म नैष्ठिक ब्रह्मचारी बने रहे। ये खुदको विद्यानंदका शिष्य कहलाते हैं। राहूके सामने षष्ठ स्थानमें नेपच्यून है। कई साल पहिले ये खुले हाथ से 'जय गुरुदेव दत्त' कहकर तीर्थ देनेका चमत्कार किया करते थे। भाग्यमें गुरु मंगल है। वृश्चिक लग्नमें यह गुरु बहुत प्रबल होनेके कारण श्री दत्तमहाराजकी उपासना करना पड़ी? व्ययस्थानमें राहू भक्तिमार्ग दर्शाता है। इन्होंने कोई अधिकारी शिष्य किया हुआ नहीं दिखाई देता। इसके कारण गद्दीके लिये झगडे बखेडे उपस्थित होने की आशंका है। इनका मृत्यु १-९-१९४५ को बंगलोर में हृदय क्रिया बन्द पड़नेसे हुआ है। इन्होंने अपनी मृत्युके बाद भक्तगणोंने किसके पास जाना चाहिये यह नहीं बताया है। अब देखना चाहिये कि इनकी गद्दीके लिये किन किन शिष्योंमें झगड़े मचते हैं। विद्यानन्द महाराजने आपका समाधी दिन दो साल पहिले बताये थे। महाराजका मृत्यु योगमार्गसे नहीं हुआ सामान्य मनुष्याके तरह हुआ।

मेरे गुरु ब्रम्हीभूत सद्गुरु
ब्रम्हचैतन्य महाराज गोंदावलेकर

मकाम–गोंदावले बुद्रुक–जिल्हा—सातारा (ज्ञानयोगी और भक्तियोगी)

जन्म—शके १७६६ माघ शुद्ध १२ बुधवार रात्रिको ३ बजे ।

जन्मस्थल—गोंदावले । जिला—सातारा ।

जन्म कुंडली

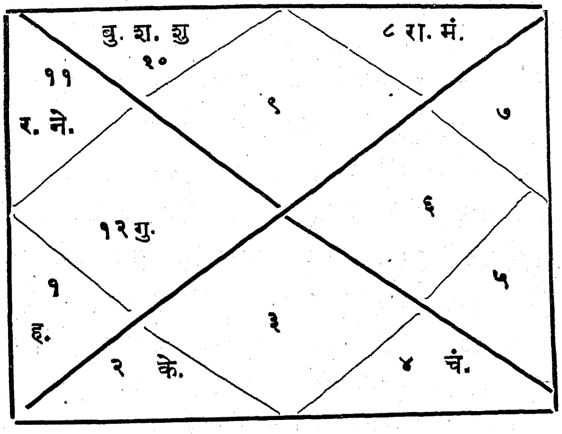

लग्न धनु। इस लग्नमें धर्मसंस्थापक, ज्ञानी, सद्गुरु, कायदे आजम, क्रान्तिकारक, सुविख्यात कवि, उपन्यासकार, नाटककार और ज्योतिषी ऐसे लोग जन्म लेते हैं। चतुर्थ स्थानमें लग्नेश गुरु होनेके कारण ईश्वरी ज्ञान प्राप्त होनेके उपरान्त भी इन्हें खुदका घरबार छोड़नेकी जरूरत नहीं पड़ी। धनुलग्नके साधु सद्गुरू बड़े सावधान होते हैं। ये संसारी थे परंतु माया मोहके परे।

धन स्थानमें शनि बुध और शुक्र हैं। शनिके कारण शुरू शुरूमें तपश्चर्या व गुरु सेवा कर जो षट्साधन सम्पत्ति कमाई थी वह जिन्दगीके आखिरतक समाधिस्थ होतेतक काममें आई। बुध व शुक्रके कारण उम्रभर अन्नवस्त्र की कमी महसूस न हुई। वाणीमें मिठास किन्तु अप्रिय सत्य बोलनेवाली। इसी कारण इन्हें दो औरतें थीं जिसमें विशेष बात यह है कि दूसरी औरत जन्मांध थी।

तृतीय स्थानमें रवि नेपच्यून युति है इस युतिमें लोगोंको स्वप्नके द्वारा दृष्टान्त देनेका कार्य अविरत अभी तक चालू है। इन्होंने एक दूसरा चमत्कार किया था। इनके एक सच्चे शिष्य थे जिनका नाम इन्होंने "ब्रह्मानंद" रखा था। ब्रह्मानन्दजी विजापुर जिलेके बदामी तालुकमें जालीहाल नामक एक छोटेसे देहातके मूल निवासी थे। युवावस्था प्राप्त होते तक इनके हाथसे अस्वाभाविकतया चमत्कार हुआ करते थे। इस प्रकारसे ये एक पूर्वजन्मार्जित सिद्ध पुरुष थे। आप बादमें अध्ययनके लिये काशी गये और वहाँसे महा पंडित बनकर आप पंडितोंको वादविवादमें हराते हुए और जय पत्र लेते हुए इन्दौरमें आ पहुँचे। इस शहरमें गोंदावलेकर महाराजका उस समय मुक़ाम था। आप इनके पास जाकर पहुँचे और वादविवादके लिये उनसे आग्रह करने लगे। महाराजने तो पहले उसे खूब समझाया कि भाई मैं तो तुम्हारे समान पंडित नहीं हूँ, केवल एक जंगली अनपढ़ आदमी हूँ, परन्तु ब्रह्मानंदजीने उनकी एक भी बात न सुनी। महाराजने सोचकर देखा तो उन्हें मालूम हुआ कि वह पूर्व जन्मसे ही अपना शिष्य है और वही मौका है जब कि उसे आत्मज्ञान देना चाहिये। यह सब सोचकर महाराजने उसे दूसरे रोज वादविवादके लिये निमन्त्रण दिया। दूसरे दिन आप वादविवाद की खूब तैयारी कर महाराजके पास आये तो वहाँ उन्होंने देखा कि महा-

राजने हनुमानजीका बड़ाही भयंकर उग्र स्वरूप धारण किया है। वह ऐसे उग्र स्वरूपको देखकर ब्रह्मानन्दजी दौड़कर महाराजके चरणोंमें जा गिरे और आत्मज्ञान देनेके लिये महाराजसे विनन्ती की। महाराजने उससे कहा कि तुम अपनी सर्व विद्या प्रथम भूल जावो फिर मैं तुम्हें आत्मज्ञान दूंगा। इस तरह कुछ काल बीत जाने पर इन्होंने महाराजसे आत्मज्ञान प्राप्त किया। बादमें आप कर्नाटकमें जा बसे और ब्रह्मानन्द इस नामसे प्रसिद्ध हुए। महाराजका काशीसे लेकर रामेश्वर तक नाम गूँजता था। लोगोंको स्वप्न में जाकर दृष्टान्त देना और अन्य प्रकारका देव देवता स्वरूप धारण करना आदि बातें केवल धनु व मीन लग्नमें तथा नेपच्यूनसे युक्त रविचन्द्रमें ही पायी जाती हैं।

चतुर्थ स्थानमें मीनका गुरु है। महाराजने बचपनमें ही घरबार छोडा और आत्मज्ञान प्राप्त करनेके इरादेसे अक्कलकोटके स्वामी महाराजके पास आये। परन्तु स्वामी महाराजने खुद 'आत्मज्ञान न देकर उन्हें नायझाम प्रांतमेंके येलेगाँवके तुकामाईके पास भेज दिया। तुकामाई पूर्णावस्थाको पहुँचे हुए ज्ञानी और भक्तियोगी पुरुष थे। इन्होंने महाराज की अच्छी तरह परीक्षा ली और कसौटीमें पूरी तरह उतरनेके बाद उनके शीर्ष पर अपना वरदहस्त रखकर रामनामकी त्रयोदशाक्षरीका मन्त्र दिया और भक्तिपन्थ आगे चलानेके लिये उन्हें आदेश दिया उसी प्रकार महाराजने रामभक्तिपन्थको चलाया और सर्वत्र रामनामकी महिमाको बढ़ाया। रामभक्ति महिमा बढ़ानेका कारण यह है कि इनके व्ययस्थान में मंगल और राहू हैं।

पंचमेश व्यय स्थानमें राहूसे युक्त होनेके कारण सन्तान लाभ अवश्य हुआ किन्तु टिक न सका। व्ययस्थानमें राहू मंगल होनेसे थे

पूर्ण भक्तियोगी थे और इन्होंने मोक्ष प्राप्ति की। चन्द्र अष्टम स्थानमें स्वराशिमें होनेके कारण इन्होंने अपनी इच्छासे देह त्याग कर समाधि ली। उस समय मठमें किसीको भी समाधिके लिए आपने न तो बतलाया ही और न किसीको अपने पश्चात मठाधिकारी नियुक्त किया।

भगवान रामकृष्ण परमहंस

(पूर्ण भक्तियोगी किन्तु ज्ञानी)

जन्म कुंडली

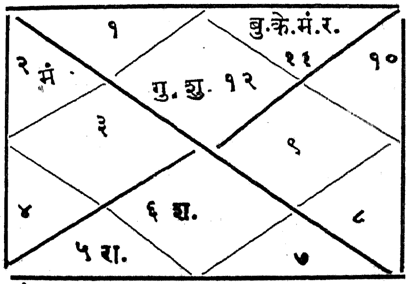

मीन लग्न, भक्ति योगका लग्न। लग्नमें गुरु शुक्र की युति ज्ञानकी या भक्तिकी चरम सीमा होनेकी निदर्शक है। पारमार्थिक मार्गकी ओर जानेपर विवाह होने पर भी न हुए समान ही था; क्योंकि इन दोनों ग्रहोंके सामने वक्री शनि था। गुरु मीन राशिमें लग्नमें ही होने के कारण " तोतापुरी " नामक महात्मा पुरुष इनके गुरु थे। कलकत्तेमें आकर बसनेके बाद आपका नाम मशहूर हुआ है।

भाग्येश मंगल तृतीय स्थानमें वृषभ जैसी लड़ाकूवृत्ति (fighting instinct) वाली राशिके पास होनेके कारण युद्ध प्रिय भगवती कालीदेवीके आप उपासक थे। पंचमेश चंद्र कीर्ति स्थानमें और कुंभ राशिमें होनेके कारण इन्होंने हजारों शिष्य बनानेकी अपेक्षा अपना एकही शिष्य ऐसा बनाया कि जिसने आर्यधर्मका ध्वज अखिल संसारमें लहराया और शिकागोमें १८९३ सालके सितम्बर महिने में जो धर्म परिषद हुई थी उसमें सब धर्मोंमें हिन्दुधर्म श्रेष्ठ है ऐसा सिद्ध किया। इस शिष्यका नाम स्वामी विवेकानन्द है। गुरु शिष्यकी यह जोड़ी अभूतपूर्व और अलौकिक थी (एक श्चंद्रस्तमोहन्तीनच तारागणोपिच ") यह जोड़ी याने महाराष्ट्रके श्री समर्थ रामदास और कल्याण है। इसीने फिरसे बंगाल मे जन्म लेकर राष्ट्रकार्य किया है।

इन्होंने अपने जविनमें कभी भी चमत्कार नहीं किये। ये विदेही स्थितिको पहुँचे हुए थे और अपनी इच्छासे समाधिस्थ हुए। स्वामी विवेकानन्दजीने इनका नाम सारी दुनियामें फैलाया है।

स्वामी विवेकानंद

ज्ञानयोगी ब्रह्मचारी

ता. १२-१-१८६३ शक १७८४ पौष व। ७ मी सोम. सवेरे ६-३३ मि ३३ सेकंद कलकत्ता टाईम, जन्म स्थल कलकत्ता ।

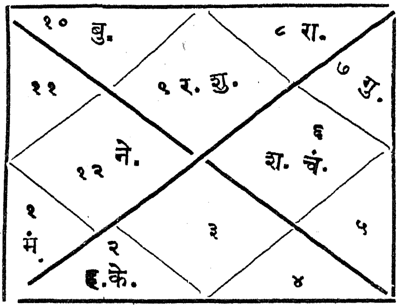

स्वामी रामतीर्थ

प्रापंचिक ज्ञानयोगी और हठयोगी

ता. १२-१०-१८७३ इष्टघडी २५-१५

जन्मस्थल—मुरालीवाला जि—गुजरणवाला पंजाब

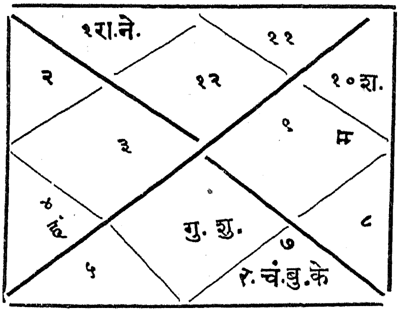

रमणमहर्षि

हठयोगी मौनी, कै. नारायण महाराजके समान

शाके १८०१ अगहन व॥ २ द्वितीया मंगलवार सबेरे ता. ३०-१२-१८७९

लग्न कुंडली

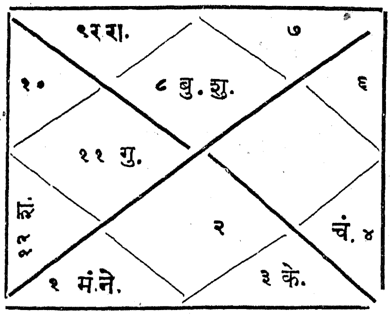

Please see "Life and teaching of Raman Maharshi Page 14," Tula Lagna horoscope is wrong one.

श्री माणिकप्रभु महाराज, हुमणाबाद (निझामस्टेट)

महान सिद्ध पुरुष महात्मा

जन्म कुंडली

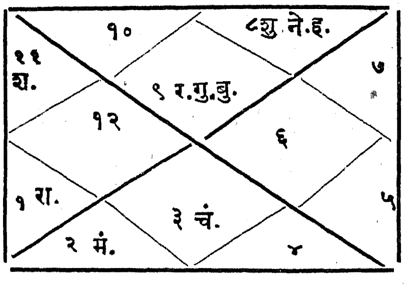

श्री. शाके १७३९ ईश्वरनाम संवत्सर अगहन शु॥ १४ मंगलवार सूर्योदयात गतेष्ट घडी ५९–५० स्पष्ट लग्न ८–८–१०–२८ रवि ८–९ –४० २० ता. २२–१२ १८१७.

आप बचपनसेही सिद्धिके बहुतसे चमत्कार बताये । मुसलमानोंने इन चमत्कारोंको घबराकर आपको उच्च श्रेणीकी "पीरानपीर दस्तगीर" ऐसी पदवी प्रदान की । आप बेगुरु होकर भी जन्मसे Born सद्‌गुरु थे; आप मुक्त होगये ।

श्री संत तुकडोजी महाराज

आपका जन्म ता. १७-११-१९१० को सूर्योदय प्राक घडी ५ जन्म स्थल—वरखेड, जिल्हा–वर्धा ।

जन्म कुंडली

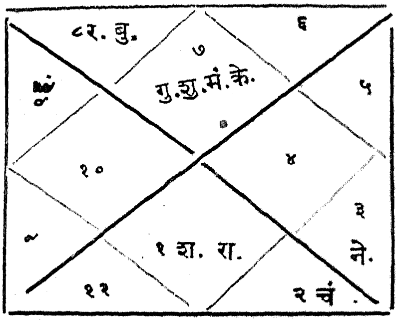

इस वरखेडमें पहिले बहुत वर्षोंसे एक महात्मा अडकोजी महाराज नामसे रहा करते थे । वे बड़े ज्ञानी, वैराग्य संपन्न और साधारण उन्मत्त अवस्थामें गांवके बाहर एक कुटीमें अपना जीवन व्यतीत करते थे । आप बचपनसे अडकोजी महाराजके पास भजन निमित्त बैठा करते थे। आपने विवाह नहीं किया। आपके बचपनमेंही माताका स्वर्गवास हुआ और पिताका सन १९४४ में हुआ ऐसा मालूम होता है । आप रात दिन वैराग्य वृत्तिमें रहकर भजनानंदका लाभ उठा रहे हैं ।

आपका शिष्य समुदाय काफी है। राजनैतिक कार्यमें भी आप भाग ले रहे हैं। इसका ज्ञान चिमूर–आष्टी की हत्याकाण्डसे मालूम होता है।

आप हिंदी और महाराष्ट्रीय भाषामें ईश्वर गुणानुवाद पर अच्छी कविता लिखकर प्रसिद्ध कर रहे हैं। आपने गुरुदेव सेवादल नामक एक दल स्थापन कर उसके द्वारा लोगोंको भजनका आनंद देनेका प्रबन्ध कर रहे हैं। आप गुरुदेव मासिक और गुरुदेव प्रेस चला रहे हैं। ऐसा मालूम हो रहा है।

आपका तूल लग्न रहनेसे और पंचम दशम और व्यय इन स्थानोंमें पापग्रह नहीं इसलिये आपको आत्मज्ञान प्राप्त नहीं होगा यह मुझे विश्वास है। आपके विषयमें हालमें जनता ऐसी बोल रही है कि पहले आप जैसे भजनमें देहावस्थामें नहीं रहते थे वैसी अवस्था आज नहीं है। हालमें आप पूर्णतया देहावस्थामें रहते हैं। इस जन्ममें आत्म साक्षात्कार न होते हुए उमरके ६०-६२ या सन १९७२ में आपका देहावसान हो जायगा।

श्री लाटणे महाराज

इन महाराजके दर्शनके लिये मैं गया था। तब मुझे निम्नलिखित इनका इतिहास मिला परंतु कुंडली नहीं मिली। आपके चेहरे और मस्तकपरसे ज्ञात होता है कि पूर्व जन्मसे ही सिद्ध पुरुष होते हुए राज-योगी मालूम होते हैं। बचपनसे ही सिद्धावस्थामें व्यवहार चल रहा है। आपका विवाह नहीं हुआ, उमर हालमें ५० सालकी होगी। आप तहसील उमरेड, नागपुरके समीप श्रीमंत बूटीके महलमें रहते हैं। यह सिद्ध पुरुष हमारे केडगांवके नारायण महाराजके समान मालूम होते हैं। ऐसे सिद्ध पुरुष अंततक सच्चे शिष्य नहीं बनाते ये बड़ी दुर्दैवकी बात है। इनका देहावसान उमरके ७१ वर्षमें होना संभव है।

महान भगवती कालीभक्त
श्री. श्री. मा आनंदमयी देवी

देवीजीका जन्म त्रिपुरा संस्थानमें खेऊडा नामक खेडेगांवमें हुआ। जन्म ता ३० एप्रील १८९६, रातको ३ बजे दुसरे दिन गुरुवार था।

जन्म कुंडली

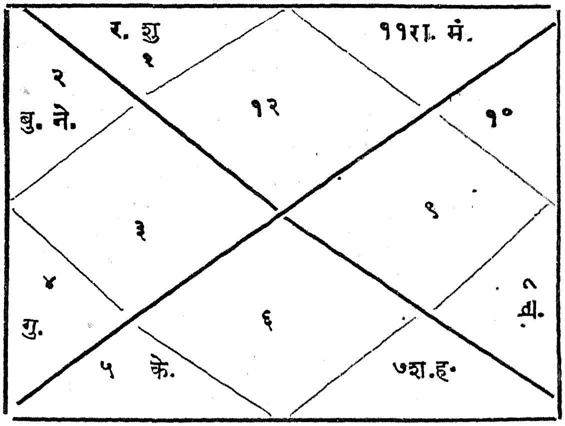

माताजीका जन्म–मीन लग्न पर हुआ है। यह राशि भक्तियोग पूर्ण होना बताती है।

माताजीका विवाह उमर १२ साल चालू था तब एक गरीब युवकके साथ हुआ।

पंचम स्थानमें उच्च गुरु रहनेसे पुत्र संतान नहीं हुई। कुंडलीमें रवि गुरु और शनि उच्च रहनेसे उमरभर दारिद्र्ययोग दिखाता है। यह उच्च ग्रह संन्यासी बना देते हैं परन्तु स्त्री होनेसे संन्यासी नहीं हो सके।

व्ययस्थान यह भक्ति, मोक्ष और विदेही स्थिती बताता है। भक्ती और मोक्षस्थानमें मोक्ष और भक्ती देने वाले राहू और मंगल ये दोनों ग्रह बैठे हैं। इस सबबसे माताको १२ वें वर्ष सन १९०८ में कुलगुरुने शक्ति मंत्र की दीक्षा दी। माने कालीका नाम जपना सुरू किया और कुछ दिनोंके बाद पूर्व जन्मके पुण्याईसे काली माताजीका साक्षात्कार हुआ। माताका चरित्र पढ़नेसे उनके शरीरमें सिद्धीके बहुतसे चमत्कार हैं और भक्ती योगिनी हैं परंतु महान भगवद्भक्त मीराके समान नहीं है। (देखिये "मातृदर्शन" श्री ज्योतिषचंद्र राय (भाईजी) कृत गुजराथी अनुवादक, भट रत्नेश्वर भवानी शंकर वकील, श्री रामकृष्ण सेवा समिती अमदाबाद)।

Y. S. ATHLE MAHARAJ

Kolhapur S. M. C.

जन्म—तारीख १९-१-१८९२ में जन्मेष्ट घडी ४५

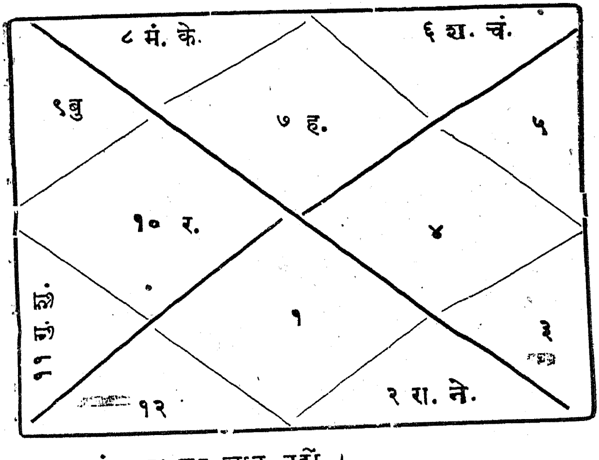

जन्म कहां हुआ यह ज्ञात नहीं।

इनका जन्म तूल लग्न पर हुआ है। इस लग्नवाले लोग साधु महात्मा नहीं बनते, Exceptional में मिलते हैं। बंगालके भगवान महाप्रभु गौरांग इनका तुललग्न था, महात्माजी तूल लग्नके थे। महात्माजी आत्मसाक्षात्कारी न होते हुए दुनियाका उद्धार करनेके लिये कष्ट उठाये और महात्मा पद पर अमर होगये। आपके माता पिताका देहावसान बचपनमें हुआ।

शिक्षाका प्रबंध न होनेसे कानडी ४ क्लास और अंग्रेजी ३ क्लास पढ़ शिक्षण त्यागकर उमरके १७–१८ सालमें योगाभ्यास करने जंगल में गये। इस समय निझाम स्टेटमें रहते थे। पंचमस्थानमें गुरु शुक्रकी पूर्ण युती रहनेसे इनको आध्यात्मिक गुरु मिल गये। यह युती पूर्ण ज्ञानावस्था बताती है. जैसे भगवान रामकृष्ण परमहंस, स्वामी रामतीर्थ। इनके ज्ञानका एक अनुभव मुझे मिला वह कहता हूँ—सन १९४४ अगस्त महिनेमें मेरी इन महात्मासे प्रथम भेट कोल्हापूरमें हुई। आपके शिष्यने कुंडली मेरे अवलोकनार्थ लाई मैने कुंडली देखी और कह दिया की ये महात्मा आत्मसाक्षात्कारी ब्रह्मज्ञ सत्पुरुष होते हुए वहांसे वापीस लौटकर पुनश्च देहावस्थापर आगये हैं। यह बात सच्ची थी। वे ब्रह्मज्ञ होते हुए भी पूर्वकर्मानुसार कुछ शरीर भोग भोगनेके लिये वापीस लौटे थें। ये दमा और खाँसीकी बिमारीसे बहुत जर्जर हुए थे और उनका अंतकाल भी समीप आया था। उस दिन रातको मुझे मुलाकातके लिये बुलाये। मैं उनके निवास स्थान पर गया तब हमारी कुछ बात चीत हुई।

मैने महाराजको प्रश्न किया—महाराज मैं योगशास्त्र और ज्योतिष शास्त्र इन दोनों शास्त्रको मिलाकर "अध्यात्म ज्योतिष विचार" नामक ग्रंथ लिख रहा हूं। इस ग्रंथमें 'कुंडालिनी' विचार लिखना है। सो

आप कृपा कर हमें कुछ विवरण देंगे तो हम पर आपके बहोत उपकार होंगे। यह सुनकर महाराजने बड़े प्रसन्न चित्तसे, कुंडलिनीका विचार शुरू कर दिया। उस समय अंग्रेजी अनॉटमी, फिजियालॉजी, साइकॉलाजी और हमारे प्राचीन वैद्यक ग्रंथकार सुश्रुत् वाग्भट आदि और सब योग-शास्त्रके ग्रंथ इन सब आधारोंसे इतना सुंदर विवेचन अंग्रेजी भाषामें किया। यह विवेचन करीब करीब पांच घंटे चला। उस समय आपका आवाज चढ़ते चला कहीं भी रुकावट नहीं, ना दमा ना खाँसी यह देखकर हम आश्चर्यसे दिग्मूढ होकर घर लौटे। इतना ज्ञान स्वामीजीको कैसा प्राप्त हुआ यह गुरु शुक्रका फल है।

स्वामीजी आजन्म नैष्ठिक ब्रह्मचारी थे, कारण धनस्थान में चतुर्थ-स्थानमें और व्ययस्थानमें पापग्रह और गुरु शुक्र युती इस योगपर विवाह नहीं होता।

जिस योगसे विवाह नहीं हुआ उस योगसे आत्मज्ञान हुआ, लेकिन शनि चंद्र ये व्ययस्थानमें रहनेसे दमा और खाँसी पैदा होकर इसी रोगसे उनका अंतकाल मार्च १९४५ में हुआ। मृत्यु समय आप गाणगापूर जा रहे थे। गाणगापूर स्टेशन नजदीक आ ही रहा था कि आपने शिष्यसे पुछा,—गाणगापूर स्टेशन आया ? शिष्यने कहा क्यों स्वामीजी क्या बात है ? स्वामीजीने कहा मुझे अपना देह छोड़ना है। शिष्यने स्वामीजीसे कहा कि आप तो श्री गुरुदत्तके सामने गुरुको देख प्रणाम करते हुए देह छोड़ोगेना ? स्वामीजीने कहा— शरीर की तयारी नहीं है। शरीर छोड़ने की गड़बड़ चल रही है। ऐसा कहकर स्टेशनपर गाड़ी आते ही श्रीगुरुदत्तका नामस्मरण करते करते स्वामीजीने शरीर त्याग दिये। आपके इच्छानुसार भीमा अमरजा संगमपर आपकी समाधि बनाई गई। (मैंने खुद आपको कुछ लोगोंके सामने कहा था की आपकी मृत्यु मार्च १९४५ में होगी, वैसे ही हुआ।) इन महाराजको फिरसे जन्म लेना पड़ेगा।

पण्डित जवाहरलाल नेहरुजी

नेहरूजी पूर्व जन्ममें "नाथ पंथीय गुँसाई" थे। चालू जन्ममें भारतके पंत प्रधान हैं।

जन्म तारीख—१४-११-१८८९ रातको १–५ A. M. जन्म स्थल इलाहाबाद।

जन्म कुंडली

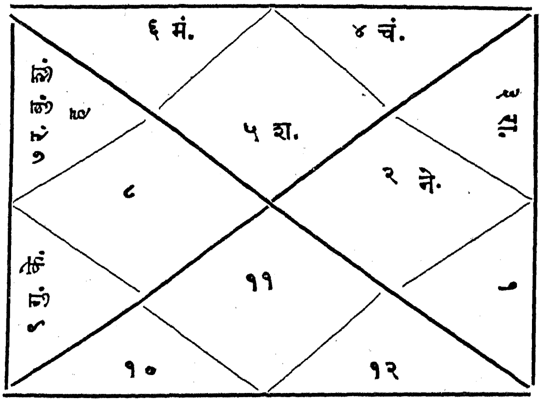

नेहरूजीकी कुंडली परसे देखा जाय तो ये पूर्व जन्ममें नाथ पंथीय गुँसाई थे। जब आप अपने गुरुके आश्रममें रहा करते थे तब योगाभ्यास होता रहा, योग अभ्यास पूर्ण होनेके बीचमें दो बातें खड़ी हुईं। १ ली बात—बुद्ध धर्मके होनेके लिये योग अभ्यास छोड़ दिये। २ री बात—एक स्त्रीके अधीन होना पड़ा। यह स्त्री बड़ी भाग्यशाली थी। वह स्त्री इस जन्मकी पत्नी श्रीमती कमला देवीजी हैं।

पूर्व जन्ममें इस प्रकारसे चलता रहा फिर देहावसानके समय आप को राजकारोबारकी वासना निर्माण हुई। इसका तात्पर्य "शुचीनाम श्रीमताम गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते" इसी न्यायसे कै. श्रीमान मोतीलालजी और देवी स्वरूपराणीजीके परम पवित्र उदरमें प्रवेश किये वहांसे जीवन क्षेत्रमें अग्रसर हुए और राज्य कारभारमें व्यग्र हो गये। आपका जन्म सिंह लग्न पर हुआ है। यह राशि राजकीय राशि होती हैं। इस राशिका मूल स्वभाव स्वयं राजा बनना या राज प्रातिनिधी बनना और देशका राजनैतिक कारोबार चलाना यह बताता है। सिंह लग्नका स्वभाव नीचे देता हूँ। Leo was rising at your birth a sign belonging to the element of fire and the fixed quality. This gives you an open, candid and honourable disposition magnanimous and generous. You have dignity and self-confidence that will sustain you in trouble and difficulty and that will bring you to the front in life if you use your opportunities wisely. You do not under-rate your own value but are ambitious and masterful with large and far-reaching aims and schemes. You have some degree of pride and fondness for display and ostentation at times and the sense of the dramatic is strong in you. You have a warm heart and ardent affections and make a very faithful friend one not liable to change or vacillate. You are compassionate tender and sympathetic and anxious to give help to

those who need it and to protect those who need protection. Your pride is rather easily touched and anger is sometimes quick to rise but you are a forgiving enemy and prefer peace to war. You have a firm strong will and do not readily change your course when you have once decided on it but are capable of persistent effort extended over a long period. You are cheerful, hopeful, sociable and companionable. Your feelings and emotions are quickly roused you are rather fond of luxury and pleasure and may need to put some curb upon this side of your nature. The Sun is the ruler of the sign Leo.

"A pyramidal figure with a maltese cross at the top or rather on the opex" This is possibly as Glorious degree as any in the Zodiac. This degree is impinged by a ray from transcendental sun one of those suns which with our sun revolves round the grand central sun. Denotes the greatest good the sublime gives prophetic inspirations rules the wondeful and fills the soul with a flood of celestial glory.

Charubel.

" A sceptre on the crest of which shines a diamond like a magnificent star " The native is

born to power eminence fame. He will by the use of his many talents supplemented by a powerful will rise to a foremost position in his sphere of life. There is in the character a large amount of courage, nobility, energy and endurance and the free use of such qualities will under benign fate bring the native into a field of life where he will be a central figure. It is a degree of Superiority.

Sepharial.

Daily habits of Leo person is defiant and sweeping in their gestures. Very often the Leo persons thumps his fist into his hand. When clinching an argument and the office employee who has worked under an Aries "Chief" will surely have noticed that "danger signals are up". "If the boss" smasks his desk or arm of the chair with open hand when issuing instructions.

A Defiant look:–

The Leo looks at competitors defiantly and with swearing gaze. He walks quickly. He usually sits up right and will back in his chair his feet firmly planted on the floor. He eats that is he takes his meal within few minutes. He takes sleep soundly but he will not awake in early morning.

लग्नका अधिपति तृतीय स्थान में है। लग्नेशो तृतिये षष्ठ सिंह तुल्य पराक्रमी। सर्व संपत्युतो मानी द्विभार्यो मतिमान सुखी॥ जब की

लग्नेश तृतिय या षष्ठस्थानमें हो तो वह पराक्रमी सब प्रकारकी संपत्ती मान होता है। मानीव बुद्धिमान होता है। लेकीन एक बात हो सकती है कि वह द्वितीय विवाह करले, लग्नमें सिंह राशिका शनि है।

Saturn in Leo at your birth will help you in life giving you power, authority, or responsibility and in some measure you will stand out side the crowd. This Saturn denotes that your birth is not fortunate so far as your wordly prosperity is concerned as it indicates that the environment into which you were born was not the most favourable for progress or prosperity. You will have to suffer from many obstacles to contend with and your success depends more upon your own efforts than upon any help from outside. Your goal eventually must be chastity and justice: the more you cultivate moral virtues the nearer will you approach the true Saturnine qualities Meditation, Contemplation, Truth, Justice Equality.

धनस्थान

इस स्थानमें कन्या राशि उदित है। अधिपति बुध तृतीय स्थानमें है। "धनेशे तृतिये तुर्ये विक्रमी मतिमान गुणी॥ जब धनेश तृतीयस्थानमें होतो पराक्रमी होता है। बुद्धिमान और गुणवान होता हैं। इस स्थानमें मंगल है। यह मंगल, मंगल ही करता है। खाने पीने को कमती नहीं करता। बादशाही स्वाबमें रखता है और पितृधनको देता है। फिर अपने कमाईका धन उसमें न पड़ेगा। स्वार्जीत धन ४८ उमरसे देता है। अपने कमाईसे अपना घरका खर्चा चले। संग्रहकी वृत्ति नहीं रखता।

यह ग्रह इस स्थानमें रहनेके कारण बड़ा धैर्यशाली, अपना जीवित वित्तसे पर्वाह न करने वाला। ऐष आराममें जन्म लेकर शरीरपर आसक्ती न रखनेवाला, अपने खासगी जीवनको महत्व न देते हुये सारे संसारकी चिंता करने वाला। ऐसे पुरुषको मंगल बनाता है।

तृतीय स्थान

इस स्थानमें तुला राशि उदित है। इसका अधिपति शुक्र इसी स्थानमें है। इसका फल यह है की शुक्र तुला स्वराशिमें है। सहजगते सहजपतौ नृपमंत्रि सौहृदेऽतिनिपुणश्च। गुरुपुजन निरतो वै नृपतो लाभं परं कुरुते॥ जब कि तृतिय स्थानका अधिपती तृतिय स्थानमें हो तो वह राजमंत्री, मित्र बहुत सरकारसे लाभ उठाना, अपने कार्यमें निपुण होकर अपने गुरुजनको मानता है। देखिये कि महात्माजी पर कितना प्रेम था। इस स्थानमें रवि बुध शुक्र हर्शल ये चार ग्रह हैं। रवि इस स्थानमें रहनेसे भाई लोगोंका सौख्य नहीं मिलता यह तूल राशि रविकी नीच राशि है। रवि नीच राशिमें बहुत अच्छा फल देता है। पितृसौख्य बहुत काल तक मिलकर पिताके साथ मिलजुलके चलते हैं और कायदे आझम बनता है।

इस स्थान पर बुध रहनेके कारण इनके हाथसे लिखाण बहुत अच्छा उतरता है। देख लिजीये कि नेहरूजीने अपने लड़कीको लिखा हुआ पत्रव्यवहार कितना सुंदर है। इस स्थानमें स्वराशिका शुक्र है। पत्नीको बहुत मानते हैं कि यह देवी है। स्त्रीसुख जादा नहीं देता (देखिये सुभाषके कुंडली विवेचनमें)।

चतुर्थ स्थान

इस स्थानमें वृश्चिक राशि उदित है और अधिपति मंगल धन स्थानमें है। इस योगका फल Family में मेंबर्स बहुत कम रखता

है। सर्व संपद्युतो मानी साहसी कु—सुखान्विता: । पितृभक्ती धनाश्रय: शुभ युत: श्रुतिशास्त्रविशारद: ॥ पित्रार्जित धन सब मिलता है। स्वभाव बड़ा तेज रखता है और साहसी होता है। कु—कुछ स्थावरादि प्राप्ति होती है और पिता पर प्रेम करते हैं कुछ शास्त्र Science जानते हैं। अंतकाल याने बुढापेका काल बहुत अच्छा जाता है। In oldage मान सन्मान ज़ादा होता रहेगा। The end of the life will be the Sunny and most glorius.

पंचम स्थान

इस स्थानमें धनुराशि उदित है। इस राशिका अधिपति गुरु पंचम स्थानमें है। सुतेश: पंचमें यस्य तस्य पुत्रो न जीवति। क्षणिक: क्रूर भाषीच धार्मिको मतिमान भवेत ॥ जब पंचमेश पंचम स्थानमें रहता है तब संतती जीवित नहीं रहती। प्रसंगवशात थोड़ासा कठोर बोलनेवाला, अपने धर्म पर श्रद्धा रखने वाला और बुद्धिमान होता है। इस स्थानमें गुरु धनुराशीमें है। धनु राशीका वर्णन नेताजीके कुंडलीमें देखना ऐसे राशीमें गुरु Law का शिक्षण पूरा कराता है। जिस तरहका शिक्षण लिया उसीका फल अंततक नहीं मिलता। कन्या संतती देता है पुत्र संतती नहीं। आज हिंदुस्थानकी प्रजा इनको पिता मानती है। विश्व कुटुंबको पालनेवाला हो तो प्रजाको पुत्रवत् मानता है।

षष्ठ स्थान

इस स्थानमें मकर राशि उदित है और अधिपति शनि लग्नमें बैठा है। षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्नेवा पशुमान भवेत। धनवान गुणवान मानी साहसी पुत्रवर्जित: ॥ जब षष्ठेश लग्नमें हो तो धनवान, गुणवान, मानी और साहसी परंतु पुत्रसे वर्जित होता है। यह षष्ठेश शनि होनेके कारण

प्रबल शत्रूसे लढ़ना पड़ता है और उसमें यश मिलता है। इसीका फलस्वरूप आज तक ब्रिटिश गव्हर्नमेंटके साथ लड़े और स्वराज्य प्राप्त हुआ। यह शनि तन दुरुस्ती अच्छी नहीं रखता। मेंदूकी बिमारियां होना संभव है परंतु आयु अच्छी देता है।

सप्तम स्थान

इस स्थानमें कुंभ राशि उदित है। अधिपति शनि लग्नमें है। जब सप्तम स्थानका अधिपति लग्नमें होतो पत्नी अपने पती पर प्रेम बहुत करती और पतीको देव मानती है। पतिकी आज्ञा पालन करनेवाली, अपने घर कारोबारमें दक्ष और सब लोगोंके साथ अच्छे तरहसे बर्ताव करनेवाली होती है। लेकिन स्व. श्रीमती कमला देवीजीने अपने पति को भारतवर्षके पंत प्रधान होते हुए देखनेका भाग्य नहीं था। आपकी पत्नीका स्वभाव Saturn governing the seventh house denotes should marriage takes place however it promises a faithful and steady partner one who is just though rather grave and serious very industrious, persevering, careful, thrifty and economical. It is not a very favourable testimony for prosperity but it denotes a faithfulness in the marriage state although care should be taken not to allow coldness to spring up between you at any time for your partner will not be over demonstrative in affection and will prefer action to speech and loving deeds in preference to the use of many words of endearment.

लग्नमें सप्तमेश शनि बैठा है आप पर शनिका अमल है। शनि वृद्धापकालमें बहुत अच्छा फल देता है। यह शनि सिंह राजनैतिक राशिमें रहनेके कारण Those born under the influnce of Saturn you will find the best out let for their perticular talents in legal works philosophy. With suitable training they exel as barristers and Judges, and make successful ambassdors and diplomats. The ministry is a suitable career for them.

मृत्युस्थान

इस स्थानमें मीन राशि उदित है, अधिपति गुरु पंचम स्थानमें है। ये योग यह बताता है की आपकी आयुर्मर्यादा कमसे कम ६५ और ज्यादासे ज्यादा ७० वर्षकी है। यदि भगवान रामजी की कृपा हो तो ७५ वर्षकी आयु मिलेगी। मेरी समजमें ७५ वर्ष तक आप जीओगे। आपकी मृत्यु अच्छी होगी। सावधान रहना कि कहीं आपपर गोला बारी न हो क्योंकि आपके कुंडलीमें मंगलके पीछे शनि है, लेकीन एक बात सत्य है कि आपकी मृत्यु सामान्य आदमियोंके तरह न होगी।

भाग्यस्थान

इस स्थानमें मेष राशि उदित है। अधिपति मंगल धनस्थानमें है आपका भाग्योदय बचपनसे ही है लेकिन आपका भाग्य मेरे समज में श्रीमती कमला देवीजीके मृत्युके पश्चात् हुआ है और वह अंत तक रहेगा।

दशमस्थान

इस स्थानमें वृषभराशि उदित है। अधिपति शुक्र तृतिय स्थानमें है। धने मदेच सहजे कर्मेशो यदि संस्थितः। मनस्वी गुणवान कामी

सत्य धर्म समन्वितः ॥ जब दशम स्थानका अधिपति हो तो बहुत गुणवान होता है। सत्य धर्मका पालन करनेवाला होता है। इस स्थानमें नेपच्यून है। ये यह बताता है कि कॉलेजमें जिस तरह की शिक्षा प्राप्त करली है उस विद्या पर आजीवन नहीं चलने देता और दुसरा कुछ जीवनका मार्ग बताता है। यह आयुष्यमें कष्ट बहुत कर मान सन्मान देता है। जनता प्रेम करती है। और लोकाग्रणी बनते हैं। आयुके अंततक मान सन्मान बढते जाता है।

लाभस्थान

इस स्थानमें मिथुन राशि उदित है। अधिपति बुध तृतीय स्थानमें है। कुशलः सर्व कार्येषु सहज वत्सल एव नरः सदा। सहजगे भव भावपतौ शुचिः स्वजन मित्र जनानतिलाभदः॥ सब कार्य करनेमें कुशल, अन्य लोगोंपर अपने लडकेके समान प्रेम करना। शुचिता आचणशील और सब लोगोंसे फायदा मिलता है, यह योग अंतिम अधिकार देता है। परदेशमें रहना पड़ता है। निर्वासित होकर कष्ट उठाना लगता है। मृत्युके समय लोकसेवक बने रहना यह वासना रहेगी।

व्ययस्थान

इस स्थानमें कर्क राशि उदित है। अधिपति चंद्र व्ययस्थानमें स्वराशिमें है। यह योग पुत्र संतानको धोका देता है, बहुत बुद्धिमान होता है। स्थिर कार्य, करनेवाला विभूतियुक्त, दीर्घायू होता है। यह चंद्र कष्ट देता है, इसका अनुभव जेल यात्रा करनी पड़ी कुछ काल तक निर्वासित होना पड़ा। इसका परिणाम यह हुआ की आज भारतके पंत प्रधान होकर हमारे सामने खड़े हैं। यह बड़े सौभाग्य की बात है। कि आपके शरीरमें ईश्वरांश जादा होनेसे महात्माजी की संगती बहुत कालतक मिली।

योग विचार

पंडितजीके कुंडलीमें कुछ ग्रह योग बहुत अच्छे हैं

१ ला योग—दशम स्थानमें नेपच्यून, लाभस्थानमें राहू, व्यय-स्थानमें चंद्रमा, लग्नमें शनि, धनस्थानमें मंगळ, तृतिय स्थानमें रवि शुक्र और बुध। इस योगका नाम छत्र योग होता है लेकिन सप्तम स्थानमें ग्रह नहीं हैं। ये योग यह बताता है की पूर्व जन्ममें योगी थे उस जन्ममें योग भ्रष्ट हुये थे। भगवत् गीतामें कहा है "शुचीनाम श्रीमतां गेहे योग भ्रष्टोऽभिजायते" इस नियमानुसार पंडितजीका जन्म। श्रीमान घरमें हुआ और इस योगका फल पूर्वायुष्यमें कष्ट, उत्तर आयुष्य में सुखी, अधिकार भोगना, लोकसेवक बनना, राष्ट्रके नेता बनना यह फल हैं।

दुसरा योग—मंगळ के पीछे शनि इसका फल नेताजीके कुंडली में शनि मंगळके प्रतियोगका फल दिया है वही फल यहां लगता है। इधर एक आशंका उत्पन्न होती है कि महात्माजीके अनुसार इनका मृत्यु तो न हो can he be assacinated like Mahatma-ji? I have much doubt about it! यह अघोर घटना सन १९५२ साल आखीर तक होना ज्यादा संभवनीय है।

तीसरा योग—गुरु राहूका प्रतियोग पंचम और एकादशमें हुआ है। इस योगका प्राचीन अर्वाचीन ज्योतिषग्रंथमें अच्छा फल नहीं दिया है। मैंने इसका फल मेरे ग्रंथमें यह दिया है कि "जिसके कुंडलीमें यह प्रतियोग या युती है। वह स्वयम शिक्षण लेता है और आगे आता है याने लोगोंमें नाम बहुत, या लोगोंका नेता होता है। लाखों लोग इनके अनुयायी होते हैं परंतु पुत्र संतती नहीं होती हुई तो भी

आगे नहीं चमकती। ये लोग सामाजिक या राजकीय क्रान्तिके लिये पैदा होते हैं और बड़े महात्मा होने लायख होते हैं।

इसका एक उदाहरण आपके सामने रखते हैं। एक बड़ा महात्मा योगीश्वर एक बड़े बट वृक्षके नीचे बैठा है उसके मस्तकपर पांच मुखवाला सर्प डुल रहा है। हजारों लोग पैरपर शीस नमा रहे ह; सामने आध्यात्मिक शिष्य बैठे हैं।" मेरे सामने इसका एक व्हीजन vision आया वह यह है एक बड़ी भारी भयंकर तेजस्वी आँख है। वह इतनी तेजस्वी है कि आप देख नहीं सकते। उस तेजमेंसे बहुत सुंदर प्रकाश फैलकर बहुत दूर तक जारहा है। उस प्रकाशमें लाखों लोग चूपचाप चले जा रहे हैं।" इस दृश्यका अनुभव हम कर रहे हैं और इतना सच्चा हो रहा है कि देखिये पंडितजीके एक शब्दके अनुसार हिंदमेंके कोट्यवधी जनता झुल रही है और चुपचाप चल रही है।

इस योगका एक फल मिलना जरूर है वह फल अध्यात्म ज्ञान ये भगवान महावीरजीके उपासक हैं। इनके मस्तक पर सद्गुरुकी कृपा वरद्हस्त पड़नेका काल डिसेंबर १९४९ में है।

'उपर गुरु राहूका जो Vision दे दिया है, वह मैंने सन १९४२ में "ग्रहण विचार" करके राहूपर स्वतंत्र ग्रंथ लिखा है उसमें आपको पढ़नेको मिलेगा'।

महादशा विचार

चालू महादशा विशोत्तरी मानसे मंगल की दशा चल रही है। यह दशा ता. २५-११-१९५१ तक रहेगी। कुंडलीमें धनस्थानमें मंगल है। यह उच्च श्रेणीका अधिकार मिल जायगा। मानसिक कष्ट उठाना

पड़ेगा, शारीरिक कष्ट भी उठाना पड़ेगा। (कोई बम फेकेगा या दनादन गोली चलायेगा या अक्सिडेंट होगा)। सारे संसारमें हिंदुस्थानका नाम गूंजता रहेगा, ऐसी करामत आपके हाथसे होगी, इससे आपका नाम दुनियामें बहुत आदरसे लेते रहेंगे। आप पर भगवान की कृपा होनेवाली है। इसमें World tour होगा।

राहुकी महादशा

ता. २५-११-१९५१ से ता-२५-११-१९६९ तक इस महादशा में सब तरह उच्च श्रेणीका अधिकार भोगने और राष्ट्रकी सुरक्षा रखकर राष्ट्रका नाम सब दुनियामें हो जायगा। यह देखकर आपको खुशी होगी की मैं जिस वासना पूर्ण करने लिये पैदा हुआ वह कार्य पूर्ण हुआ। इसीसे आपके मनमें मृत्युके समय ऐहिक वासना तनीक भी नहीं रहेगी और मृत्यु अती शांततासे होगी।

यह ऐसा कैसा हुआ

आप पूर्व जन्ममें नाथ पंथिय गुंसाई थे। पूर्व जन्ममें उच्च श्रेणीका अधिकार भोगनेकी वासना उत्पन्न होगयी और मृत्युके समय यह वासना प्रबल रही। इस वासना प्रभावसे आप जन्म लेकर आये थे परन्तु इसमें एक हुआ कि आप सिंह लग्नपर पैदा हुए। इस लग्नके लोग कभी भी सच्चा संन्यासी या महान महात्मा नहीं होते, क्योंकि यह सिंह राशी Kingly sign रहनेसे नहीं होते। आपका पूर्व जन्ममें नैष्ठिक ब्रह्मचारी रहकर नाथ पंथीय गुँसाई होकर सच्चे महात्माका जन्म लेकर आप धार्मिक और पारमार्थिक कार्यमें संशोधन करके पंथोपंथके झगड़े मिटानेके लिये आप पैदा होंगे, इसलिये इस जन्ममें मृत्युके समयमें यही वासना रहेगी। इधर एक बात स्पष्ट करना जरूर है कि आप और

सुभाष दोनोंके शरीरमें भिन्नता मालूम होती है। फिर दोनोंका आत्मा और जीवात्मा एकही है। आपने सच्चे शक्ती को खो दिया है जब वह शक्तीसे आप पूर्णतया नहीं मिलते तबतक आप पूर्णावस्थाको नहीं पहुँच सकते, जब वह शक्ति आपको मिलेगी तब आप पूर्णावस्थामें आजावोगे। आप दोनों जोडीसे कार्य करते रहोगे तब हिन्दुस्थान आप पर निर्भर रहेगा।

॥ इति शिवम् ॥

एक–क्ष

यह एक मेरे पर बहुत प्रेम करने वाले बोहरा ज्ञातीके गुरु (Priest) हैं। जन्म तारीख २२–१–१८९१ दोपहरके २ बजके ३५ मिनिट P. M. जन्मेष्ट घडी १७–५८ पल अक्षांश २२–५० रेखांश ७३.

जन्म कुण्डली

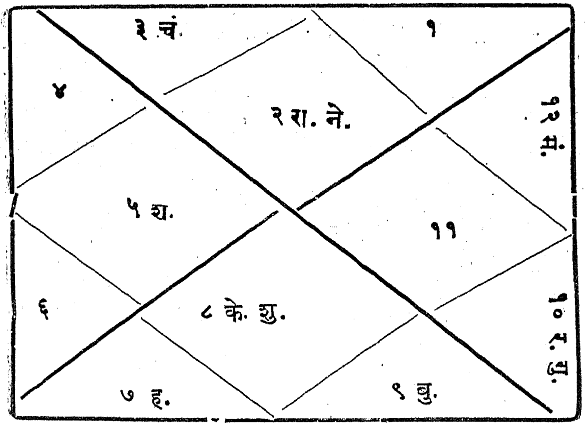

आपका वृषभ लग्न होनेसे और लग्नमें राहू नेपच्यून रहनेसे स्वभाव बहुत शान्त, समाधानी और सावधानीसे चलनेवाले, ईश्वर निष्ठ, Very secretive and reserved. ये देव देवता, गुरु और गुरु जनोंपर भक्ति रखते हैं। और कोई भी कार्य स्थिर बुद्धिसे करते हैं। विषयोपभोगकी ओर इनकी प्रवृत्ति कम होती है। ये साहसी, निर्लोभी मृदुभाषी, त्यागी, क्षमाशील, विश्वसनीय और आस्तिक होते हैं। संसार में क्लेश सहन करते हैं आप्तेष्ट जनोंपर प्रेम करते हैं और लोग भी इन्हें खूब चाहते हैं। मित्र परिवार काफी बड़ा रहता है।

आप हिंदू तत्वज्ञानसे अच्छे परिचित हैं और ज्योतिष भी जानते हैं।

वृषभ लग्नके लोग उपासना और जपजाप्यमें बहुतसी दिलचस्पी लेते हैं। इस नियमानुसार इनका उपासना और जपजाप्य चल रहा है। सितंबर अक्तूबर सन १९५० सालमें आपको उपासनामें सफलता मिलेगी और साक्षातकार होगा।

सप्तम स्थानमें शुक्र वृश्चिक राशिका होनेसे स्त्री सौख्य पूरा नहीं मिला।

अष्टम स्थानमें धनु यह ज्ञानी राशिका बुध होनेसे और चतुर्थ स्थानमें सिंह राशिका शनि होनेसे मृत्यु कौनसे दिन और कौनसे समय होगा यह सब पूर्व सूचित होकर या मृत्युकी टाईम पहले समझकर बहुत शांततासे समाधानीसे वासना रहित होकर हँसते खेलते मृत्यु होगा।

गुरुस्थानमें नीच गुरु रविसह बैठा है। यह गुरु अच्छा फल देता है यह गुरु सन १९५० सालके फेब्रुवारी या मार्च महिनेमें अध्यात्मिक गुरु मिल जायगा यह दर्शाता है।

समाप्त

पृष्ठ ५६ पर पढ़ना

महाब्रह्म
|
स्फुरना + डुलना = आकाश
|
आकाश + अत्यंत वेगसे डुलना = हवा
|
हवा + आकाश = अत्यंत वेगसे चलना + नाद और बिंदु तेजका निर्माण होना CosmicRays.
|
बिन्दू या तेज + हवा = आर्द्रता (यह पानी नहीं है । कला)
|
आर्द्रता + बिन्दु = अणुरेणू.

पृष्ठ ५७ परसे २० वे पंक्तिसे आगे पढ़ना.

प्राचीन वेदान्तके पंचिकरणमें मनको दशेन्द्रियमें गणना की है। इस मतसे मैं सहमत नहीं हूँ। सबब यह है कि ये दशेन्द्रिय दृश्य हैं। उंगली रखकर बता सकते हैं। उदाहरणार्थ= रसना क्या है और कहाँ है इसको तुम अपनी जीभ पर उंगली रखकर बता सकते हो। इस प्रकारसे तुम मन कहां है और किस प्रकारका है और क्या है यह दृश्यरीतीसे बतानेमें असमर्थ हो। इसीलिये मनको दशेन्द्रियमें गणना करना यह मैं अनुचित समझता हूँ। इसलिये मैं मनको दशेन्द्रियमेंसे निकालकर अलग रख दिया है। आगे दिया हुआ कोष्टक देखिये।

परब्रह्म
|
प्रकृति
|
महत्
|
चित्
|
अहंकार
|
मन

दृश्य पंचमहाभूत
आकाश
|
वायु
|
अग्नी
|
जल
|
पृथ्वी
|
शरीर
पंचज्ञानेन्द्रिय | पंचकर्मेन्द्रिय

पृष्ठ ८९ परसे आगे पढ़ना

यह द्वैत वाद है। इसी द्वैतवादमें मुझे पूरा अद्वैत सिद्ध करना है। हम पहिले बता चुके हैं कि लेन्टर्न सर्व प्रथम है। लेन्टर्न की उत्पत्ति किस रीतिसे हुई यह देखना जरूरी है। लेन्टर्न टिनसे बनता है। टिन यह धातु जमीनसे मिलती है। जब लेन्टर्न तोड़ टुकड़े बनाकर उसको बारीक पिसीये। पिसते पिसते इतना पिसीये कि उसका एटम Atom मे रूपांतर हो। टिनके परमाणू पिसनेसे फिर बिंदू निर्माण होते हैं। बिंदु परमात्माका होता है। यही अद्वैत है।

पृष्ठ १९२ पर पंक्ती २३

अनाहत ध्वनि—अनाहत चक्रमेंसे सुननेको आता है।

आहत ध्वनि—यह ध्वनि मणिपूरसे निकलता है।

पृ. २०५ पर पंक्ती १६ से आगे पढ़िये

"सन्ध्याके बाद भगवान् श्री रामकृष्ण भक्तोंके साथ बैठे हुए हैं। योगके सम्बन्धमें और षटचक्रोंके सम्बन्धमें बातचीत हो रही है। ये सब बातें शिव संहितामें हैं।" मूलाधार पद्ममें कुण्डालिनी शक्ति है। वह पद्म चतुर्दल हैं जो आद्याशक्ति हैं। वही कुण्डालिनीके रूपमें सबके देहमें विराजमान है- जैसा सोता हुआ साँप कुण्डलाकार पड़ा रहता है। (मणि से) भक्तियोगसे कुल-कुण्डलिनी शीघ्र जाग्रत होती है। बिना इसके जाग्रत हुए ईश्वर के दर्शन नहीं होते।

जागो माँ कुल—कुण्डलिनी।
तुँ नित्यानन्द—स्वरूपिणि।
प्रसुप्त—भुजगाकारा आधार-पद्म-वासिनी

श्री रामकृष्ण वचनामृत पृ. ६०८

शुद्धीपत्र

पृष्ठ	पंक्ती	अशुद्ध	शुद्ध
४४	२३	बुरकनेकी क्रिया स्वयं जारी हो जाती है।	फफदता है
६३	२२	गुंडोंमें.	गुंडोंके
२२१	२२	एक सच्च शाक्त उपासक नेताजा	एक सच्चे शाक्ति उपासक नेताजी

GLOSSARY

गंगानदी या सुधासिंधु—Cerebrospinal Fluid

सहस्रारचक्र—Choroid plexus सुरविटप या बटवृक्ष

सहस्र कमल या दल—Corona Radiata दिव्य मंच

अनाहत ध्वनि—Celestial or Divine Sound which arose from heart

तेज–Cosmic Rays

आकाश—Vacuum, Vacuity, Empty space
हवा—A vital air
बिन्दु—a Small particle of Cosmic Rays
आर्द्रता—Moisture
अणुरेणु—Atoms
} अदृश्य

आकाश—Sky
वायु—Wind
अग्नी—Fire
जल—Water
पृथ्वी—Solid Substance or matter
} दृश्य

कुंडलिनी या चित्रिणी नाडी-Filum Terminal

तृतीय नेत्र—Pineal gland

मेरुदण्ड—Spinal Cord

मूलाधार—Pelvic Plexus

स्वाधिष्ठान—Hypogastric Plexus

मणिपूर—Solar Plexus

अनाहत—Cardiac Plexus

विशुद्ध—Carotid Plexus

आज्ञा—Pineal Gland

विवर—Canalis Centrlis

स्वयंभु लिंग—Glomus Coccygeal Body. Gland of Lashka

असत—Non—Entity. Non Existence.महाब्रम्ह spirit.

सत्—सृष्टी Matter

ब्रम्हद्वार—Sacral Canal

आधारग्रंथ

१ आनंद लहरी
२ ऋग्वेद (हिंदी भाषाटीका)
३ कंकाल मालिनी
४ गोरक्ष पद्धति
५ गोरख संहिता
६ घेरण्ड संहिता
७ तंत्रसार
८ त्रिशिख ब्राम्हण उपनिषद्
९ देवी पंचस्तवी
१० देवी तंत्र
११ ध्यान बिंदु उपनिषद्
१२ ध्यान योग प्रकाश (स्वामी लक्ष्मणानंदजी आर्य समाजी कृत)
१३ नासदीय सूक्त (पूनाके आहिताग्नि राजवाडे कृत मराठी)
१४ पंचदशी
१५ पंचिकरण और मूलस्तंभ (मराठी)
१६ पातन्जल योगदर्शन
१७ प्रपंचसार तंत्र
१८ भगवतगीता
१९ भैरवयामल
२० महायोग विज्ञान
२१ यजुर्वेद
२२ याज्ञवल्क्य संहिता
२३ योगांक (कल्याण मासिक)
२४ योग कल्पद्रुम
२५ योग कुंडल्योपनिषद
२६ योग चूडामणी उपनिषद
२७ योग तत्व प्रकाश
२८ योग तत्वामृत
२९ योग तारावली
३० योग बीज
३१ योग शिखोपनिषद
३२ योग सोपान (मराठी)
३३ रमल
३४ रुद्रयामल
३५ लघुस्तुती
३६ ललिता सहस्रनाम
३७ लक्ष्मीस्तुती
३८ लिंग पुराण
३९ वामकेश्वर तंत्र
४० विश्वसार तंत्र
४१ वेदान्त ग्रंथ (मराठी)
४२ शक्तिसंमोहन तंत्र
४३ शिवसंहिता
४४ षड्चक्र निरूपण और पादुकापंचक
४५ सूर्यचक्र (शिवचन्द्र भरतिया इन्दोर विरचित)
४६ हठयोग प्रदीपिका
४७ हंसोपनिषद
४८ ज्ञानयोग (हिंदी गोरखपूर प्रेस)
४९ ज्ञानार्णव तंत्र
५० ज्ञानेश्वरी } मराठी
५१ दासबोध } मराठी
५२ मनाचे श्लोक } मराठी

हिंदी

५३ आझाद हिंद फौज

ENGLISH BOOKS

1 Gray's Anatomy
2 American Anatomy.
3 German Anatomy.
4 Dissectional Anatomy by Late Dr. Cunningham.
5 Pocket Diary of Anatomy.
6 Anatomy of Brain and Cord and Autonomic System: Practice of Medicines and Surgery of America.
7 Anatomy and Physiology by-Jessie Farring.
8 Anatomy of the Brain and Spinal cord by-J. Ryland Whiteker
9 Halliburton's Physiology.
10 The Serpent Power
11 Esoteric Astrology. } Alan Leo and
12 Planetery Influences. } Bassle Leo.
13 Key to your own Nativity.
14 The Element of Esoteric Astrology by Dr. A. H. Thierens M. A. Ph.D.
15 Esoteric Astrology (The key of science of life) by Alvidas.
16 The Path way of the sole by Henery. J. Van Stone.
17 Twelve Great Gates by Elinor Kirk.
18 The Degrees of the Zodiac Symbolised.
19 Yoga Kundalini by Swami Shiwanand Hardwar.
20 Mysterious Kundalini By Late Dr. Rele Bombay.

21	The Chakras.	No Permission Was given by The Theosophical Society of Benares for the use of these books.
22	Lotus Fire	
23	Secret Doctrine	

I am highly and greatly indebted to the authors of the books mentioned above for the help which I received from these books without which it would not have been so easy for me to finish the work undertaken by me.

H. N. K.

ना ग पू र प्र का श न,

सी ता ब र्डी, ना ग पु र

★

प्रकाशित मराठी वाङ्मय

१	माझें कादंबरी लेखन	१॥
२	वीणा	३
३	लढवय्ये	३
४	शककर्ता शालिवाहन	२॥
५	परामर्श	३
६	प्रमद्वरा	२॥
७	द्राविडी प्राणायाम	२।
८	अमावास्या	२॥
९	कंगाल	२।
१०	अडेलतट्टू	३।
११	प्रत्यय	२॥
१२	पुन्हां एकदां	३।
१३	माझी शीला	१।
१४	मृगाचा पाऊस	२
१५	दोन घडीचा डाव	३।
१६	म्हणे लढाई संपली	१॥
१७	लांब लांब सांवल्या	२
१८	तेरी चूप मेरी चूप	२
१९	दोन प्रख्यात युद्धतंत्रें	२
२०	सन १८५७ चें स्वा. यु.	-॥-
२१	नवीं मूल्यें	३।
२२	सखी	२॥।
२३	सावलीच्या उन्हांत	३
२४	जीवनप्रवाह	२॥
२५	हंसदूत	२।
२६	मार्क्सवादी अभ्यासक्रम	१॥
२७	तिसरें राज्य	॥=
२८	इंदिरा	२॥।
२९	गोल देऊळ	३
३०	दूर कुठें तरी	२॥।

★

★ ★